प्रकाशक

श्रीदुलारेलाल

अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय

लखनऊ

अन्य प्राप्ति-स्थान—

१. भारती-भाषा-भवन, ३८१० चर्खेवालाँ, दिल्ली

२. राष्ट्रीय प्रकाशन-मंडल, मछुआ-टोली, पटना

३. प्रयाग-ग्रंथागार, ४०, कास्थवेट रोड, प्रयाग

नोट—इनके अलावा हमारी सब पुस्तकें हिंदुस्थान-भर के प्रधान बुकसेलरों के यहाँ मिलती हैं। जिन बुकसेलरों के यहाँ न मिलें, उनका नाम-पता हमें लिखें।

मुद्रक

श्रीदुलारेलाल

अध्यक्ष गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस

लखनऊ

'उन शहीदों की स्मृति में जो इस देश की
सीमा के भीतर और बाहर
देश की स्वतन्त्रता के लिये
हुतात्मा हुए गए।'

परिशिष्ट

१. देवकुमार शर्मा, देशभक्त—क्रांतिकारी, कांग्रेस-समाजवादी, कवि, अंजना का पति।
२. ले० शमशेरसिंह—ऑनरेरी मैजिस्ट्रेट सर फतेहसिंह का पुत्र, अमर का पति।
३. अमर—शमशेर की पत्नी, ४२ की नायिका।
४. अंजना—देशभक्त की पत्नी, राज् की मा।
५. निर्मला—देशभक्त की छोटी बहन, अमर की प्रमुख सहेली
६. सरदार प्रकाशसिंह—सफेदपोश, अमर के पिता (रायसाहब)।
७. सरदार तेजसिंह—गुड़गाँव के लंबरदार, नवधारा के पति।
८. मोहनलाल—निर्मला का प्रेमी, ४२ का शहीद।
९. छोटूलाल—नयनतारा का पिता, एक काश्तकार।
१०. इनायतुल्ला—थानेदार।
११. सर फतेहसिंह—ऑनरेरी मैजिस्ट्रेट।
१२. नवधारा—तेजसिंह की तीसरी पत्नी।
१३. नयनतारा—अमर की एक सहेली।
१४. स० सज्जनसिंह—पुलिस-इन्सपेक्टर।
१५. शिशिरकुमार दास—कांग्रेस-समाजवादी नेता, देव के गुरु, हेमलता के पति।
१६. स० हेमलता—शिशिर बाबू की पत्नी।
१७. रजनी—आजाद हिंद फौज की नर्स।
१८. केसर—सी० आई० डी० इन्सपेक्टर।

दो शब्द

भारत की सीमा के भीतर और बाहर, अहिंसा और हिंसा, दोनों का एक साथ प्रयोग करके हमने ब्रिटिश साम्राज्यशाही को यह दिखला दिया था कि कंकाल-शेष भारत की हड्डियों में अभी भी कितना पौरुष है, कितना सामर्थ्य है। भारत की सीमा के भीतर मिदनापुर, बलिया और सतारा हमारी उसी रक्त-हीन क्रांति के मूक प्रतीक हैं, और तब सीमा के बाहर इम्फाल और कोहिमा पर एक दिन हमारे तिरंगे को आजाद हिंद फौज ने हँसते-हँसते फहरा दिया था, और रंगून के मकबरे में बूढ़े सम्राट् बहादुरशाह की रूह ने करवटें बदली थीं। कौन कह सकता है कि वह क्रांति असफल गई। 'मरघट' में उसी असफल कही जानेवाली सफल क्रांति का आग्नेय चित्रण है। इस क्रांति के बाद हमारा देश भी तो 'मरघट' में परिणत होकर रह गया था।

भारत की सीमा के भीतर और बाहर के स्वातंत्र्य-संग्राम में जिन शहीदों ने अपना मूक बलिदान किया, संभवतः देश के इतिहास में आगे चलकर उनका कोई नाम भी न ले, परंतु समकालीन साहित्यकार अपने इस कर्तव्य की उपेक्षा नहीं कर सकता था। मैंने 'मरघट' द्वारा अपने उसी चिर-अपेक्षित कर्तव्य के निबाह की यत्किंचित् चेष्टा की है।

नाच-घर, कानपुर
२६ सितंबर, १९४९

अज्ञात एम्० ए०

और कंधो पर से उड़ती हुई नीले रग की पारदर्शक चुन्नी ओढे, जिसमे से झलकती हुई उसकी लबी, मोटी वेणी का ऊपरी भाग बड़ा भला लग रहा है। अमर जब जमीन पर अपने बाएँ पैर की ठोकर मारकर झूले पर पेंगें लेती है, तो ऐसा जान पड़ता है कि जैसे नदन की कोई अप्सरा आकाश में उड रही है। पूर्व की ओर से काली-काली घटाएँ उमड़ती हुई चली आ रही हैं, और बरसाती हवा अमर के चाँद-से चेहरे को चूम-चूमकर उसे चचल और उद्विग्न बना रही है। उसके पति पजाब की एक रेजिमेंट में लेफ्टिनेंट थे—नाम था शमशेर-सिंह। शमशेरसिंह लाहौर के अवकाश-प्राप्त ऑनरेरी मैजिस्ट्रेट सर फतेहसिंह का कनिष्ठ पुत्र था, और बी० ए० करने के एक साल बाद ही फ़ौज मे भर्ती हो गया था। देश के जनमत और विरोध की अवहेलना करके विदेशी भारत-सरकार ने धुरी राष्ट्रों के विरुद्ध युद्ध-घोषणा काफी अरसे पहले कर दी थी। जापानी हिंदचीन, स्याम, स्याम से मलाया और मलाया से सिंगापुर, रगून और माडले तक विजय करते बढ आए थे। ले० शमशेरसिंह अपनी कपनी लेकर पजाब-रेजिमेंट के साथ माडले के मोर्चे पर भेज दिया गया था। लड़ाई में घायल होकर वह जापानियों के हाथ पड़ गया।

भारतीय सेना के अग्रगामी सदर मुकाम को ले० शमशेरसिंह के घायल होने तथा जापानियों के कैदी हो जाने की ख़बर मिली, और उसने भारत-सरकार के युद्ध-विभाग को इसकी सूचना भेज दी। ले० शमशेरसिंह के घर उसके कैद हो जाने की खबर पहुँचा दी गई। आज लाहौर से अमर को अपने ससुर का सदेश मिला था कि उसके पति घायल हो गए हैं, और अब इस समय जापानियों के अतिथि हैं। अमर की मा बसत ने अमर को उसके ससुर की चिट्ठी दे दी थी। उस समय उसकी मा का चेहरा उदास था, और अमर का चेहरा सन्न होकर रह गया था। अमर चिट्ठी अपनी जैकेट में दबा करके, सामने

मोर्चा लेगी। देखो, अब कब मिलना होता है। प्यारी! भूल तो नहीं जाओगी?"

तो उसने उनसे कहा था—"मेरे प्यारे राजा! तुम्हें ईश्वर युग-युग बनाए रक्खे। तुम जाओ, क्योंकि फौजी जीवन बहुत कठोर है। फ़ौजी क़ानून तुम्हें बाँधे हुए है। तुम्हें जाना ही है। लेकिन, जाने इस बार जी क्यों धक्-धक् कर रहा है। तुम भी इस अपनी चरणों की दासी को भूल न जाना। पत्र देते रहना।"

और तब उन्होंने मेरे गले से कहा था—"तुम भी कितनी अच्छी हो मेरी रानी!' और बाँहों में कसके बाँधकर उसके गाल चुम्बनों से भर दिए थे।

अमर की आँखें भीग उठी थीं।.. और, आज भी अमर की बर-र्ती आँखें उमड़ी पड़ रही थीं। उसका तन-मन सब कुछ अशात । विरह-वेदना और पति के जीवन की आशका, दोनों मिलकर के अंतस्तल को मथे डाल रही थीं।

अमर अपने उद्वेग में कुछ-कुछ भूल-सी पहले ही रही थी, परतु सहसा सामने की नीम पर से एक मोर कूक उठा, और उसने एक लबी साँस छोड़कर आकाश की ओर निगाह फेंकी। पूर्व की ओर से काली-काली बदली उमड़ती हुई चली आ रही थी। हवा के शीतल झोंकों से मदहोश होकर उसकी पेंगे बढ चलीं। उसका हृदय, कठ और उसकी आँखें भर रही थीं, परतु फिर भी इतना उद्वेग, इतनी आकुलता से अपने को उसे सँभालना ही होगा। भगवान् सब मगल करेंगे। जब तक उसकी छाती में धड़कन है, तब तक वह समझेगी कि वह जहाँ कहीं भी हों, सकुशल होंगे। क्या जाने यह ख़बर ही झूठ निकले।. अमर के मन का उद्वेग शात हुआ। वह गाने लगी वही गीत, जिसका भाव प्रारभ मे ही दिया गया है। वह बार-बार उसकी अतरा की कड़ियाँ गाकर टेक की एक ही पक्ति

हुई छूट पड़ी। निर्मला ने झट से पत्र खोलकर उसे जोर से पढ़ना शुरू किया—सौभाग्यवती बहू। आशीर्वाद। .... कि अमर ने आगे बढ़कर पत्र छीनने के लिये हाथ मारा। निर्मला पत्र एक हाथ में समेटकर भाग खड़ी हुई।

"किसी की चिट्ठी नहीं पढ़नी चाहिए। निर्मला। दे दो।"

"अच्छा।" निर्मला ने कुछ दूर पर रुककर कहा—"लो, यहाँ तक आओ।"

अमर आगे बढ़ी। पास पहुँची ही थी कि निर्मला अँगूठा दिखाती हुई फिर भाग खड़ी हुई। अब की अमर भी पीछे भागी, तो फिर नयनतारा और नवधारा ताली पीट-पीटकर हँसने लगीं। निर्मला थोड़ा-सा चक्कर काटकर झूले की ओर लौट पड़ी। सुंदरी अमर थककर धीरे-धीरे चलने लगी।

नवधारा को अमर पर तरस आने लगा। निर्मला से बोली—"दे दो बेचारी को। दूसरे की चिट्ठी पढ़ना पाप है।" निर्मला चाहती, तो वह पत्र और आगे तक पढ़ लेती, परंतु उसने भी सोचा—किसी को परेशान न करना चाहिए। गंभीर होकर अमर की ओर पत्र बढ़ाती हुई बोली—"लो अच्छा।" अमर ने पत्र ले लिया। वह अब तक बिलकुल निकट आ गई थी। उसकी आँखों में जो उदासी छाई हुई थी, उसके गुलाबी चेहरे पर जैसा पीलापन आज छाया हुआ था, उसमें कुछ विशेषता थी, और अमर की तीनो सखियाँ उससे प्रभावित भी हुईं। निर्मला के मन में आया कि वह अमर को पत्र लौटाते वक्त यह वचन उससे ले लें कि वह खुद ही बता दे कि पत्र में क्या लिखा है। लेकिन अमर की मुखाकृति देखकर उसकी चुलबुलाहट शांत हो गई, और उसका यह वादा कराने का हौसला पस्त हो गया। नयनतारा भी फिजूल में अमर की आँखें मूँदकर और उसे इतनी परेशानी में डालकर अपने को अपराधिनी अनुभव कर रही थी।

मैने कहा—'अमराई की ओर।' तुम लोगों ने पूछा—'अमर बीबी को देखा था क्या?' मैंने कहा—'उन्हीं के यहाँ होकर आई हूँ। पता लगा कि अमराई की ओर गई हैं।' तुम लोगों ने कहा—'हम लोग भी अमराई चलेंगे।' मैंने कहा—'चलो।' फिर तुम लोगों ने इधर-उधर की गप छेड़ दी। मैं क्या बताती? फिर मैंने भी सोचा—शायद यह सब बात झूठ निकले। इतने में अमराई आ पहुँची। तुम लोग बेचारी को देखकर शरारत करने में ही जुट गईं।"

"शरारत में भाग तुमने भी तो लिया भाभी।" निर्मला ने यह कहकर जैसे अपने अपराध का कुछ भाग बँटा लेना चाहा।

"अच्छा, खैर।" अमर की ओर उन्मुख होकर नयनतारा ने अमर से पूछा—"क्यों? यह चिट्ठी सर साहब की ही थी क्या? घबराओ नहीं अमर रानी। भगवान् सब मंगल करेंगे।" पास जाकर अमर चिबुक पकड़कर उसने उसका मुख अपनी ओर किया, और उसकी नीर-भरी आँखों में अपनी आँखें डालकर बोली—"तुम रोती हो? छि.। कुँवर साहब की रानी को ऐसा शोभा नहीं देता।"

"मन को वश में करती हूँ, लेकिन धीरज नहीं बँधता, नयन-तारा?" अमर ने अपने साल में आँसू पोंछ डाले।

"बेचारी को साल-भर हो गया लाहौर से यहाँ आए। कुँवर साहब के चले जाने के बाद सर साहब बीबीजी को पीहर पहुँचा गए थे। लाहौर ही हो आओ, गुड़गाँव में अगर मन को शांति न मिलती हो।" नवधारा ने एक सुझाव रक्खा।

"लेकिन वहाँ भी किसके साथ हँसे-बोलेगी बेचारी। कुँवर साहब का क्या ठिकाना कि उनका कब तक अब लौटना हो।" निर्मला ने एक ठंडी साँस छोड़ी।

"जब तक उनका लौटना न हो, तब तक के लिये अपने वैयक्तिक

प्रेम का दान देश के उद्धार के लिये करो।" पीछे से क्रांतिकारी कवि 'देशभक्त' ने आकर निर्मला के प्रश्न का उत्तर निस्संकोच भाव से देने के अपराध में क्षमा माँगते हुए आगे कहा—'देश को अपने प्रत्येक स्त्री-पुरुष के बलिदान, त्याग, प्रेम और करुणा की आवश्यकता है। मुझे इस बात को सुनकर दुःख हुआ कि कुँवर साहब घायल होकर 'दुश्मनों' द्वारा पकड़ लिए गए हैं। वे लाहौर-विश्वविद्यालय में मुझसे दो साल आगे थे, परन्तु मुझसे दोस्ती होने के कारण और भी मैं उनके लिये चिंतित हूँ, परन्तु फौज में होते हुए भी उनमें देश के प्रति बड़ी भक्ति थी। वे अपने देश को आजाद देखना चाहते थे। बर्मा के एक मोर्चे पर से आए उनके एक पत्र में उन्होंने लिखा था—'मैं यथाशक्ति जापानियों को अपने देश—भारतवर्ष—को कुचलने से रोकूँगा।' लेकिन मेरा उनसे यहीं पर मतभेद है।"

कवि देवकुमार शर्मा 'देशभक्त' के पूर्वज १८५७ ई० में दिल्ली से भागकर दक्षिणी-पूर्वी पंजाब में—लाहौर से लगभग सौ मील की दूरी पर—एक गाँव में आकर बस गए थे। उस गाँव का नाम गुड़गाँव था। गुड़गाँव में ही देशभक्त की पैदाइश हुई थी। पिता को मरे दस-बारह साल हो गए थे। 'देशभक्त' की उम्र उस वक्त कोई चौदह-पंद्रह साल की थी। उद्योग, साहस और परिश्रम करके 'देशभक्त' ने मैट्रिक परीक्षा पास करके लाहौर-विश्वविद्यालय में नाम लिखा लिया। कविता करने की ओर रुचि पिता के स्वर्गवास होने के कुछ काल बाद ही हो चली। विश्वविद्यालय में पहुँचने पर उसका धीरे-धीरे विकास होने लगा। थर्ड इयर में पहुँचते-पहुँचते देशभक्त की अमृतसर के एक बैंक-मैनेजर की लड़की से शादी हो गई। पत्नी का नाम था अंजना—अंजना ब्राह्मण-परिवार में पैदा होकर भी कुछ साँवली थी, परन्तु नवयौवना अंजना की रूप-रेखा कुछ

ऐसी लावण्यमयी और आकर्षक थी कि जिस पर कवि का मुग्ध होना स्वाभाविक था।

गर्मी की छुट्टी थी, और देशभक्त अपनी पत्नी को विदा कराके लगभग दो-डेढ़ हफ्ते पूर्व गाँव वापस आए थे। उन्हें अपने बीच में सहसा पाकर नयनतारा अमर को छोड़कर किनारे हो रही, और यह समझकर कि देशभक्त ने उनकी बातें सुन ली हैं, सब शरमाई-सी एक दूसरे को परस्पर कनखियो से देखने लगी थीं। अपनी शरम को छिपाने के लिये फूट पड़नेवाली मुस्किराहट को वे अपने गुलाबी ओठो की कटोरियों में ही पी गईं। अमर पहले से ही उदास थी, और अभी भी गंभीर-सी बनी खड़ी थी। मन में लज्जा का अनुभव वह भी कर रही थी, परंतु देशभक्त का उद्बोधन सुनकर [illegible] हो चली थी। वह लाहौर-जैसे शहर की रहनेवाली तो न [illegible] फिर भी विवाह होने के पूर्व उसने पंजाब की हिंदी-भूषण-परीक्षा [illegible] कर ली थी। उसे पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ने का बड़ा चाव रहता [illegible], और हिंदी-साहित्य के साथ देश की राजनीति का भी कुछ ज्ञान उसे हो गया था। वह जानती थी कि कांग्रेस देश की राष्ट्रीय संस्था है, और वह जो कुछ कहती है, वह देश की आवाज होती है। यद्यपि देश की विदेशी सरकार ने देश की इच्छा के विरुद्ध धुरी राष्ट्रों से युद्ध मोल तो लिया है, फिर भी उसके युद्ध-प्रयत्नों में कांग्रेस इसलिये बाधा नहीं दे रही है कि वह नहीं चाहती कि रूस फ्रांस या बर्मा की तरह भारत की भी मिट्टी पलीद हो। पढ़े-लिखे तबके के लोग भी कांग्रेस की इस नीति का समर्थन करते हैं—फिर देव भैया ने जापानियों का विरोध करने से मतभेद की बात कैसे कही, यह उसकी समझ से बाहर की बात थी। फिर वह यह भी कैसे पसंद कर सकती थी कि वह अपने पति के कार्य को देश-सेवा और बलिदान का कार्य मानती हुई उसकी आलोचना या

निंदा सुने। उसने देशभक्त को रोककर कहा—"देव भैया! मैंने तो सुना है कि कांग्रेस तो जापानियों के भारत में घुस आने पर उनका विरोध अहिंसात्मक सत्याग्रह करके करने को तैयार है।"

"हाँ, मतभेदवाली बात तो मेरी भी समझ में नहीं आती। कांग्रेसवालों का तो इस देश में कोई विरोध नहीं करता ? देव भैया!" निर्मला ने भी अमर की बात पर सही देकर अपने बड़े भाई देवकुमार को हराना चाहा।

नवधारा गाँव के मुखिया सरदार तेजसिंह की तीसरी युवा पत्नी है, और वह सभी से बोलती-बतलाती और गाँव की भाभी है। वह भी एक फबती कसने का यह मौका हाथ से क्यों जाने देती। बोल उठी—"बात यह है कि जब तक लाला अपना कोई नया ऊँट न छोड़ें, तब तक यह कैसे मालूम हो कि हम भी कॉलेज में पढ़े हैं।" वह हँसी और सब-की-सब ठठाकर हँस पड़ीं। अमर के ओंठ भी फड़क उठे, क्योंकि इधर-उधर की बातों से उसका भी जी कुछ हलका हो गया था। देशभक्त भी मुस्किराए।

'हँसी करने का भाभी का पद है, लेकिन सच बात यह है कि बिना बाहरी मदद के कोई गुलाम देश संसार के इतिहास में आज तक आजाद नहीं हुआ। ऐसे मौके पर, जब कि अँगरेजी साम्राज्य की नींव डगमगा रही है, हमें उस पर दो-चार लातें मारकर गिरा देने की जरूरत है। देश के भीतर और देश के बाहर, सभी तरफ से गरीबी, भूख, रोग और गुलामी से जर्जर भारत को अपने काँपते हुए हाथों में तलवारें पकड़नी होंगी, और एक बार उसे अपनी दासता का जुआ जोर लगाकर कंधे से सदा के लिये उतार फेंकना होगा। गांधीजी का व्यक्तिगत सत्याग्रह-आंदोलन शिथिल हो चुका है, और देश के बड़े-बड़े नेता गिरफ्तार हो चुके हैं। वे जेलों में पड़े सड़ रहे हैं। सुना है कि सुभाष बाबू फरार होकर जापान पहुँच गए हैं,

और वह जापान की मदद से एक बहुत बड़ी हिंदुस्थानी सेना तैयार करके हिंदुस्थान से विदेशी सरकार को निकाल भगाने के लिये भारतवर्ष आ रहे हैं। अँगरेज भी इसे अच्छी तरह जानते हैं, और वे यह भी समझते हैं कि देश में जो पराजयवाद, निराशा और भय की भावनाएँ फैली हुई हैं, उससे जापान को सरलता से भारत में पैर जमाने में सफलता मिलेगी। भारतीयों में आशा और विश्वास पैदा करके उनकी सद्भावना प्राप्त करने के लिये राजनीतिक दलों से सम-झौता कर लेना चाहिए—कांग्रेस-नेताओं को रिहा कर देना चाहिए। बस, जेलें खाली हो गईं! क्रिप्स आजादी का अस्पष्ट संदेश लेकर आए, और इसीलिये असफल होकर उन्हें लौट जाना पड़ा। आज देश फिर निराश, भयभीत, क्षुब्ध है, और भीतर-ही-भीतर अपनी हार और अपनी चोटों का बदला लेने के लिये ज्वालामुखी-सा सुलग है। ऐसे समय में, जब कि समूचा देश ब्रिटिश राज्य से एक फिर टक्कर लेने के लिये तैयार हो, उस समय अँगरेजों के दुश्मनों की जीत से क्या हमारे मन में नई उमंगें नहीं उठने लगी हैं? क्या हम अँगरेजों के बड़े-बड़े जंगी जहाजों के डूबने, उनके चारोखाने चित्त होकर पलायन करने और उनकी सेना के विध्वंस से खुश नहीं होते? फिर बहुत से लोगों ने टोकियो से सुभाष बाबू को बोलते सुना है। उनका कहना है कि वह जापान में हैं। वह भारत की आजादी के लिये बहुत बड़ी सेना तैयार कर रहे हैं। सरकार कहे कि वह देश-द्रोही हैं, कम्युनिस्ट उसी के स्वर में स्वर मिला-कर नारा लगाएँ कि सुभाष गद्दार हैं, परंतु भारत-मा का कोई भी पुत्र या पुत्री ऐसा कृतघ्न नहीं हो सकता कि वह अपने देश की बागडोर एक की गुलामी से छूटकर दूसरे को सौंप दे। यदि यह सही है कि सुभाष बाबू जीवित हैं, और जापान में हैं, तो वह निश्चय ही भारत की आजादी का सौदा करने नहीं गए हैं। यदि

वह सेना लेकर बर्मा के रास्ते भारत में आते हैं, तो उनका विरोध देश की पीड़ित, शोषित और गुलामी के भार से दबी, भूखी जनता न करेगी, क्योंकि सुभाष के आने के माने होंगे—अँगरेजी राज्य से देश की मुक्ति, देश की आजादी। इसीलिये मैंने यह अर्ज किया था कि कांग्रेस या भारतीय सेना, जो भी सुभाष का विरोध करेगी, वह आजादी के विरुद्ध अपनी गुलामी के फंदों को मजबूत बनाने के लिये लड़ेगी।"

देवकुमार के इन सारे अनुमानों का आधार कोई सत्य था, या कोरी कल्पना या केवल जन-श्रुति, इसका नीर-क्षीर-विवेचन उन ग्राम-बालाओं के वश की बात न थी। अमर को ऐसा अनुभव हुआ कि जैसे उसका और उसके पति का विरोधी पक्ष सचमुच अन्याय-पूर्ण है, और देश के लिये घातक। क्या हुआ, जो उसके पति घायल हो गए, और पकड़े गए। देश के बंधन तो भारतीय सेना की हार न कुछ ढीले होंगे।...उसे दु:ख हुआ कि उसके पति देश-द्रोह करके देश की आजादी के विरुद्ध लड़े। नयनतारा, नवबाग और निर्मला भी देशभक्त के तर्कों और देशभक्ति की प्रगाढ़ता से प्रभावित थीं। सबके मन आंदोलित हो उठे थे—देश की आजादी की कल्पना से। उन्हें भी जैसे यही होगा कि कुँवर साहब ने जापानियों के विरुद्ध लड़कर गलती की। परंतु सबके मन में फिर भी एक संदेह भर रहा था कि आखिर कांग्रेस भी ५० साल की त्याग-तपस्या और बलिदानों के बाद आज देश-द्रोह क्या करने जा रही है?

शाम हो चली थी, और बदलियों के कारण काफी अँधेरा अभी से मालूम होने लगा था। बूँदें पड़ने लगीं। देखते-देखते वे काफी तेज हो चलीं। सबको अपने-अपने घर की सूझी।" निर्मला ने कहा—"देव भैया! पानी आ गया।"

देशभक्त भी कुछ प्रकृतिस्थ हो रहे थे। परंतु भीतर-ही-भीतर उनका मन अभी काफी उत्तेजित था। हवा के शीतल झोंको, देह पर लगनेवाली बूँदों और निमन्त्रा के घर चलने के सकेत मे वह अपनी समाधि से चौंक पडे—"हाँ, चलना चाहिए अब। पानी काफी जोरों का पड़ने लग गया है।"

"हाँ, लेकिन झूलने का मजा तो ऐसे मे ही आता है। क्या अमर रानी?" नवधारा ने मजाक की।

नयनतारा को नवधारा का स्वभाव पसद नहीं आया, और उसने जोर दिया कि नहीं, अब अपने-अपने घर लौट चला जाय। अमर को भी नवधारा की बात बहुत बुरी तो नहीं लगी, परंतु अभी उसका मन काफी अशांति का अनुभव कर रहा था। वह भी अब रात मे लौटकर पुन. एक सिरे से सारी बातो पर विचार करना ी थी।

सभी लौट चले। देशभक्त, अमर और उसकी सहेलियाँ अब तक भीग चुकी थीं।

लौटते समय सभवत. किसी को यह याद न रहा कि उनमें से कोई यह भी पूछ ले कि कांग्रेस ने यह नीति क्यों घोषित की है कि वह समस्त धुरी राष्ट्रों की तानाशाही, अत्याचार और सैनिकवाद के विरुद्ध है। शायद वर्षा ने आकर सभा एकदम से शंका-समाधान के पूर्व ही भग कर दी थी, और जैसे राह में भी राजनीति पर चर्चा करने की सख्त मनाही कर दी गई हो।

[२]

जब से इस बार अजना आई है, उसकी निर्मला से खटपट चलने लगी है। शुरू में तो देवकुमार किसी-न-किसी तरह समझा-बुझाकर दोनो मे समझौता करा देते रहे, परतु अब दोनो में करारी ठनने लगी है। मा किशोरी अपनी बेटी की ओर से कभी जा बोल देती, तो फिर उस दिन महाभारत मच जाता। देवकुमार बड़े धर्म-सकट में रहते। अजना को कुछ कहें, तो उन्हें यह सुनने को मिलता कि आपके लिये तो मैं दूसरो से लड़ाई मोल लेती हूँ, लेकिन आप मेरी ओर से कभी नहीं बोलते। देखूँगी, पानी में रहकर मगर से कब तक आप भी वैर साधते हैं। और फिर अजना देवी फफककर रो पड़तीं। यदि निर्मला को कुछ कह दे, तो किशोरी देवकुमार को उलटे हाथों लेतीं—"औरत आ गई, तो मा-बहन को आँखें दिखाने लगा। निर्मला कहाँ चली जाय। उसका ब्याह हो जायगा, तो फिर उसके दर्शन भी दुर्लभ हो जायँगे। औरत को इतना सिर पर चढाना अच्छा नहीं है।"

देवकुमार तटस्थ होकर रहने की कोशिश करते हैं, परतु आए-दिन की धमा-चौकड़ी से वह बहुत आजिज आ गए हैं। उनका मन दुखी-सा रहता है। उन्होंने कल्पना की थी कि स्त्री उनके एकाकी जीवन को नीरस हो जाने से बचा लेगी—वह ज्योति बनकर उन्हें अधकार से प्रकाश की ओर ले चलेगी—वह शक्ति बनकर उनके साहित्य को, उनके देश-प्रेम को ऊँचा उठाएगी। अविरल प्रकाश, अनत शक्ति और निर्बाध प्रेरणा पाते रहने के

लिये वह किसी सरस, मधुर अंचल की शीतल छाया में कुछ काल विश्राम करके अपने मस्तिष्क, वक्ष और अंत.करण का स्वस्थ कर लेना चाहते थे। परंतु उन्हें क्या मालूम था कि गृह-कलह दांपत्य कलह का रूप ग्रहण करके उनके जीवन में जोंक बनकर लग जायगी।

गृह-कलह के लिये जरा-जरा-सी बातें भी आधार बन जाती हैं। अपनों से अपने का विरोध और प्रतिशोध, इसी का नाम गृह-कलह है। अंजना दो भाइयों के बीच में एक बहन थी—और वैभव के स्वर्ग में उसने अपनी आँखें खोली थीं। उसने अपना बालापन खेल-कूद, पढाई-लिखाई और सिनेमा-दर्शन और पिकनिकों के बीच बिताया था। मा-बाप ने कभी उसे यह नहीं बताया था कि पुत्री को एक दिन गृहिणी और मा बनना पडेगा—उस दिन के लिये क्या और कैसे करना चाहिए। शौक के लिये अंजना ने रसोई यानी स्कूली परीक्षाओं या पिकनिकों में जरूर किया था—भाइयों के लिये मोजे और स्वेटर भी बिने थे, परंतु एक दिन गृहिणी बनकर उसे इन कामों को भी अपने दैनिक कार्य-क्रम में प्रमुख स्थान देना पडेगा, इसके लिये न वह तैयार थी, और न उसे कभी तैयार किया गया। अपने घर आकर जैसे उसे अनुभव हुआ कि गृहस्थी का यह भार उससे न उठेगा। गौने में जब आई, तो सास ननद ने उसे पलंग से नीचे न उतरने दिया। कभी उसे गृह-कार्य करने को नहीं कहा गया। निर्मला पद में और उम्र में छोटी थी—पानी भी पीना हुआ, तो आपने फरमा दिया—"निर्मला, पानी देना।" निर्मला ने लिहाज करके लाड-चाव करने के मारे उठकर भाभी को पानी पिला दिया। कभी-कभी लाज-लिहाज के कारण अंजना अपनी सास-ननद के साथ बरतन माँजने को, कपडे धोने को या रसोई करने को बैठ जाती या कमरे में झाड़ देने लगती, तो सास-ननद कहतीं—

"तू उठ जा बहू। यहाँ काम ही क्या रक्खा है? तेरे तो खेलने-खाने के दिन हैं।" निर्मला उसे हटाने के लिये और कोई बात भी गढ़ लेती—"जाओ भाभी। अभी भैया बुला रहे थे।" अंजना मुस्किरा पड़ती। वह उत्तर देती—"क्या हुआ? काम करने से मैं दुबली थोड़े हो जाऊँगी।" लेकिन निर्मला उस समय तक दम न लेती, जब तक भाभी उठकर चली न जाती।

अब वही निर्मला है, और वही अंजना है। नई बहू का जितना लाड़-चाव होना था, वह गौने में हो चुका था। वह हवा बदल चुकी थी, परन्तु अंजना ने न तो उसके रुख को पहचाना और न पहचानने की कोशिश ही की। उसने यही समझ रक्खा था कि गृहस्थी फूलों की सेज है। उसका कल तक जो लाड़-चाव होता रहा था, वह सदैव होता रहेगा। उसने भी अब की आकर यह धारणा बना ली थी कि अपने कमरे में शृंगार कर लेना, रेशमी साड़ियाँ और जेवर पहन लेना, पास-पड़ोस की औरतों और छोकरियों से हँस-बोल लेना और शेष समय में कुछ पढ़ना या चारपाई पर लोट लगाना या ताश चौपड़ या कैरम खेलना, इतना ही उसे करना है। बस, यही उसकी दिनचर्या होगी। उसका यह विचार बन गया था कि जब तक उसके पास रूप यौवन है, और उसे अपने पति पर पूरा-पूरा अधिकार है, उसे बस खेलना-खाना और मस्त बना रहना चाहिए। वह सदा लाड़-प्यार किए जाने के लिये ही है। सास-ननद उसकी सेवा और उसे सुख पहुँचाने के लिये ही हैं।

सेर-भर गेहूँ रोज अंजना के घर में पीसे जाते हैं। गुड़गाँव अमृतसर नहीं है, जहाँ बिजली की पनचक्कियाँ मुहल्ले-मुहल्ले लगी हुई हैं, और रोज निर्मला अपनी मा के साथ प्रात उठकर चक्की पर आटा पिसवाती है। बात की बात में एक दिन अंजना के सामने ही निर्मला मा से बोली—"मा, अब तू क्यों रोज परेशान हुआ करती है? भाभी

और मैं दोनो जने गेहूँ पीस लिया करेंगे।" मा ने उत्तर दिया—"बहू बेचारी क्या पीस पाएगी। मैं ही अभी तो बहुत हूँ।' निर्मला हार माननेवाली न थी। वह यह नहीं देख सकती थी कि मैं और मा तो दिन रात काम करें, पर भाभी साहबा मजे से पलग पर बैठी गुलछर्रे उड़ाया करें। बोली—"अरी, बहू के रहते तुझे काम करना शोभा नहीं देता। उसे भी कुछ करने देगी कि तू ही सब कुछ कर डालेगी। फिर तू बुढिया हो गई, मा। अब तो हम जवानो का जोड़ लगना चाहिए।"

मा ने मुस्किराकर तटस्थ होते हुए कहा—"अच्छा भई। तुम लोग जैसा समझो, करो। मै बहू को क्यों किसी काम के लिये नाहीं करूँगी। बहू का घर है। जो जी में आए, करे। उसका हाथ कौन हत है।"

अंजना भीतर-ही-भीतर जलकर राख हो गई। उसने मन में कहा—"बीबीजी! तुम मुझसे क्या चक्की चलवाओगी। यह अजना है, और कोई नहीं। मैं भी तुम्हें समझ लूँगी। इस घर में तो मेरा ही राज्य चलेगा।"

दूसरे दिन गेहूँ पीसने का समय हुआ, एक भगोने में गेहूँ भंडार-घर से निकालकर निर्मला अजना के कमरे मे आई, जहाँ वह नित्य-कर्म से निवृत्त होकर अपने पलग पर अँगड़ाइयाँ तोड़ रही थी। बोली—"चलो भाभी, चक्की तुम्हारी याद कर रही है।"

अजना जल उठी, परंतु मुस्किराकर बोली—"कह दो चक्की से कि भाभी पूछती हैं कि मुझसे तुम्हारी कब की जान-पहचान है?"

"जान-पहचान है या नहीं—उठोगी भी कि नहीं?" निर्मला के तेवर बदलने लगे।

"अभी तो नींद ही नहीं पूरी हुई। उठने की तबियत नहीं कर रही है।" अंजना ने बहाना बनाया।

"काम करने के नाम नींद सताने लगी, क्यों भाभी। नहीं
लाओगी, तो यह अमृतसर नहीं है कि झट पनचक्की से पिसकर
ा जायगा। घर में आटा नहीं धरा है कि तुम्हारे लिये पकवान
ना दिए जायँ।"

"मुझसे नहीं पिसता।"

"तो आज खाना मत। मेरा क्या लिया, मैं ये गेहूँ यहीं पटके
ाती हूँ। कोई कुछ कहेगा, तो मैं कह दूँगी कि आटा नहीं है,
हाँ से रोटी बनाऊँ। और, यह न समझ लेना कि रोज-रोज अम्मा
ी कूटती-पीसती रहेंगी। तुम्हारी पूजा आरती करने के लिये तुम्हें
ाह कर नहीं लाया गया है। लाड-प्यार उसी का होता है,
ो अपने घर आकर घर को अपना बना लेती है। तुम्हारी-जैसियों
ी गुजर कहीं नहीं हो सकती। तुम बुरा मानो, चाहे भला। मैं कह
म्हारे हित की रही हूँ। पीछे तुम्हें बहुत पछताना होगा भाभी।"

"पछताऊँगी मैं न कि तुम।" अजना ने भीगी आँखें डबडबाते
र कहा—"तुम लोगों से सिवा गालियों के मैं आशीर्वाद की आशा
हीं कर सकती।"

"मैं गालियाँ दे रही हूँ। सीख की बात सभी को बुरी लगती है।"

अजना के आँसू बह चले—"लगती है, तो? तुम्हारे घर आकर
ने क्या सुख पाया? आए चार दिन नहीं हुए कि 'काम-काम'
रके सिर पर चढ़ आईं। एक-एक सास-ननद ऐसी होती हैं कि बहुओं
ो हाथोंहाथ लिए रहती हैं। एक तुम हो कि मुझे सुख से दो घड़ी
ठा नहीं देख सकतीं।" अजना ने आँचल से आँसू पोंछ डाले,
रंतु आँखें फिर भर आईं।

निर्मला भगोना उठाकर चल दी। जाकर अकेले चक्की पर बैठ
ई। किशोरी ने देखा, निर्मला अकेली पीस रही है, वह स्वयं आकर
गाने लगी। पूछा—"क्या बहू नहीं आई?" निर्मला ने उत्तर

दिया—"बड़े घर की बेटी है न। चक्की का नाम सुनकर ही कान खड़े हो जाते हैं, जैसे किसी ख़रगोश को तीर मारने के लिये शिकारी आ पहुँचा हो। तभी तो लैला बनी फिरती है। है भी हड्डियों में कुछ ताक़त? जरा-सा कोई गुंडा बेइज़्ज़त करने को उतारू हो जाय, तो बस, फिर टायँ-टायँ फिस। बोल जायँगी। ऐसी लौंडियाँ गुंडों की छाती पर चढ़कर उनकी पाप-भरी आँखें नहीं निकाल सकतीं। आज तक . . ."

"क्या बात हुई बेटी? नहीं आई, तो क्या हुआ?" किशोरी ने टोका।

"मेरा क्या लिया। कोई आज तक भाभी ने ही थोड़े आटा पीसा था।" अजना पर मन-ही-मन में भुनभुनाकर निर्मला चुप हो रही। चक्की की घर्र-घर्र में उनके मन का विक्षोभ धीरे-धीरे शांत होने लगा।

× × ×

निर्मला के चले जाने के बाद अजना आँचल में मुँह छिपाकर फूट-फूटकर रोने लगी।

उसे अपने अल्हड़ बालापन के वे दिन याद आने लगे, जब वह अपने भाइयों या सहेलियों से लड़-झगड़ लेती थी, तो वे उसके रो पड़ने पर उसकी बड़े दुलार प्यार से मनुहार करतीं, और उसके फूले-फूले, गुलगुले गालों को थपथपा, उसे गुदगुदाकर हँसा करके ही दम लेतीं। आज अपने घर में अजना के बरसाती आँसुओं का कोई खयाल करनेवाला भी न था। यदि कोई उनका मूल्य आँकनेवाला था भी, तो वह इस समय ऊपर छत पर चारपाई के अचल में विश्राम कर रहा था। अजना इतनी जोर से रोने का साहस न कर सकती थी कि कमरे के बाहर कोई सुन ले। इससे पहले भी कई बार गृह-कलह हो चुकी थी। कभी देवकुमार ने उसका और कभी अपनी बहन और माँ का पक्ष लिया। देवकुमार सत्य और न्याय के उपासक थे, और

वह प्रायः दूध-का-दूध और पानी-का-पानी निर्णय देकर दोनों पक्षों की त्रुटियाँ बतलाते और परस्पर समझौता कराके मेल से रहने पर जोर देते। परंतु कभी एक का पक्ष अन्यायपूर्ण होता तो उन्हें यह कहना ही पड़ता कि भई, दूसरे का पक्ष सही है। परंतु देवकुमार को क्या पता था कि श्रीमती अंजना हमेशा एकतरफा फैसला ही चाहती हैं, और वह भी अपने पक्ष में। अंजना ने अपनी भूल को भूल के रूप में स्वीकार करना न सीखा था, और इसीलिये उसे अब अपने पति से भी यह आशा न थी कि वह उसकी सभी झूठी-सच्ची बातों के समर्थक होंगे। तो फिर उसके पास भी रोने का, रूठने का एक अमोघ अस्त्र जरूर था, जिससे जबर्दस्ती वह फ़ैसला अपने पक्ष में करवाए, और यदि न हो सके, तो वह कम-से-कम अपने पति को आतंकित तो कर दे।

अंजना को विवाह गुलामी का बंधन मालूम होने लगा। उसे एक पुरानी घटना याद आई।

अंजना उस समय दस-ग्यारह साल की थी। उसके तिमंज़िले मकान से मिले हुए मकान में जो पड़ोसी रहते थे, वे पंजाबी थे। नाम था निरंजनसिंह। अंजना का हमउम्र केशरसिंह उन्हीं का लड़का था। देखने में काफी खूबसूरत और हट्टा-कट्टा था। शरारती भी नंबरी था, परंतु और लड़कों की तरह आवारागर्द न था। शुरू में वह भी मोहल्ले के लड़के-लड़कियों की तरह अंजना को 'इंजन' कहकर चिढ़ाया करता था। बात यह थी कि जब शाम को सामने के पार्क में सभी लड़के-लड़कियाँ एकत्र होतीं, तो कबड्डी, रूमाल-चोर, चील-झपट्टा और रेलगाड़ी वगैरा के अनेक खेल होते। एक दिन रेलगाड़ी के खेल में सबकी देखादेखी अंजना को भी इंजन बनने का शौक चर्राया, और इसी शर्त पर खेल में शामिल हुई कि वही इंजन बनाई जायगी, और सब लोग उसके पीछे-

पीछे दौड़ेंगे। रेलगाड़ी का खेल शुरू हुआ। केशर उसके ठीक पीछे डिब्बा बनकर लगा, और उसने अजना की कमर पकड़ ली। शेष लड़के-लड़कियाँ भी डिब्बे बनकर उसमें पीछे जुड़ गए। अजना ने सीटी दी, और छक्-छक् करके गाड़ी रवाना हो गई। कुछ दूर तक पार्क की दौड़ कर लेने पर पीछे के कुछ लोगों को शरारत सूझी, और उन्होंने अपने आगे के लड़कों को धक्का दे दिया। केशर के पैर अजना के पैर से लडे, और अजना वहीं लड़खड़ाकर गिर पड़ी। अजना के ऊपर केशर गिर पड़ा, और उसके ऊपर पीछे के लड़के। सारी रेल टूट-फूटकर जैसे ढेर हो गई। अजना पर दबाव अधिक न पडे, इसलिये उसने अपना भार अजना पर से हलका करके अपने ऊपर लदे लड़को को झटका देकर नीचे गिरा दिया। सब उठ-उठ कर धूल झाड़ते हुए तालियाँ बजा-बजाकर हँसने लगे—"इजन गिरा, रेल टूटी। इजन गिरा, रेल टूटी।"

तभी से सभी मोहल्ले के लोग अजना को 'इजन' कहकर पुकारने लगे। 'इजन' और अजना के नाम-साम्य का मजा लेने के साथ साथी सहेलियाँ अजना के चिढने का आनद लूटे बिना नहीं रह सकती थीं। कमजोर को अजना पीट देती, हट्टों-कट्टों से उसका कुछ वश न चलता। चिढकर, दुम दबाए भाग खड़ी होती। केशर भी सबकी देखादेखी अजना को 'इजन' कहकर चिढाने लगा। गली-कूचे में, नीचे द्वार पर या सीढियों में, ऊपर छत पर, जहाँ कहीं भी अजना मिल जाती, केसर अजना को चिढाए बिना न मानता। परतु उसे अकेले अजना के चिढ जाने का मजा लूटने मे ज्यादा आनद आता। सबके सामने न तो वह उसे चिढाता, और न कभी दूसरे लड़के लड़कियों के चिढाने से अजना को दुखी होते देख पाता। चट से पजाबी ढग से चिढानेवाले के गाल पर एक तमाचा जड़ देता। एक दिन एक हट्टे-कट्टे लड़के से पाला पड़ गया। अजना

को अब बहुत कम लोग चिढ़ाया करते थे, क्योंकि बहुतों को अभी अजना के चिढ़ाने के फल-स्वरूप केशर के पजाबी तमाचे का प्रसाद भूला न था। अजना पार्क में केशर के बाहुबल के बल ही खेलने आती। ऊधमसिंह के नेतृत्व में चोट खाए हुए किशोर जवानों की एक पार्टी सगठित हो गई। ऊधम का कलेजा बढ़ चला। उसे केशर का आतक और दबदबा असह्य हो उठा। अजना को उसने चिढ़ाया। चट से उसके फूले हुए गालों पर केशर ने तमाचा जड़ दिया। केशर को अपने पर और अपने कुछ चुने हुए साथियों पर नाज़ था। उसे यह असह्य हो गया कि कोई उसके सामने अजना को चिढ़ाए। तमाचा खाकर ऊधम केशर पर पिल पड़ा। ऊधम के कुछ अन्य साथी साहस करके अपने मुखिया की सहायता के लिये चढ़े, तो गुर्राते हुए केशर ने कहा—"तुम लोग खैरियत चाहते हो, तो पास न आना। ऊधम को मुझसे निपट लेने दो।" केशर के साथियों ने ऊधम के साथियों को चुनौती देते हुए कहा कि "अगर तुम लोगों में कोई हवस हो, तो एक-एक करके आ जाय, एक-एक से निपट लें। नहीं तो दूर रहो। पास न फटकना। केशर और ऊधम की जोड़ हो लेने दो।"

ऊधम के साथी तिलमिला करके भी आगे न बढ़ सके। उन्हें जैसे काठ मार गया, और वे वहीं-के-वहीं खड़े रह गए। अजना भय और आशा के झूले में झूलती हुई दोनो का मल्ल-युद्ध देखती रही। उसकी समवेदना केशर के साथ थी। वह इस बात से जरूर उलझन में थी कि दूसरों के चिढ़ाने से तो वह नाराज होता है, और मेरे लिये दूसरों को पीटता और झगड़ा मोल लेता है, परतु अकेले में मुझे जरूर चिढ़ाता और हँसकर भाग जाता है। जाने क्यों अजना को भी अब उसका चिढ़ाना बुरा नहीं लगता, और वह मन-ही-मन चाहती है कि आज केशर मुझे मिले, और चिढ़ाए। जाने क्यों

दूसरों के चिढ़ाने पर वह बहुत चिढ़ती है, परन्तु केशर के चिढ़ाने का ढंग, उसके हाव-भाव और उसकी हँसती हुई आँखें तथा खिले हुए ओठ उसे बहुत पसंद आते हैं।

केशर ने ऊधम को चित कर दिया। केशर के साथी तालियाँ पीट-पीटकर हँसने-उछलने लगे, परंतु ऊधम और उसके साथियों के मुँह पर हवाइयाँ उड़ने लगीं, और हाथ-पैर ढीले पड़ गए। अवसरवादी साथी ऊधम को ही बुरा-भला कहने लगे, और अपने को सत्य तथा न्याय का पक्ष लेनेवाले पाँचवें सवारों की गिनती में रखकर केशर से जा मिले। ऊधम बक-झक करता और केशर को गालियाँ देते हुए भाग निकला। केशर ने ताव आने पर भी अपने को सँभालते हुए उससे कहा—"चले जाओ चुपचाप यहाँ से बच्चू! इसी में तुम्हारी खैरियत है। गालियाँ न दो। समझे।"

"समझ लिया सब। किसी का मुँह तो न सी दोगे। जो मन में ..., सो कहेंगे। इसका बदला न लिया, तो कहना।"

"अरे! जा-जा! एक बार तो चारों खाने चित हो चुका। बहुत लड़ाने में ही क्या रक्खा है? ..मन की पूरी न हुई हो, तो अभी आ जाओ। पीछे के लिये क्यों रखते हो?" केशर ने आवेश में ऊधम की ओर कदम उठाते हुए कहा।

ऊधम भी जाता-जाता ठहर गया। अंजना ने केशर की बाँह पकड़कर रोका—"जाने भी दो केशर। ऊधमी के मुँह क्यों लगते हो? चलो, घर चलें। काफी अँधेरा हो गया।"

केशर के मन में तो आया कि ऊधम पर दो-एक हाथ और साफ करे, परंतु अंजना के रोकने से रुक गया। ऊधम भी चुप हो रहा, यद्यपि मन में बदला लेने के लिये आग-सी धधक रही थी। परंतु इस समय उसकी पार्टी कमजोर थी, और स्वयं वह थक चुका था। उसमें केशर से फिर भिड़ने की हिम्मत न थी। उसके साथी उसे और

केशर के साथी केशर को पकड़कर घसीट ले गए। पार्क के द्वार पर सब तितर-बितर होकर अपने-अपने घर चले।

अजना और केशर साथ-साथ चले। अजना को सीढी तक पहुँचा-कर केशर ने अपने घर की ओर चलने को कदम उठाया कि अजना ने उसे रोकते हुए कहा—"मुझे डर लगता है। ऊपर तक पहुँचाते जाओ। फिर चले जाना।"

"ऐसी डरपोक हो ? तभी तो तुम्हे सब लोग चिढा लेते हैं। चलो अच्छा।'... और केशर भी ऊपर चला।

पहली सीढी तक पहुँचाकर केशर बोला—"इजन को छोड़कर गार्ड अब चला।" और वह मुड पडा कि नीचे उतरे।

"इजन को छोड़ने गार्ड नहीं आता।' अजना ने मुस्किराते हुए उत्तर दिया—"गार्ड को पहुँचा देना इजन का फर्ज जरूर है।'

केशर मत्र-मुग्ध-सा होकर उत्तर में मुस्किरा पड़ा। मन-ही-मन सोचता रहा कि रोज की तरह इजन कहने मे अजना आज चिढी क्यो नहीं ?

अजना कहती गई—"आओ, ऊपर चलें। छत पर से अपने यहाँ चले जाना। गार्ड को अपने घर तक पहुँचाना अब इजन का ही काम है।' केशर की आँखों में अपनी आँखें डालकर वह मुस्किरा पड़ी—"क्यो ?"

केशर नीचे न उतर सका। उसे एक ऐसी चीज, एक ऐसे आनद, एक ऐसी कल्पना का अनुभव हो रहा था, जिससे वह अभी तक बिलकुल अनजान था। वह उसे समझने की कोशिश कर रहा था, पर समझ नहीं पा रहा था।

"सोच क्या रहे हो, चलो केशर। क्या मेरे इतना कहने का कोई मूल्य नहीं है ?" आग्रह, याचना और निराशा की मनोवृत्तियाँ

उसकी वाणी और आँखों में प्रकट थीं। केशर के पैर आगे बढे, और दोनो हाथ में हाथ मिलाए दूसरी सीढ़ी चढने लगे।

अजना ने मुस्किराते हुए कहा—'अच्छा, यह बताओ केशर, अगर इंजन गार्ड को अपने यहाँ ही रख ले, और उसे उसके घर तक न पहुँचाने जाय, तो?"

"तो क्या! गार्ड के दो पैर नहीं हैं? वह खुद अपने घर चला जायगा।"

ऊँहूँ! समझे नहीं। देखो, तुम गार्ड के डिब्बे हो न, और मैं इंजन। इंजन के बिना तुम कैसे चल-फिर सकते हो?"

"यह बात है, समझा।" और केशर मुस्किरा पड़ा। अजना भी जी भरकर हँसी।

दोनो छत पर आ गए। दिग्वधुओं ने अपने दुग्ध-धवल मुख पर रजनी का अवगुंठन खींच लिया था। वे किसी के आगमन पर ७५ दीप जलाकर उसकी आरती कर रही थीं।

"अच्छा, केशर! मुझे 'इंजन' कहने पर तो तुम दूसरों को पीटते हो, लेकिन तुम मुझे 'इंजन' क्यों कहते हो?"

"तुम्हे बुरा मालूम होता है, तो मैं भी अब से तुम्हें इंजन नहीं कहा करूँगा। तुम मुझे बड़ी अच्छी लगती हो अजो।"

"हूँ, भला, मैं अच्छी क्या हूँ, जो तुम्हें बड़ी अच्छी लगती हूँ?"

"इतना तो मैं नहीं समझ पाता, लेकिन जाने क्यों तुम बड़ी अच्छी लगती हो।" कुछ क्षण सोचकर एक उँगली से उसकी ओर संकेत करके बोला—"हाँ, तुम अच्छी हो।"

"अच्छी हूँ, बस, और कुछ नहीं। तुम भी बडे अच्छे हो।" अजना ने मुँह बनाकर उत्तर दिया।

"नहीं अच्छा लगता, तो लो, मैं जाता हूँ।" केशर छत की मुँडेर पर चढ़ गया, और अपने मकान की तरफ के कँगूरों पर खड़ा हो गया।

अजना ने केशर का दाहना हाथ पकड़ लिया, और उस पर अपना बायाँ गाल रखते हुए बोली—"तुम बुरा मान गए केशर! माफ कर दो। मैं तो बड़ी हँसोड़ हूँ।"

केशर के शरीर में बिजली दौड़ रही थी। उसके रोम-रोम सिहर उठे थे। वह जो स्वर्गीय सुख आज अनुभव कर रहा था, वैसा उसे पहले कभी नहीं मिला था। जैसे इतना बड़ा वरदान उसे इसलिये मिला कि उसने अजना-जैसी निर्दोष, सरल बालिका की मान-रक्षा करके कोई बहुत बड़ा पुण्य या यज्ञ किया था। उसने मन-ही-मन निश्चय कर लिया कि मैं भी अब से अजना को कभी नहीं चिढ़ाया करूँगा। बोला—"अजो! तुम्हें तो बिना कहे ही मैंने माफ कर दिया। अच्छा, जाने की आज्ञा दो अब।" मन उसका यद्यपि कमजोर हो रहा था, और वह सोचने लगा, ऐसे ही मैं खड़ा रहूँ, और ऐसे ही मेरे हाथ पर अजना अपने गाल रखकर मेरी ओर देखती रहे।

अजना को स्मरण आया कि मा खाना लिए उसकी इतज़ार में होगी, और ज्यादा देर हुई, तो डाँट पड़ेगा। बोली—"जाते हो, तो जाओ। जानेवाले को कौन रोक सकता है। कल फिर पार्क में मिलोगे, आओगे न?"

"हाँ-हाँ, जरूर।" केशर अपनी छत पर उतरने को हुआ।

अजना ने रोकते हुए कहा—"हाँ, देखो, तुम मुझे इजन ही कहा करो। तुम्हारे मुँह से बड़ा प्यारा लगता है केशर।"

केशर ठहर गया। बोला—"तुम चिढ़ती हो, तो मुझे दुःख होता है।"

"नहीं, नहीं। मैं तुमसे कहाँ चिढ़ती हूँ। इजन बिना तुम्हारा गार्ड का डिब्बा कौन ले जाया करेगा?"

केशर ने मुस्किराकर अजना की हथेली चूम ली। अजना भी

मुस्किराई, और उसकी मुस्किराहट ऐसी मालूम पड़ी, जैसे उसमें मदिरा का गहरा नशा हो। उसकी मुस्किराहट केशर की आँखों में चिंता बनकर छिप गई। दोनों का बचपन सहसा एक ही क्षण में तारुण्य से अभिमंत्रित हो उठा।

अच्छा, और एक उसास छोड़कर केशर अपनी छत पर उतर गया।

अंजना उसका उतरना, उसका उसकी ओर देखते हुए जाना, और आँखों से ओझल हो जाना देखती रही।

× × ×

ऊधम ने एक दिन मौक़ा पाकर एक ढेला फेंककर केशर का सिर फोड़ दिया। घाव गहरा हो गया, और लगभग दो हफ्ते तक केशर को चारपाई का सेवन करना पड़ा। अंजना रोज़ उसे देखने जाती, उसकी सेवा-शुश्रूषा करती, और घंटों उसके पास बैठती। तरह तरह की बातें करती, और केशर का जी बहलाती। किसी-न-किसी बहाने का एक दूसरे से मिलना जरूरी होता। अंजना देर से पहुँचती, केशर का जी उसके छवि-दर्शन के बिना तड़पने लगता। बिछुड़ते केशर कहता—"इजन रानी!" इजन रानी हाथ बढ़ा देती, और केशर कोमल हथेलियों को एक-एक कर चूम लेता, और बहुत देर तक उन्हें पकड़े सिहरन और प्रकंपन का अनुभव करता रहता।

केशर अच्छा हो गया।

बहुत वर्ष बीत गए। अंजना का अनजान बालापन पीछे छूटने लगा था। भुजाएँ, जाँघें और उन्नत वक्ष भरने लगे थे। वह समझने लगी थी कि केशर के प्रति उसका व्यवहार एक प्रेमिका-जैसा था। उसी को प्यार कहते हैं। बालापन की भूल को उसे सुधारना था, और वह पहले की अपेक्षा अधिक गंभीर, एकांतप्रिय और लज्जाशील हो गई थी। उसके मा बाप भी रोकते और स्वयं भी केशर से मिलने-

जुलने के मौके वह बचा जाती। बात यह थी कि उसकी सगाई गुड़-गाँव परकी हो गई थी। अजना किसी एक की ही होकर रह सकती थी। वह अपने भावी पति को धोखा नहीं देना चाहती थी। जो प्रेम की लता उसके अनजान में ही उसके हृदय में उग आई थी, अब उसने बेदर्दी से उसे उखाड़कर घूरे पर फेंक दिया।

वह सोचती कि यदि कभी केशर मिल भी गया, तो उसे मैं 'केशर भैया!' कहकर ही सबोधित करूँगी। परंतु मिलने पर वह ऐसा कह भी पाएगी—इसी अपनी कमजोरी के कारण वह कभी केशर से मिलने का साहस न करती। सामने भी आ जाता, तो उससे आँखें न मिलाती। जब तक कोई भाई या मा साथ रहती, वह भी खड़ी या बैठी रहती या एकात मे पड़ने के पहले ही किसी-न-किसी बहाने खिसक जाती। वह समझती थी कि इससे केशर का मन दु:खी होता है, वह अब पहले जैसा हँसता बोलता नहीं, और न पहले-जैसा हृष्ट-पुष्ट ही है वह। वह परतु वह क्या करे? समाज और उसके नियम ही ऐसे हैं कि अजना के केशर के ओठों तक आप-ही-आप पहुँच जाने-वाले हाथ पीठ-पीछे खींचकर बाँधे जा चुके थे।

परतु जाने क्यों उखड़ी हुई प्रेम-लता की जड़ उसके क्षुब्ध, अशात अतस्तल ही में आज फिर हरिया उठी। जो प्यार और सरक्षण उसने कई वर्ष पहले केशर ने प्राप्त किया था, वह ससुराल में आकर न सास-ननद से उसे मिला, और न अपने सुहाग के स्वामी देवकुमार से। जैसे प्यार, मान, मनुहार मे जो उष्णता होनी चाहिए, पति ने उससे उसे वञ्चित रक्खा। अतीत की एक मधुर स्मृति ने उसे आज फिर चचल कर दिया। वह जोर से सिसक पड़ी।. .किसी की खटाऊँ के उसके कमरे की ओर आते हुए शब्द सुनकर वह चौंकी, और चट से अपने आँसू पोछकर पलग पर उठ बैठी।

देवकुमार ने भीतर प्रवेश किया। रोज वह उसके आते ही बिस्तरे

वगैरा पकड़ लेती, और मुस्किराकर अपने पति का स्वागत करती। परंतु न आज वह पलंग से उठी, और न मुस्किराई। अंजना की लाल आँखें, उतरा हुआ चेहरा, अस्त-व्यस्त वस्त्राभरण देखकर देवकुमार पलक मारते ही भाँप गए कि आज दाल में कुछ काला है। बिस्तरा रखकर देवकुमार अंजना के बगल में आ बैठे, और बायाँ हाथ कंधे पर रखकर दाहने हाथ से अंजना की ठुड्डी अपनी ओर उठाकर उसकी आँखों में आँख डालते हुए बोले—"रानी! तुम्हारी ये आँखे क्यों लाल-लाल होकर सूज रही हैं?"

"नींद नहीं आई आपके ऊपर जाने के बाद से। मै आज यहीं पड़ रही थी।" अंजना ने बात बना दी।

"लेकिन तुम्हारी भीगकर सूखी हुई आँखें, खिलकर उतरा हुआ चेहरा, और बिखरे हुए केश-पाश तो कुछ और ही कह रहे हैं।"

"लेकिन मुझे तो कुछ नहीं मालूम कि वे क्या कह रहे हैं?"

"...च कहो। तुम प्राय. उदास और कटी-कटी क्या रहा करती ?"

"मन नहीं लगता यहाँ। मुझे घर भेज दो।" अंजना के आँसू बह निकले।

"तो यह किसका घर है? यह भी तुम्हारा ही है न। इसे छोड़कर कहाँ जाओगी? तुम्हारे बिना मेरा मन कैसे लगेगा?"

"तुम कवि हो। कविताएँ लिखकर, गीत गाकर और कुछ दिनों बाद लाहौर जाकर अपना मन लगा लोगे। तुम्हें क्या मालूम कि दिन-रात पिंजडे में बंद रहकर चिड़िया की भाँति स्त्री कितना घुला करती है!"

"आज किसी ने कुछ कह दिया क्या? लेकिन हर बात का इस तरह बुरा मानोगी, तो शेष जीवन कैसे कटेगा? अभी तो दोनों को बहुत दिन जीना है।"

"उस जीवन में क्या आनंद है, जहाँ प्राण दिन-रात घुट-घुटकर क्षीण होते रहें।"

"तो क्या तुम मेरे लिये भी इस घर में नहीं रहना चाहतीं? तुम्हारे प्राण क्षीण होंगे, तो सारस के जोड़े की भाँति तुम्हारी समाधि पर मुझे बारह बरस तक आँसू के दीप जलाने होंगे।"

"ये कहने की बातें हैं। मेरे आँख मूँदते ही दूसरा ब्याह कर लोगे, और मुझे भूल जाओगे।'

"तो तुम्हें मेरे प्यार की गहराई में भी विश्वास नहीं है?" देवकुमार स्तब्ध हो गया। एक निःश्वास छोड़ते हुए बोला—"ठीक है तो फिर। तुम मिटो, और मिटते हुए ऐसी फूँक दो कि प्राणों का यह दीपक भी जलते-जलते बुझ जाय। दीपक बनकर कब किसे शांति मिली है। जलता हुआ भी दीपक जलेगा, और बुझकर भी उसकी जलन धुएँ की ऐंठन बनकर निकलेगी। परंतु रानी! यह बताओ कि अपने प्राणों के साथ खेलकर किसी अपने के प्राणों के साथ भी खिलवाड़ क्यों करना चाहती हो?"

"तुम जिओ, और मेरे शेष जीवन की भी साँसें लेकर जिओ।" अंजना पुनः फफककर बेदम होकर गिरने लगी। देवकुमार ने सँभालकर उसे अपनी गोद में लिटा लिया। उनकी आँखें भी सजल थीं।

बहुत कुछ रो-रुला लेने और समझाने-बुझाने के बाद देवकुमार को सवेरे की सारी घटना का पता चल गया। अंजना ने बतलाया कि निर्मला किस तरह बदला लेने और अदावत पूरी करने के लिये उसे परेशान करती और नीचा दिखाना चाहती है। अब उसका इस घर में निर्वाह नहीं हो सकता। वह अब उस समय तक के लिये अमृतसर जाना ही चाहती है, जब तक निर्मला घर में है। फिर अम्माजी भी अपनी बेटी का ही पक्ष लेती हैं। वह निर्मला की जगह कैसे हो

सकती है। अगर देवकुमार को उसके साथ रहना ही है, तो वे खुद अमृतसर चले चलें।

देवकुमार ने पूछा—"क्या अमृतसर मे कोई ऐसा भी है, जिसे तुम मुझसे भी ज्यादा प्यार कर सकती हो?"

अजना चौंक उठी—"आप मुझ पर सदेह करते हैं? जिस दिन आप कोई बात अपनी आँखों से देख लें, आप मेरा सिर गर्दन से अलग कर दें। लेकिन अगर आप अमृतसर नहीं भेजना चाहते, तो कोई बात नहीं है। कल मरते, आज ही मर जाऊँगी। एक दिन मरना तो है ही।"

"मरना इतना सरल नहीं है रानी!"

"खैर, किसी दिन अर्थी ही इस घर से तुम्हें उठानी पड़ेगी।"

"हूँ।" और देवकुमार ने नि.श्वास छोड़ी। "परतु इस तरह तुम्हे अमृतसर नहीं भेज सकता। तुम मुझ पर आतक जमाना चाहती लेकिन तुम्हारा रग अब मुझ पर नहीं जम सकता। अपने घर को पराया घर समझनेवाली मूर्ख स्त्री! कुलच्छिणी!! कामचोर!!!"

"गाली मत दीजिए। मैंने ब्याह करके तुम्हारे हाथों अपने को बेंच नहीं दिया है। मैं तुम्हारे पैरों की जूती नहीं हूँ।" और अजना देवकुमार की गोद से उठ बैठी।

"मेरे पैरों की जूती नहीं है! तुम्हारी-जैसी स्त्री का कहीं पर भी मान नहीं हो सकता। जो पत्नी पति से जबान लड़ाती है, वह पत्नी और गृहलक्ष्मी होने योग्य कदापि नहीं।"

"नहीं हूँ, तो मुझे मार डालिए। मेरे अच्छे पति! लो, मेरा गला घोट दो।" और पागल-सी अजना ने गर्दन आगे बढ़ाकर अपने पति के दोनों हाथ पकड़कर अपनी गर्दन की ओर इसलिये खींचने शुरू कर दिए कि अपनी गर्दन उनके हाथों मे वह सौंप दे।

"मैं हत्यारा हूँ?" दाँत किटकिटाकर देवकुमार ने अपने हाथ

छुड़ाने की कोशिश की। न छुड़ा पाने पर कंधे पकड़ कर पलग पर अजना को ढकेल दिया। मुक्त होकर देवकुमार दरवाजे की ओर चले।

बाहर निकलते ही निर्मला उधर आती हुई मिली। भाई को अस्त-व्यस्त, उत्तेजित और मुँह चढाए देखकर वह हक्का-बक्का होकर रह गई—"भैया।" उसने फिर साहस करके पूछा—"भैया! कहाँ जा रहे हो?"

भैया ने कुछ न सुनी, और वह बाहर निकल गए। किशोरी रसोई घर में थी। उसे कुछ पता न था कि बहू-बेटे क्या कर रहे हैं।

निर्मला की आवाज सुनकर अजना सजग होकर अर्द्ध-निद्रावस्था में निमग्न होने का बहाना भरकर पड़ रही। निर्मला भीतर आई। देखा, भाभी करवट लिए सो रही हैं। सोचा—शायद नींद आ गई हो। परतु भैया तो अभी-अभी भीतर से निकलकर गए हैं। सवेरे जाग ही रही थीं ..अच्छा। तो फिर यह नींद भरने का स्वाँग किया जा रहा है। मेरी शिकायत की गई होगी, लेकिन भैया भी इतने बुद्धू नहीं हैं, जो यह न समझ सके हों कि दोष किसका है। काम सभी को प्यारा है, चाम किसी को नहीं। कथा भकझोरते हुए निर्मला ने पुकारा—"भाभी।" भाभी ने जैसे कुछ भी नहीं सुना। निर्मला ने फिर आवाज दी—"भाभी। उठती क्यों नहीं? भैया नाराज होकर घर से चले गए हैं?"

अजना को अपना स्वाँग खत्म करना पड़ा। सीधे होकर मिचमिचाते हुए उसने अधखिली कली-सी आँखें खोल दीं। न सुनते हुए जैसे उसने पूछा—"क्या कहा बीबीजी?"

"यहाँ भैया आए थे?"

"मुझे तो नहीं मालूम। मैं तो सो रही थी।"

"भाभी। निर्मला को नई हवा का रुख मत बतलाओ। अपने

भाई-भाभियों को ही चौके चार पढा लो, सो बहुत है। सच बताओ कि भैया इतने गुस्मे मे तेजी से बाहर क्यों निकल गए हैं? गुस्से म इन्सान कुछ कर बैठे, तो? फिर जन्म-भर को पछताना ही शेष रह जायगा।"

"पछताऊँगी मैं न कि तुम? मुझे तुम्हारी सीख की जरूरत नहीं है। मै अपना मार्ग स्वय भी सोच सकती हूँ। न तुममे कम पढी-लिखी हूँ, और न अक्ल में तुमसे कम। ......बीबीजी, अगर तुम मेरा भला चाहती हो, तो हर उलटी-सीधी बात का दोष मुझ पर लगाना छोड़ दो।"

"हूँ, अगर वश चलता भाभी, तो तुम लोग मुझे यहाँ टिकने न दो। मैं भैया को ढूँढने जा रही हूँ, लेकिन याद रक्खो, तुम्हारा पतन बहुत निकट है भाभी!" और निर्मला चल दी द्वार की ओर।

"मैं तुम्हारे शापो से नहीं डरती, बीबीजी!" और अ जना फफककर फिर रो पड़ी, और करवट लेकर बहुत देर तक रोती रही।

.

[३]

"अब एक हफ्ते में चंगे हो जाओगे शमशेर भैया !" रजनी ने मोमबत्ती पहाड़ी दीवाल के एक उभरे हुए भाग पर जमाकर पास ही पुआल पर बैठते हुए घायल ले० शमशेरसिंह को आश्वासन दिया। रजनी पोर्ट डिक्सन-शिविर के अस्पताल की एक पंजाबिन नर्स है, और घायल, बंदी सैनिकों की परिचर्या-उपचार के लिये नियुक्त है। वह अपने देश की आज़ादी के लिये लड़ने को तैयार करने के लिये घायल सैनिकों की जी-जान से सेवा करती है। उसके सौजन्य, उसकी सरलता और उसकी कार्य तत्परता से सभी प्रसन्न रहते हैं, और घायल युद्धबंदियों पर इसका ऐसा प्रभाव पड़ता है कि अच्छे होते ही वे अपनी गुलामी का तौक फेंककर शीघ्र बननेवाली आजाद हिंद फौज में शामिल होने को तैयार हो जाते हैं।

"कौन ? रजनी बीबी ! आओ, बैठो। मैं तो ऐसा अनुभव कर रहा हूँ कि तुमने ही दिन-रात एक करके जैसे मुझे नवजीवन दिया है। शमशेर ने उत्तर दिया।

अँधेरी रात है। काले-काले बादलों के बीच-बीच बिरले ही तारे झाँक रहे हैं। रात का प्रथम प्रहर है। मोमबत्ती के प्रकाश में पुआल के बिछौने पर पड़ा है शमशेर, और पास ही बाएँ हाथ के बल पैर फैलाए बैठी है रजनी। वह शमशेर के सिर, बाँहों और पैरों में बँधी हुई पट्टियों की ओर देख रही है।

"हाँ, शमशेर भैया ! मैं ही जैसे ईश्वर हूँ न। ये सब बातें छोड़ो।

भला, यह तो बताओ कि…" आँखें मिचकाती हुई रजनी अपने अधर पर एक उँगली रखकर कुछ सोचने लगी।

"कि क्या, रजनी?"

"यही कि भाभीजी की भी कभी कुछ याद आती है क्या?" रजनी मुस्किरा पड़ी।

शमशेर ने उच्छ्वास लेकर छोड़ते हुए कहा—"अच्छा होता, यदि तुम मुझे किसी की याद न दिलातीं। तुम जानती हो रजनी, मैं यहाँ तो दुश्मनों का कैदी हूँ। यहाँ से छूटना "

"दुश्मनों के क़ैदी! शमशेर भैया! जिन्हें तुम दुश्मन समझ रहे हो, आज वे हमारे मित्र हैं। हमारा-तुम्हारा दोनो का एक ही दुश्मन है—और वह है पश्चिम का गोरी चमड़ी का कुत्ता—अँगरेज। तुम अँगरेज के कहने पर हमें गद्दार, जापानियों का टुकड़खोर, गुलाम और विद्रोही कहते हो—तुम वास्तविक सत्य को अपनी आँखों से नहीं देखना चाहते। मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ भैया कि जनरल मोहनसिंह अँगरेजों की जगह जापानियों को मातृभूमि का शासक बनाने के लिये उन्हें भारत की ओर नहीं ले जा रहे हैं। यदि आवश्यकता हुई, तो जापानियों के वादाखिलाफी करने पर सारी आजाद हिंद फौज उनके विरुद्ध मोर्चा लगा देगी। परंतु आज उसे संगठित, अनुशासित और बलिदानी सैनिकों की जरूरत है।…यदि हम स्त्रियों को भी मोर्चे पर जाने की अनुमति दे दी जाय, तो हम गोरी फौज और किराए के टट्टुओं को बतला देतीं कि आज तुम्हारा आजाद भारत के सिपाहियों से मुकाबला है। पीछे क्यों हटते हो, चूड़ियाँ पहनो, और जाओ, घरों में बैठो।" रजनी उत्तेजित थी। उसकी साँसें तेज हो चलीं।

शमशेर के उद्देश्य-हीन सैनिक जीवन और रजनी के देश-भक्ति पूर्ण उद्बोधन में टक्कर होने से शमशेर का मस्तिष्क घबराकर अपने

अतीत का सिंहावलोकन करने लगा। उसकी पंजाबी रेजिमेंट पहली बार मांडले के मोर्चे पर लड़ने आई थी। शहर के बाहर इरावदी के तट पर वायु-वेग से बढ़ती हुई जापानी सेना का प्रतिरोध करने के लिये उसकी रेजिमेंट को मोर्चे पर तैनात कर दिया गया था। रेजिमेंट पीछे न भाग खड़ी हो, इसलिए गोरी पलटन पीछे खड़ी कर दी गई थी। अगर एक भी काला सिपाही पीछे लौटता, तो उसे गोली मार दी जाती। जापानी सेना इरावदी के उस पार तक पहुँच गई थी। दोनों ओर से गोला-बारी शुरू हो गई। आकाश में बमबारों और लड़ाकू जहाजों का युद्ध होता और हर्र-हर्र, घर्र-घर्र के बीच भीषण विस्फोट-ध्वनि के साथ इरावदी और उसके दोनों पार की खाइयों और पहाड़ी शरण-गृहों पर गोले फटते। स्थल-सेनाएँ अपनी विमान-वेधक तोपों से उड़ते हुए विमानों पर निशाना लगातीं, और कभी एक दूसरे की गोला-बारी का उत्तर गोला-बारी से देतीं। मई-जून की चिलचिलाती हुई धूप में फटे हुए बमों का धुआँ बादल बनकर छा जाता। शमशेर जिस रेजिमेंट की एक टुकड़ी का कमांडिंग अफसर था, उसके अधिकांश सिपाही मारे गए। जापानी फौजी इंजीनियरों ने इधर पुल बनाकर तैयार कर दिया। इरावदी इन दिनों कम चौड़ी थी। पुल पर से जापानी टैंक इस पार उतरने लगे।

गोरी पलटन दुम दबाकर पीछे की ओर भाग चली। उसे जैसे अपने काले सहयोगियों के मरने-जीने या पकड़े जाने की कोई चिंता न थी। कुछ बचे-बचाए काले सिपाही भी भाग खड़े हुए। शमशेर की खाई के पास एक बम फटने से वह काफी घायल हो गया, और भाग न सका। भागना जैसे उसके सिद्धांत की हत्या करना था। यदि वह घायल न होता, तो दो-एक जापानी टैंकों के पहियों के पास पलीता लगाकर सुरंगें रख देता, और वे पल-भर में उड़ जाते, या उलट जाते। उसे बताया गया था कि जापानी बर्बर होते हैं।

हत्यारे हैं, डाकू हैं। वे हिंदुस्थान को गुलाम बनाना चाहते हैं। शमशेर ने पहले कभी यह समझने की कोशिश न की थी कि अँगरेजों के संबंध में भी क्या ये ही बातें लागू नहीं होतीं ?

शमशेर ने सोचा कि रेडक्रास की एंबुलेंस घायलों को उठाने आती होगी। उसे तीव्र पिपासा सता रही है, उसके कंठ सूख रहे हैं, मौत उसके सिर पर नाच रहा है, इन सबसे उसे भी त्राण मिलेगा। साँझ हो गई। खून उसके सिर से निकल रहा था। वह अब बेहोश हो चला।

कई घंटे रात बीते जब उसे कुछ-कुछ चेतना हुई, उसने अपने को कुछ अन्य हिंदुस्थानी युद्धबंदियों के साथ एक फौजी ट्रक में पाया। ट्रक पोंग की पहाड़ी की ओर जा रही थी। उसके सिर, बाँहों और जाँघों में कसकर पीड़ा हो रही थी। बगल के सैनिक भी घायल थे और उनकी प्राथमिक चिकित्सा की जा चुकी थी।

पानी माँगने पर एक भारतीय सैनिक ने उसे पानी पिलाया [illegible] की चेतना कुछ और सजग हुई। उसने सोचा कि एंबुलेंस की जगह मुझे इस फौजी ट्रक में क्यों ले जाया जा रहा है ? संभव है कोई एंबुलेंस न खाली रही हो। लेकिन ले जाया मैं किधर जा रहा हूँ ? आधी रात हो गई दिखती है, अभी तक माडले नहीं पहुँचा। परंतु कुछ पूछने की इच्छा करके भी वह बोल न सका उसे बेहोशी फिर आ गई। उसे क्या मालूम था कि वह जापानियों का युद्ध-बंदी है।

दूसरे दिन काफी धूप चढ आने पर जब शमशेर की फिर आँख खुली, तो उसने अपने को एक अस्थायी युद्ध-बंदी-शिविर में पाया पास-पड़ोस के दूसरे युद्ध-बंदियों से उसे पता चला कि मैं जापानियों का कैदी हूँ, और यहाँ से हम लोगों को रंगून होते हुए मलाया पोर्ट डिक्सन-शिविर भेजा जायगा। कई दिनों की यात्रा के बा

शमशेर युद्धबंदियों के साथ पोर्ट डिक्सन पहुँचा। घायलों को अस्पताल में भर्ती कर दिया गया। थोड़ी देर बाद रजनी सभी कैदियों का निरीक्षण करती हुई एक अन्य सहयोगिनी नर्स के साथ शमशेर की ओर आई।

शमशेर ने उसे इशारे से नजदीक बुलाकर पूछा—"क्या हम सब लोग दुश्मनों के कैदी हैं? और, तुम लोग हिंदुस्थानी होकर दुश्मनों की गुलामी कर रही हो?"

रजनी और उसकी सहयोगिनी हँस पड़ी। रजनी ने कहा—"कैदी! तुम दुश्मनों के कैदी नहीं, कल को आजाद होनेवाले हिंदुस्थान के लिये अपने प्राणों का बलिदान करनेवाले वीर सिपाही हो। तुम आज से अँगरेजों के गुलाम नहीं। हम-तुम सभी आजाद हिंद की प्रजा हैं। हमें मिलकर और जनरल मोहनसिंह की छत्रच्छाया में संगठित होकर जालिम भेड़ियों के पंजे से अपनी मातृभूमि को छोड़ाना है। यहाँ घायलों की एक समान चिकित्सा और तीमारदारी होती है। यहाँ मित्र और दुश्मन, काले और गोरे, हिंदू और मुसलमान का कोई भेद नहीं माना जाता। तुम्हारा नाम, भाई?"

"कुँवर शमशेरसिंह।"

"शमशेर भैया! आज से तुम अपने को आजाद समझो, और आजाद होकर युगों से चली आनेवाली अपनी मानसिक दासता को दूर करो।"

दोनों चली गईं।

तब से लगभग दो महीने बीत गए। वह अच्छा हो रहा है। रजनी ने उसमें नया उद्बोधन दिया है। परंतु वह कभी बहुत देर तक उससे बातें नहीं करती। उसे बहुत से मरीज़ों और घायलों की परिचर्या करनी होती है। समय पर दवा पिला जाती है। दूध या भोजन भी कभी-कभी पहुँचा देती है।......शमशेर को इतने दिनों में

सेनापति मोहनसिंह और प्रथम आज़ाद हिंद सेना के सगठन, राजा महेंद्रप्रताप के भगीरथ प्रयत्नो एव श्रीरासविहारी बोस और बैंकाक सम्मेलन मे स्वतत्र भारत तथा आजाद हिंद सेना की स्थापना के उनके निश्चय और आजाद हिंद लीग की स्थापना के बारे मे बहुत कुछ मालूम हो गया है। परतु गुलाम मा के हाथ की पी हुई घूटी का असर अभी भी बाक़ी है, और वह अपनी आँखो मित्रराष्ट्रो की पराजय देखता हुआ भी यही सोचता है कि धर्म उनके पक्ष मे है, क्योकि वे प्रजातत्र और विश्व की 'चार स्वतंत्रताओं' के लिये दुश्मनो से लड़ रहे हैं। उसे अभी भी यही विश्वास है कि अगर अँगरेज इस बार जीत गए, तो अब को हिंदुस्थान को वे आजाद जरूर कर देंगे। जापान अगर चढ आया, तो दो सदियो के लिये हिंदुस्थान अपनी आवाज तक न उठा सकेगा। हिंदुस्थान की सस्कृति, साहित्य, धर्म और शिक्षा, कला और विज्ञान, सब उठ जायँगे। .....फिर रजनी कहती है कि मैं आजाद हूँ, लेकिन जापानी पहरेदार हमेशा हम युद्धबदियो पर कड़ी निगाह रखते हैं। ..मैं आजाद नही हूँ,...मै दुश्मनो का कैदी हूँ।

लेकिन जैसे रजनी की आज की ललकार ने उसके पुराने विचारो को धराशायी कर दिया था। उसे देशभक्ति के आगे अपनी हार का स्पष्ट अनुभव होने लगा। उसे आश्चर्य-सा हो रहा था कि गुलाम भारत की एक 'अबला' स्वतत्रता की साँस लेकर किस प्रकार वीरांगना, दुर्गा और चडी बन सकती है। रजनी की ललकार प्रत्येक पुरुष के नाम खुली चुनौती है। वह आज फिर से अपने शरीर मे उफनते रक्त के सचार का अनुभव कर रहा है। आज उसे पहली बार मालूम हो रहा है कि आजादी कितनी आकर्षक, मदोन्मादक और [illegible] है। मन मे आया कि वह कह दे— रजनी! अब और [illegible] करो। [illegible] और उसके साथ गुलामी से मुक्त होनेवाले

दूसरे साथियों के रहते स्त्रियों को रण-क्षेत्र में जाने की जरूरत नहीं।"
परंतु रजनी कुछ देर चुप रहकर प्रकृतिस्थ हो गई थी, और उठकर वह चलने को हुई। शमशेर कुछ कहे कि रजनी यह कहकर कि "भैया! भाभी तुम्हारा तभी स्वागत करेंगी, जब तुम आजाद हिंद के सच्चे सिपाही बनकर मातृभूमि की ओर क़दम उठाओगे।" कुछ मुस्किराई, और चल दी।

शमशेर भी मुस्किरा उठा।

अमर की स्मृति ने उसके मानस-जलधि में एक भूकंप उठा दिया। मन में आया कि काश मैं पक्षी होता, तो उड़कर अमर की सूनी शय्या पर उतर जाता। मेरी प्रेयसी इन ऊँची-ऊँची पहाड़ियों, घने जंगलों और हरी-भरी घाटियों से बहुत दूर—क्षितिज के उस पार विजन विश्व के किसी एक कोने में बैठी मेरी प्रतीक्षा कर रही होगी। कोकनद-से फूले गुलाबी गालों पर उसकी कजराली, उनींदी आँखें आग-कणों के समान दो बूँद आँसू टपका देती होंगी। वह मेरे न आने पर और मेरा कोई समाचार भी न पाकर व्याकुल हो उठती होगी। झंझावात के पत्तों के समान उसके अंगूरी ओठ दर्दीली आहों से काँप उठते होंगे।

काश, आज मैं पक्षी होता।

ईश्वर करे कि उसे मेरे घायल होने का संदेश किसी ने न पहुँचाया हो। अपनी कठोर पीड़ाओं में किसी सुकुमारी का अंतस्तल दुखाना उचित नहीं। वह दिन-रात मेरी कुशल मनाती होगी, और ईश्वर से प्रार्थना करती होगी कि जल्दी युद्ध समाप्त हो, और मैं उसे दर्शन देने (या उसके दर्शन लेने) शीघ्र घर लौटूँ।

परंतु आज मैं देशोद्धार का महाव्रत लेता हूँ। यदि मैं देश-द्रोही बनकर स्वदेश लौटूँ, तो अमर रानी! तुम मेरे स्वागत को आरती न सँजाना। मैं तुम्हारे सुहाग का शृंगार जरूर हूँ, परंतु मेरे

नन्हे-से प्राण मातृभूमि की भी तो धरोहर हैं। क्षुद्र स्वार्थों के लिये हमें उनकी रक्षा का अधिकार नहीं है।

अतीत का एक सपना समझकर भूल जाना। उस दिन विदाई इसलिये ली थी कि हम-तुम फिर मिलेंगे। परन्तु अब तुम मेरी प्रतीक्षा न करना। मातृभूमि का उद्धार बिना बलिदान के संभव नहीं। अभी तक मैं किराए का टट्टू बनकर विश्व के सर्वनाश और मातृभूमि की गुलामी के बंधन को दृढ करने का साधन बनता रहा। परन्तु आज मैं मोह-निद्रा से जाग उठा हूँ। अभी तक मैं मौत के डर से लड़ता रहा। परन्तु अब मैं देश की स्वतंत्रता के लिये मृत्यु से भी लड़ने को प्रस्तुत हूँ। भारत के बंधन-मुक्त होने तक अब हमारा युद्ध समाप्त न होगा।

शमशेर की मुट्ठियाँ बँध गई थीं। श्वास-प्रश्वास तीव्र हो चले थे। बाहर मेघों की रिमझिम लगी हुई थी। पृथ्वी की सोंधी महक और वन्य फूलों के सौरभ से लदी हुई बरसाती हवा के झोंके ने उसे निद्रा की गोद में थपकियाँ देकर सुला दिया। शमशेर आजाद हिंदुस्थान में पहुँचकर अपनी प्रेयसी के स्वप्न देखने लगा।

× × ×

अमर के हृदय में प्रेम और देशभक्ति का अंतर्द्वंद्व चला करता है। प्रेम की मीठी कल्पनाएँ और अतीत के स्वप्न उसके अंतस्तल में गुदगुदी पैदा करते हैं, परन्तु तत्काल प्रियतम की दूरी उसके उल्लसित प्राणों को कठोर निराशा से अभिभूत कर देती है। जब तारे बादल-बालों के अंचल में मुँह छिपाकर रात को रोने लगते हैं, तभी दालान में बिछौना पर पड़ी गुमसुम अमर सिसक उठा करती है। दिन-भर अपने दिल का दर्द छिपाए पास-पड़ोसिनों और सहेलियों से हँसा-बोला करती है। कुछ समय से एक [illegible] मन से वह चरखा भी कातती है। चरखा कातते

समय उसे बड़ी शांति मिलती है। वह अपनी दृष्टि पौनी से निकलते हुए सूत के साथ एक कर देती है। कभी-कभी जैसे वह दार्शनिक योग की अवस्था में पहुँच जाती है, और सोचती है—जब तक यह पौनी है, सूत निकला करेगा, और चरखा चलना बंद न होगा। किसी की प्रेरणा से चरखे को चलाना ही होगा। इसे चलाने के साधन आप ही प्रस्तुत होते जायँगे। चरखा ही सत्य है।

अमर दिन-रात अपने को किसी-न-किसी काम में व्यस्त रखती है, जिससे उसे किसी की स्मृति के आने से दुखी होने का मौक़ा ही न मिले। वह अब अपने पति के बारे में और भी कुछ इसलिये नहीं सोचना चाहती कि वह आततायी और शासक अँगरेज की ओर से लड़ने गए हैं। कांग्रेस युद्ध-भर्ती का विरोध करती है—वह सब प्रकार के हिंसात्मक युद्धों का विरोध करती है। परंतु उन्होंने देश की आवाज की अवहेलना की है। देश के प्रत्येक नागरिक में संस्थापित देश के विश्वास का उन्होंने प्रवंचना दी है। यदि उन्हें अस्त्र उठाने ही थे, तो इस अवसर से लाभ उठाकर, अपनी छाती पर चढ़कर बैठे हुए दुश्मन के विरुद्ध उन अस्त्रों को उन्होंने क्यों नहीं उठाया? विश्व के ध्वंस की इकाई बनने से अच्छा देश के उद्धार के लिये प्राणों की आहुति क्या नहीं दी जाती? परंतु आज हम गुलाम हैं। गुलामों की चेतना पर इन धूर्तों ने पहले से ही अर्गला लगा रक्खी है। हम सत्-असत, लाभ-हानि और हार-जीत का कोई ज्ञान नहीं रहा। आज बर्मा के हमारे भाई आजाद हो चुके हैं, परंतु हम गुलाम होकर किसी को गुलामी से मुक्त होते हुए नहीं देख सकते।

पति के विरुद्ध अमर का मन घृणा से भर उठता। परंतु उसे यह सोचकर संतोष होता कि चलो, अब वह जबर्दस्ती देश-द्रोह से विरत किए जा चुके हैं। परंतु उन पर जाने अब क्या बीत रही

होगी ? यह सोचकर उसका कठोर हृदय द्रवित हो जाता और वह एकान्त में छिपकर घंटा रोती।

अब कोई रास्ता भी न था कि वह उन्हें पत्र लिखकर जापानियों की क़ैद में उन तक पहुँचा सकती। उसने सोचा कि मैं उन्हें लिखूँ कि तुम सब क़ैद हुए हिंदुस्थानी सैनिकों और नागरिकों की एक फौज बनाकर जापानियों के साथ आगे बढ़ो। जापानी आख़िर एशियावासी हैं। वे तुम्हारी मदद जरूर करेंगे, क्योंकि तुम्हारे और उनके दोनों के दुश्मन एक हैं—अँगरेज !

परंतु वह विवश थी। बर्मा से भारत का डाक, तार और टेलीफ़ोन-संबंध विच्छेद हो चुका था। फिर उसे इसमें भी संदेह था कि ऐसा पत्र सेंसर की गृद्ध-दृष्टि से बचकर बिना पकड़े गए अग्रगामी ब्रिटिश सदर मुक़ाम तक भी पहुँच जायगा। फिर वह तो 'शत्रु-क्षेत्र' में पहुँच गए हैं। ..यदि पत्र पकड़ा गया, तो फिर मेरी ख़ैरियत नहीं है। परंतु जब पत्र उन तक पहुँच ही नहीं सकता, तो फिर ख़तरा भी मैं क्या मोल लूँ ?

अमर हाथ मलकर रह जाती।

फिर वह सोचती कि मैंने उन्हें फौज में जाने ही क्यों दिया ? पेट-आदियों की उद्देश्य-हीन टुकड़खोर फौज ! झूठी प्रतिष्ठा और पैसे के लिये ही तो उन्होंने अपने तन, मन और विवेक को बेच दिया। धन्य हैं वे भारतीय सैनिक, जो गोरे कुत्तों की ठोकरें खा, मन-मान मर और अपमान का विष पीकर भी अपने स्वाभिमान को नहीं पहचानते। अनुशासन की लकड़ी से हाँके जाकर अपनी भेड़ की नीति से एक दूसरे के पीछे मौत के कुएँ में गिरते चले जाते हैं। .. ..क्या ऐसे सैनिकावस्थान भारतीयों का देश कभी आजाद हो सकेगा ?

... अपने मधुर सपने पर झुँझलाहट हुई। वह रिटा-

यर्ड हो चुके हैं, और काले बाल पककर सफेद हो गए हैं, परंतु मान-प्रतिष्ठा की भूख, सरकार के कृपापात्र बने रहने की चाह और पैसों का मोह जो अभी नहीं मिटा। और, कुछ नहीं, तो लाहौर से नए रँगरूटों की भर्ती कराने का ही ठेका ले लिया। भर्ती-अफसर बन बैठे। इस अनुपम राज्य-भक्ति के लिये सम्राट् की सरकार ने उन्हें 'सर' की खिताब दे दी है। अनेकों सरों का रक्त चढ़वा देने के पुरस्कार में एक छूछा और कागजी 'सर' पाकर गवर्नर और ऊँचे सरकारी अफसरों को एक लाख रुपए की गार्डेन पार्टी दी गई थी। ५०,०००) की थैली युद्ध-चंदे के लिये गवर्नर को दी गई, सो अलग रही।

यह सब विनाश-लीला हुई, सो हुई, परंतु अपने प्यारे पुत्र को भी युद्ध की अग्नि में क्यों झोंक दिया? उनके लिये क्या किसी और नौकरी का घाटा था? उन्होंने तो फिर अपने और लड़कों को फौज में क्यों नहीं भर्ती कराया? उनके भर्ती न होने से क्या सरकार बहादुर सर साहब से नाराज हो जाती? या उनका 'सर' का खिताब वापस छीन लेती?

मैं यह नहीं चाहती कि मनुष्य आसन्न युद्ध से भयभीत हो। धर्म के लिये सत्य और न्याय के लिये भगवान् कृष्ण का भी कहना है कि 'युद्धस्व विगतज्वर'। परंतु अहंकार और लाभ की तृप्ति के लिये, रक्त और लोथों से पृथ्वी को पाटकर आँखों की प्यास बुझाने के लिये एवं स्वार्थों और प्रतिशोध के लिये हथगोला मुट्ठी में लेकर मोटर-साइकिलों पर या टैंकों पर सवार रहना, दिन-रात विमान-वेधक तोपों के पास शत्रु के विमानों को रेडार में खोज करते हुए खड़े रहना और अपनी सुरक्षा के लिये अनंत समुद्र में सुरंगें बिछाते फिरना, यह कहाँ की मानवता है? ..यदि युद्ध करना ही है, तो वह सत् का असत् के विरुद्ध, धर्म का अधर्म के विरुद्ध और न्याय का अन्याय के विरुद्ध होना चाहिए। परंतु ..

अमर की विचार-धारा ठोकर खाकर रुकी, और उसने करवट बदली। एक निःश्वास छोड़कर उसने आकाश की ओर देखा। आज बादल साफ़ थे, और तारे चारो ओर छिटके हुए थे। सप्तर्षियों की ओर देखकर उसने यह अनुमान लगाया कि अब अर्द्धरात्रि बीत चुकी है।

---

[४]

जिस आम की डाल पर अमर का झूला पड़ा हुआ है, उसकी पृथ्वी पर उभरी हुई एक जड़ पर 'देवकुमार' बैठे हैं। अमराई गाँव से लगभग पौन मील की दूरी पर है।

देवकुमार सर्राटे के साथ एकतान अमराई तक चले आने से कुछ हाँफ भी रहे हैं, परन्तु आवेग, उत्तेजना, क्रोध, घृणा, तटस्थता और उन्माद से वह इतने अभिभूत थे कि इस समय उन्हें शारीरिक श्रम और बहिर्मुख संसार का कोई ज्ञान न रहा था। धूप में गर्मी होने के कारण खद्दर के कुरते की पीठ, बगलें, और लगभग सारा शरीर पसीने से भीग उठा था।

देवकुमार का हृदय रोया-रोया पड़ रहा था। उनकी आँखें भीगी-भीगी पड़ रही थीं। उन्हें जैसे यह अनुभव हुआ कि मैंने जो स्वप्नों का प्रासाद अपने जीवन के खँडहर में बनाया था, वह अब गिर चुका है। मेरे नंदन-कानन में अजना दावानल बनकर पैठ चुकी है। वसंत की बहार अब कभी आने को नहीं है। प्राणों की कोयल अब कभी अपनी कूक न सुनाएगी।

स्वप्निल यौवन के सुनहले क्षण अब यों ही बीत जायँगे। कौमार और यौवन की वय:संधि की गुदगुदी अब अतीत के इतिहास में जुड़ जायगी। किसी ने एक भुलावा दिया था कि चाँदनी रात तुम्हारे पैरों पर लोटकर तुम्हारा मनुहार करेगी। परंतु अब बरसाती कुहू घटाटोप अंधकार लेकर मेरे जीवन के नभ में छा गई है।

कितनी भयानक है वह। खीझ, झुँझलाहट, क्रोध और नि

से एक पत्नी पति से यह कह सकती है कि लो, तुम मेरा गला घोंट दो। फिर मेरे हाथों में अपनी गर्दन देने लगी। हत्या . . ! एक 'अबला' कही जानेवाली स्त्री की हत्या !! स्वयं अपनी बलि देकर पति के भी प्राण लेने का कुचक्र !!! क़ानून हत्या के बदले में हत्या करने से क्या कभी चूका है ?

तो फिर वह मुझे न जीने देगी। भोजन में विष दे सकती है, सोते में छाती में छुरी भोंक सकती है। उसे मुझमें और मेरे प्रेम में विश्वास नहीं है। और, मेरा भी अब उस पर से विश्वास उठता जा रहा है।

दिन-रात यह गृह-कलह क्यों ? निर्मला से लड़ाई। मा से लड़ाई ! जैसे कोई वे अपने हैं ही नहीं। काम करने को कोई कह दे, तो ऐसा लगता है, जैसे तीर। चक्की-चूल्हे का काम तो दूर रहा, एक दिन मैं सीढ़ियों पर से फिसलकर गिर पड़ा, तो यह भी न हुआ कि सहानुभूति तो कुछ दिखा दे। कहती क्या है—"अच्छा हुआ ! हाथ-पैर नहीं टूटे, यही ख़ैरियत हुई।" मेरे चूतरों में बड़े ज़ोरों से लग गई थी, और घुटने छिल गए थे। ऐसा क्रोध आया कि गालों पर कसकर एक चपत मार दूँ। दाबना-मलना तो दूर रहा, सहानुभूति की भावना भी मन में न आई, और उलटे जले पर नमक छिड़क रही है। यह पत्नी है, या पत्नी की प्रेत-छाया !

आखिर मुझसे भी कटे-कटे रहने का कारण क्या है ? अवश्य पीहर में किसी से प्रेम करती होगी, जो उसके बिना उसे यहाँ अच्छा ही नहीं लगता। मेरे प्यार-मनुहार में, मेरे लाड़-चाव में और मेरे हास में उसे उल्लास का अनुभव नहीं होता। धीरे-धीरे उसने मुझसे दूर-दूर रहकर वासना कम कर दिया है। जब भी पास बैठो, ओठों पर सिसकियाँ और आँखों में आँसू भरे रहते हैं। वह कहती है कि इनने मेरी जिंदगी बरबाद कर दी है। मेरी आशा-

इच्छाओं पर तुषार डाल दिया है। मैं इस बार कैसा दिल लेकर फिर आई थी, लेकिन अब मन की मन में ही चली जायगी। मेरे लिये कोई खुशी शेष नहीं रह गई है। दिन-रात मैं यही ईश्वर से मनाती हूँ कि तू जल्दी मेरी मौत भेज।

मैंने कहा—"मौत ऐसे नहीं आती रानीजी।" तो चिढ़कर बोली—"देख लेना, किसी दिन मैं मरी हुई ही मिलूँगी। मुझे नहीं मालूम था कि इस तरह तुम मेरी मिट्टी पलीद करोगे।" और वह रोती-रोती मूर्च्छित हो चली।

मेरे कारण किसी को इतना दुःख हो, तो मेरे रहने से ही क्या लाभ? क्या अच्छा होता, यदि मैं अकेला ही होता। दूसरे के घर आने के पहले ये लड़कियाँ वहाँ के वातावरण में घुल-मिलकर रहना सीखकर क्यों नहीं आतीं? उन्हें कौन यह बतला देता है कि रूठने से ही पति तुम्हारा मनुहार करेगा, और तुम उसे अपने वश में कर सकोगी? वे स्वयं तो किसी के बंधन में बँधना नहीं जानतीं, और दूसरों को अपने बंधन में, गुलामी में रखना चाहती हैं। वे स्वयं कभी न झुककर दूसरों को झुकाना चाहती हैं। उन्हें क्यों नहीं बताया गया कि किसी को अपने वश में करने के लिये स्वयं उसके वश में होने की आवश्यकता है। मान यदि तुम चाहती हो, तो औरों को मान देना भी सीखो। तुम बड़े घर की बेटी हो, उसकी लाज बचाना। उफ़! माता-पिता की भूल का परिणाम उनके दामाद को उठाना होगा।

पति पत्नी को सारे अधिकार सौंपने की शपथ लेता है, परन्तु आज की पत्नी लड़-झगड़कर ही, पोद्दर और अदालत के बल, पति से अपने अधिकारों को लेने में आनंद का अनुभव करती है। पुरुषवर्ग स्त्री के झूठे अधिकार-पत्र की रचना करके उसकी आर्थिक और पारिवारिक स्वतंत्रता का नारा लगा चुका है, तो उस नारे के गलत प्रमाणित

होने पर भी वह उसे अब संकोच-वश वापस लेने को तैयार नहीं। भूल को भूल कहकर माननेवाले बिरले ही गाबी होते हैं। सब कहीं स्त्री पुरुष से टक्कर ही लेने को तैयार है, उसका सहयोग करने को नहीं। यदि यही क्रम चलता रहा, तो विश्व का ध्वंस निकट है। विश्व की दो ही इकाइयाँ हैं—स्त्री और पुरुष। यदि स्त्री और पुरुष बराबर एक दूसरे का साथ न देकर संघर्ष की ओर ही उन्मुख होते रहे, तो यह पार्थिव जगत् ही नरक बन जायगा। नरक की खोज करने के लिये मनुष्य को अब और कहीं नहीं जाना है। तो फिर मुझे इस नरक से बाहर निकलना ही होगा ...तो फिर . ..

प्रभु ! तेरी इच्छा पूरी हो।

देवकुमार पेड़ पर चढ़ने लगा। डाल पर झूले की बँधी रस्सी खोलकर उसे अब अपने गले में फाँसी लगानी है। उसे एक लहर आई, और पल-भर में आत्महत्या करने का उसने निश्चय कर लिया।

वह डाल पर पहुँचकर रस्सी खोलने लगा। इसी बीच सतलज में स्नान करने को जाती हुई अमर उधर से आ निकली।

"देव भैया ! झूला क्या खोले डाल रहे हो ?"

देवकुमार पर दृष्टि पड़ते ही अमर ने रुककर पूछा—'सावन-भादों के दिन ही तो झूलने के होते हैं।"

देवकुमार का उन्माद छिन्न हो गया। परंतु, वह इतने असमंजस में पड़ गए कि अमर को क्या उत्तर दें, और क्या न दें।

निर्मला भी देवकुमार की खोज करती हुई इतने में ही आ पहुँची। अमर को देखते ही पूछा— देव भैया कहाँ चले गए हैं। तुमने देखा क्या अमर ? बोलो अमर ?"

"देव भैया के जाने क्या मन में आई कि हम लोगों का झूला ही खोले डाल रहे हैं।'

'झूला खोले डाल रहे हैं।' निर्मला की दृष्टि डाल पर बैठे

अपने मुँह पर पड़ी। वह पलक मारते ही सब कुछ समझ गई। सहसा उसके मुँह से निकल पड़ा—"आत्महत्या।"

"आत्महत्या!" अमर ने चौंककर, घबराकर, स्तंभित होकर दुहराया।

"उतरो भैया! पेड़ से नीचे उतरो। भाभी तुम्हें बुला रही हैं।"

"भाभी से कह दो अपनी कि भैया अब नहीं लौटेंगे।" देवकुमार अनमने-से होकर आम की एक ऊपरी फुनगी पर बैठी एक चिड़िया की ओर देखने लगे। आवेश अभी नहीं उतरा था, परंतु आत्महत्या करने के पूर्व की उन्माद-दशा के बहुत कुछ शांत हो जाने पर वह अपने निश्चय में कमजोर हो गए थे। मृत्यु की कल्पना पुनः भयानक रूप धारण कर उनकी आँखों में नाचने लगी।

"देव भैया!" अमर ने मोटी आवाज में कहा—"अब तुम्हें क्या हो रहा है? नीचे उतरो। तुम तो आत्महत्या को कायरों की मौत मानते हो? उस दिन तुमने कहा था कि देश को प्रत्येक स्त्री-पुरुष के बलिदान और त्याग की जरूरत है। तुम्हें भी देश के उद्धार के लिये अपने को सुरक्षित रखना होगा। तुम्हारे प्राण तुम्हारी और भाभी की धरोहर नहीं, वे देश की धरोहर हैं। देश को जिस समय तुम्हारे-जैसे होनहारों की जरूरत है, उस समय तुम उसे धोखा देकर कहीं नहीं जा सकते, चलो, उतरो नीचे। अपनी वृद्ध माँ और निर्मला जीजी की ओर भी तो देखो।"

"अच्छा, तुम सब लोग चलो, मैं अभी आता हूँ।" देवकुमार ने उत्तर दिया। मन में वह सोच रहा था कि इन लोगों ने मुझे मरने से रोककर बुरा किया। मैं उसे न भेजने का निश्चय कर चुका हूँ, और वह नित्य नए स्वाँग और कुचक्र भरेगी। न स्वयं जीएगी, और न किसी को जीने देगी। काश मैं एक बार ही मरके दुःख से छुट्टी पा सका होता। परंतु .. ..लेकिन देवकुमार का माथा भन्ना उठा।

लेकिन मैं ऐसे नहीं जाऊँगी। मैं सतलज की ओर जा रही थी, परंतु नहाने न जाकर घर तक तुम्हें पहुँचाने का दायित्व मुझ पर आ पड़ा है, देव भैया।" अमर ने तर्क रक्खे।

निर्मला राहत पाने की निगाह से कभी अमर के मुँह की ओर देखती और कभी अपने भैया की ओर। देवकुमार अपने मन की बात किसी पर प्रकट नहीं होने देना चाहते थे। प्रकृतिस्थ होकर नीचे उतर आए। बोले—"अमर! मैं निर्मला के साथ घर चला जाऊँगा। आत्महत्या-जैसी चीज का मेरा कोई इरादा नहीं था। मैं तुम लोगों का झूला ठीक से बाँध रहा था। झूलते-झूलते रस्सी कट गई थी।"

निर्मला समझ गई कि झेंप मिटाने के लिये भैया बहाना कर रहे हैं, परन्तु वह चुप रही। अपने घर का भेद वह भी नहीं चाहती कि किसी दूसरे पर प्रकट हो।

अमर को हँसी सूझी। बोली—"मालूम होता है कि भाभी साहबा ने हुक्म दिया है कि जाकर झूला ठीक कर आओ। मैं भी झूलूँगी। क्यों देव भैया?" और वह अपनी सरल हँसी के साथ मुस्करा पड़ी।

देवकुमार और निर्मला दोनो फीकी मुस्किराहट के साथ खिल पड़े।

"जैसा चाहे, तुम समझ लो।" देवकुमार बोले—"अमर, जाओ, नहा आओ, मैं चला जाऊँगा। तुम्हें क्यों नहाने से रोकूँ? इच्छा तो मेरी भी थी कि मैं भी नहाने चलता. लेकिन, खैर! तुम जाओ।"

"सीधे घर जाना देव भैया। भाभी ने बुलवा भेजा है।" मुस्किराती और झूमती हुई अमर सतलज की ओर चल पड़ी।

देवकुमार ने मुस्किराते हुए उत्तर दिया—"हाँ, हाँ, तुम निश्चिन्त रहो मैं सीधे घर ही जाऊँगा।"

देवकुमार निर्मला के साथ मुँह लटकाए घर की ओर चल दिए।

रास्ते में निर्मला समझाने लगी—"कहीं औरत के पीछे जान दी जाती है भैया! पत्नी बनकर भी लड़कियों का बचपना छूटते-छूटते ही छूटता है। जहाँ दो बरतन होते हैं, खुड़क ही जाया करते हैं। समझे?" वह मुस्किरा पड़ी।

देवकुमार ने मुस्किराते हुए उत्तर दिया—"लेकिन मैं तो बरतन खुड़काने जाता नहीं। बरतन खुड़कवा देना तो तुम्हीं लोगों का ही काम है।"

"हो सकता है भैया। क्योंकि निर्मला को इसी बात की तो रोटी खानी है। जब तक मैं तुम्हारे यहाँ की मेहमान हूँ, तुम और भाभी चाहे कुछ भी कह लो। लेकिन यह मैं जरूर कहूँगी कि मुझसे भाभी की गुलामी नहीं हो सकती। मैं जहाँ भी कूटूँ-पीसूँगी, मुझे खाने को तो मिल ही जायगा। लेकिन भाभी-जैसी औरतों को तो पेट पालने के लिये रूप की हाट में सौदा लगाने की ही जरूरत होगी।"

'निर्मला!' देवकुमार की भौंहें खिंच गईं। "क्या मैं अभी जीवित नहीं हूँ?'

"मेरा यह मतलब थोड़े न था।"

"तो फिर?"

"मैं तो भाभी की तुनक-मिजाजी, बहानेबाजी और नाज-नखरों की बात कर रही हूँ। ये सब घर में रहकर नहीं निभ सकते।"

"लेकिन जब तक अम्मा मौजूद हैं, तुम्हें बीच में पड़ने की क्या जरूरत है? आज नहीं, तो कल उसकी आँखें आप खुल जावेंगी।'

निर्मला मुस्किरा पड़ी—"यही तो मैं भी कह रही थी कि अभी

भाभी में बचपना है। मैंने भाभी को समझा दिया है कि भैया रूठ गए हैं। ज़रा मना लेना।" वह जोर से खिलखिला पड़ी।

"अच्छा, अच्छा। तू बड़ी नटखट हो गई है।" देवकुमार का आवेश शांत हो चला।

× × ×

१० अगस्त का 'हिंदी मिलाप' का डाक-संस्करण डाकिया दे गया। प्रधान शीर्षक पर पत्र खोलते ही नजर गई—"गांधीजी और कांग्रेस-वर्किंग कमेटी के सभी सदस्य गिरफ्तार।" देवकुमार की नसों में बिजली दौड़ गई। हृदय-स्पंदन कुछ तीव्र हो चले। एक साँस में ही सारा समाचार पढ़कर उन्हें मालूम हो गया कि कैसे रात को स्वतंत्रता की साँस लेनेवाले क्रांतिकारी कांग्रेस-नेता सवेरे पींजड़े के पंछी बना लिए गए। उन्हें यह न पता था कि आज इस समय तक लगभग देश के सभी प्रमुख कांग्रेस-कार्यकर्ता भी गोरी सरकार द्वारा गिरफ्तार किए जा चुके हैं। सरकार ने देशव्यापी दमन की ऐसी अभूतपूर्व तैयारी देश के इतिहास में पहले कभी न की थी।

देवकुमार को ऐसा लगा, जैसे सोए हुए सिंह को छेड़ दिया गया है, शीत से ठिठुरे, बेबस सर्प को कुचल दिया गया है, अपनी राह जाते हुए वन्य शूकर का मार्ग छेंक लिया गया है। गोरे साम्राज्यवाद के पापों का घड़ा जैसे भर चुका है। विनाश काल में उसकी बुद्धि विपरीत हो चली है। भारत अपने लोकप्रिय नेताओं की आकस्मिक गिरफ्तारी और देशव्यापी दमन-चक्र का प्रतिशोध अवश्य लेगा। धैर्य अब टूट चुका है, योगियों की समाधि अब भंग हो चली है, और नींद की खुमारी चौकड़ी भर रही है। सिंह की दहाड़, सर्प की फुफकार और वन्य शूकर का आक्रमण आज एक साथ प्रारंभ होगा। गांधीजी ने 'करो या मरो' का महामंत्र दे दिया है। आज राष्ट्र के जीवन मरण का प्रश्न उपस्थित है। परंतु क्या करना है, और कैसे करना

है—इसका कोई कार्य-क्रम तो उन्होंने नहीं बताया। उन्होंने यह कह दिया है कि मेरी गिरफ्तारी के बाद प्रत्येक व्यक्ति स्वयं नेता बने, और जैसे भी हो, वैसे अँगरेजों को 'भारत छोड़ने' के लिये विवश करे। यह देश हमारा है। इसके वन, पर्वत, नदी-नाले, निर्झर और उपत्यिकाएँ, खेत और उपवन, सब हमारे हैं। इसकी मिट्टी के एक-एक कण से हमारे शरीर का निर्माण हुआ है, इसके मधुर जल के पान से हमने नवजीवन प्राप्त किया है, इसके तारों-भरे गगन-मंडल के नीचे रजनी की गोद में हमने विश्राम पाया है। 'सोने की चिड़िया' कहे जानेवाले इस स्वर्ण-देश को हमें इन बहेलियों के चंगुल से मुक्त कराना होगा। आज उसे हमारी आवश्यकता है।

देवकुमार उठ खड़ा हुआ, और आवेश में दोनो मुट्ठियाँ बाँधकर अपनी चौपाल में टहलने लगा। इतने ही में अमर का एक कारिंदा 'मिलाप' माँगने आ पहुँचा। अमर रोज़ देवकुमार के यहाँ से अखबार पढ़ने को मँगा लिया करती थी। लाहौर में तो उसे प्रायः अखबार पढ़ने को मिला करते थे, परंतु गाँव में अखबार न आने से यह क्रम टूट गया था। जब से देवकुमार छुट्टी में आए हैं, उन्होंने 'हिंदी मिलाप' मँगाना शुरू कर दिया है। अबकी उनका यह विचार था कि गाँव में एक पुस्तकालय एवं वाचनालय खोल दिया जाय, जिससे गाँववाले सदा के लिये निरक्षर भट्टाचार्य और कूप-मंडूक बने न रह जायँ। अखबार तो वे मँगाने लग गए थे। हर शाम को अमर की चौपाल में गाँव के प्रौढ़, स्त्री, बालक-बालिकाएँ एकत्र होतीं, और देवकुमार कांग्रेस की और जर्मनी-जापान की लड़ाई की खबरें पढ़कर सुनाया करते थे।

कारिंदे को देखते ही देवकुमार ने पूछा—"अमर ने अखबार मँगाया है?"

"जी भैयाजी।"

"सुनो, उन्हें यहाँ भेज दो। कह देना, बहुत जरूरी काम से बुलाया है। जाओ, जरा लंबे कदम जाना।"

देवकुमार फिर चहलकदमी करने लगे। उन्होंने निश्चय कर लिया, मुझे सब माया मोह छोड़कर यहाँ से जाना ही होगा। लाहौर चलकर मुझे कांग्रेस समाजवादी नेता शिशिरकुमारदास से मिलना होगा, और मिलकर आगे का कार्य-क्रम निर्धारित करना होगा। लगभग दो माह पूर्व जब मैं उनसे मिला था, तो उन्होंने पहले ही इस बार भीषण आंदोलन छिड़ने का संकेत किया था। यदि वह गिरफ्तार न हुए हों, तो उनसे मिल लेना बहुत आवश्यक है। मैं गिरफ्तार होकर बँध रहने में विश्वास नहीं करता। गांधीजी ने भी कुछ करने या फिर मरमिटने का आदेश दिया है। जुलूस निकालने या खाली सत्याग्रह कर देने से देश का उद्धार संभव नहीं। हमें अब की असफल नहीं होना है। ऐसे मौके बार-बार हाथ न आएँगे। परंतु कांग्रेस के सभी बड़े-बड़े नेता 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव पास करके तुरंत ही भूमिगत क्यों नहीं हो गए? वे नहीं समझते थे कि सरकार की वक्र दृष्टि उन पर लगी हुई है। वह क्रांति की चिनगारी को सुलगने न देगी, और पहले ही पानी लाकर उँडेल देगी। परंतु वे नेता हैं। खैर, फिर भी इस समय देश में रोष और क्षोभ व्याप्त हो गया है। अब समय हो गया है कि दिल्ली का तख्त उलट दिया जाय।

इतने ही में अमला आ पहुँची। बोली—"आज देव भैया ने मुझे कैसे याद किया है? भाभीजी से समझौता-वार्ता में मुझे मध्यस्थ तो नहीं बनना पड़ेगा?" वह मुस्किरा उठी।

"मध्यस्थ तो बनना ही पड़ेगा, लेकिन दूसरे दृष्टिकोण से।"

"वह क्या?"

"वह भी बताऊँगा, लेकिन जिस बात के लिये तुम्हें बुला भेजा है,

वह यह है कि गांधीजी और सभी बड़े-बड़े कांग्रेस नेता गिरफ्तार कर लिए गए हैं। देवकुमार ने चारपाई पर पड़े अखबार को उठाकर अमर को दे दिया।

"अच्छा।" अमर ने शीर्ष-पंक्ति पर दृष्टि डालकर एक लंबी उसास छोड़ी। 'यह तो सरकार ने बड़ा भीषण कदम उठाया है।"

"हाँ, संभव है कि इससे एक ऐसा तूफान देश में आ जाय कि सारा देश एक बार ही तिरंगे के नीचे एकत्र होकर ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध उठ खड़ा हो। मैं तीन-चार दिन के लिये लाहौर जा रहा हूँ। तुम यहाँ ग्राम का कार्यक्रम ठप न होने देना। गाँव में तुम्हीं पर मुझे भरोसा है कि तुम इस उत्तरदायित्व को योग्यता-पूर्वक वहन कर सकते हो।"

"देव भैया! मैं इतना योग्य तो नहीं जितना कि तुम मुझे समझते हो, परंतु एक बार देश-सेवा का प्रण लेकर मैं पीछे कदम नहीं हटाऊँगी। भले ही एक दिन मुझे भारत-माता की अर्चन-वंदना में प्राणों की आरती ही क्यों न उतारनी पड़े। मेरे प्राण जन्म-भूमि की धरोहर हैं।"

'देश को तुम पर गर्व होना चाहिए, अमर। गुड़गाँव का नेतृत्व तुम्हारे हाथ में है। स्मरण रहे कि जन्मभूमि के उद्धार में गुड़गाँव का बलिदान किसी से भी कम न रहे। संभव है, मैं लौटूँ या न भी लौटूँ। ऐसी दशा में तुम्हें स्वयं निर्णय देना और गाँववालों का पथ-प्रदर्शन करना होगा।"

'मैं तैयार हूँ देव भैया। लेकिन तुम्हारी जगह भाभी का तो सहयोग मुझे मिलेगा ही?' अमर मुस्करा पड़ा।

'हूँ' तुम्हारी भाभी से कोई आशा नहीं है। वह घोंघे की तरह अपने ही छोटे संसार में सीमित है। आए महीना हुआ। नहीं कि

वह फिर अमृतसर भागने की सोच रही है। पढ़-लिखकर उसने सब भाड़ में झोंक दिया है।"

"देव भैया! तुम्हें भाभी के संबंध में शीघ्र ही अपनी धारणाएँ बदलनी पड़ेंगी। एक दिन गुड़िया को भी सिंहवाहिनी दुर्गा बना हुआ तुम पाओगे।"

"अभी भी वह दुर्गा से कौन कम है? इन मानवी दुर्गाजी को देखकर तो मेरी रूह भी फना होती है।"

अमर मुस्किरा पड़ी, और अपने कथन की वास्तविकता को व्यंग्य में बदलने के लिये देवकुमार को भी मुस्किराना पड़ा।

"बाहर के लोगों की रूह भले ही फना हो, लेकिन घर की दुर्गा से घर के लोगों को तो कभी डरते नहीं सुना गया, देव भैया!"

"हाँ, पर यह सब कुछ ऐसा ही है।" देवकुमार ने उच्छ्वास छोड़कर चहलकदमी करनी शुरू कर दी।

"अच्छा, तो मैं चलता हूँ। तुम्हारे आदेश के अनुसार चलने का प्रयत्न करूँगी।" अमर ने घर लौटना चाहा।

"अच्छा, तो फिर सावधान रहना।"

"हूँ-हूँ।" अमर चलने को हुई। इसी बीच अंजना आ पहुँची।

अंजना को देखते ही अमर ने अभिवादन किया—"वंदे! भाभीजी।"

"वंदे!" मुस्किराकर अंजना ने उत्तर दिया—"मेरे आते ही कैसे जाने लगी बीबीजी!"

"शाम की सभा की तैयारी करनी है। आस-पास के सभी गाँवों के लोगों को आज खासकर बुलवाना है। गांधीजी, जवाहरलाल और सभी बड़े बड़े नेता बंबई में गिरफ्तार कर लिए गए हैं। कांग्रेस ने 'भारत छोड़ो' का नारा बुलंद कर दिया है। सब गाँववालों को गांधीजी का 'करो या मरो'वाला महामंत्र सुनाकर हम आहि

आंदोलन के लिये सभी को तैयार करना है। मुझे यह पूरी आशा है कि आज की सभा में तुम जरूर शामिल होगी। देव भैया सारा भार मुझ पर डालकर आज बाहर जा रहे हैं। ऐसी हालत मे तुम्हारा सहयोग मुझे मिलना बहुत जरूरी है। देव भैया के यहाँ न रहने से खाली होनेवाली जगह की पूर्ति अकेली तुम्हीं कर सकती हो। बोलो, आओगी न भाभी ?" अमर ने आशा और विश्वास-भरी दृष्टि से अजना की ओर देखा।

'देखो, वादा तो नहीं करती बीबीजी। हो सका, तो जरूर आऊँगी।"

'वक्त पर बुलाने के लिये मैं आ जाऊगी। तब तो भाभीजी सभा में पधारेंगी।" अमर मुस्किरा पडी।

'अच्छा, देखा जायगा।" अजना भी मुस्किरा पडी। अमर को जैसे कार्य-सिद्धि हो गई। वह चली गई।

'बाहर कहाँ जा रहे हो तुम ?' मुस्किराहट के साथ अजना ने अपने पति से पूछा।

देवकुमार को ऐसा लगा कि जैसे अजना उनसे कह रही है कि तुम मुझे छोडकर कहीं नहीं जा सकते। यदि जाना ही है, तो मुझे पीहर भेज दो। धीरे से बोले—"लाहौर। वहाँ मुझे बहुत जरूरी काम है।"

"कब तक लौटोगे ?" अजना ने पूछा।

देवकुमार के मन में आया कि मैं साफ कह दूँ कि जब तक मैं सोचता था कि अधिकतम समय तुम्हें देकर स्वप्न और प्रेम की नींद सो लूँ। परन्तु अब तो मेरी पुकार आ गई है। देश को अब मेरी जरूरत है। तुम्हें मैं अब समय नहीं दे सकूँगा। किसी स्त्री के मान-मनुहार के लिये ही मैं पैदा नहीं हुआ हूँ। बोले— कुछ कह नहीं सकता कि लौटूँगा भी कि नहीं।" उसास छोड़कर वह बाहर घिरनेवाली बदलियों की ओर देखने लगे।

"क्यों ?"

"क्यों का मैं क्या उत्तर दूँ ।"

"तो भी ?" चारपाई पर बैठते हुए अपने पति से आग्रह करती हुई बोली—"तुम भी बैठ जाओ ।"

"मेरे पास बैठने को समय नहीं है । मुझे घंटे-भर में लाहोर की गाड़ी पकड़नी है । ३ बज चुके हैं करीब ।"

"अच्छा, तो फिर मुझे अमृतसर छोड़ आओ ।" अंजना अपनी साड़ी का किनारा उँगलियों में लपेटने-खोलने लगी ।

"तुमने बस एक रट पकड़ ली है । अमृतसर जाना है, तो रास्ता पड़ा है, चली जाओ ; अब मैं तुम्हें नहीं रोक सकता ।"

"तुम नहीं छोड़ने जाओगे ?"

"नहीं ।"

"हूँ । अमर दीदी से घुल-घुलकर क्या बातें हो रही थीं ? मैंने..."

"कुछ भी हो रही हों, तुम्हें मतलब ?"

"मैंने सब सुन लिया है । इसीलिये मैं कहती हूँ कि मुझे पीहर भेज देते, तो न रहता बाँस, और न बजती बाँसुरी । तुम घर की बातें सबसे हते फिरते हो । मैंने तो किसी से आज तक कोई बात नहीं कही । । भी होती हूँ, तो दूसरों के सामने हँसकर ही बातें करती हूँ । का भेद बताने में जग-हँसाई ही होगी ।"

"तुम्हारी-जैसी औरत मिलने पर जग-हँसाई न होगी, तो होगा क्या ?"

"जिस पर जनाब आत्महत्या करने जा रहे थे । पहले मुझे मार डालो । मुझे तो कहीं का नहीं रक्खा है । हाय राम !" अंजना अपने सिर पर एक घूँसा मारकर पछाड़ खाकर चारपाई पर गिर पड़ी ।

देवकुमार ने एक क्षण उसकी ओर टकटकी बाँधकर देखा, और आवेश में वह चल दिया—स्टेशन की ओर, जो कि गुडगाँव से लगभग ८। मील की दूरी पर था । उसके हाथ में केवल एक झोला था ।

---

[५]

लाहौर पहुँचते-पहुँचते देवकुमार को तरह-तरह की गरम अफवाहें, गप्पें और गेलियाँ सुनने को मिलीं। युक्त प्रांत में एक कॉलेज में पढ़नेवाले एक पंजाबी विद्यार्थी बोले—'फिर युक्त प्रांत के विद्यार्थी बड़ा इनक़िलाबी जोश रखने का दम भरते हैं, लेकिन हमारे कॉलेज में पूरी हड़ताल तक नहीं हो सकी।"

"आप कहाँ पढ़ते हैं ?" सामने की बर्थ पर बैठे हुए एक दढ़ियल, परंतु सूटेड-बूटेड और सिर पर साफा बाँधे हुए सिक्ख ने अपना चश्मा ठीक करते हुए पूछा।

"मैं साइंस आगरा में पढ़ता हूँ। होस्टल के लड़कों ने मिल-कर एक जुलूस निकाला। रास्ते में पुलिस से मुठभेड़ हो गई। लड़कों ने ईंट-पत्थर फेंकने शुरू कर दिए, तो पुलिस को भी लाचार होकर लाठी-चार्ज शुरू कर देना पड़ा। जहाँ दो-एक का सिर फूटा कि बस भगदड़ मच गई। लेकिन मैंने खड़े होकर लल-कारते हुए कहा—'ठहरो भाइयो! तुमने सबने अपनी-अपनी माँ का दूध पिया है। उसे लज्जित मत करो। अपने भाइयों के खून का बदला लिए बिना भाग जाना कायरता है!' बस, फिर क्या था सभी लौट पड़े। पुलिसवालों को पत्थरों की बौछार में आगे बढ़ने का साहस न हुआ। कई कांस्टेबिल बुरी तरह घायल हो गए। पुलिस के भाग खड़े होने पर हम लोगों ने अपना जुलूस आगे बढ़ाया।

"सामने से एक फटफटिया पर बैठे साहब और मेम [illegible]

लोगों ने पत्थरबाजी करके उन्हें उतर जाने को विवश कर दिया। उनसे तीन बार 'भारत माता की जय' कहलाकर छोड़ दिया गया। इतने ही में सशस्त्र पुलिस आ पहुँची, और बिना चेतावनी दिए उसने धड़ाधड़ गोली चलानी शुरू कर दी। लड़के फिर भाग खड़े हुए। भागते हुए कई घायल भी हो गए। मैं भी अकेले क्या करता, और किसे-किसे रोकता। मुझे भी भागकर एक गली में छिप जाना पड़ा।.. "

"फिर भी आपने गजब का साहस दिखलाया कि एक बार तो भागती हुई फौज के पैर रोक दिए, और उसे लौटा लिया।" देवकुमार ने कहा।

सिख ने भी समर्थन करते हुए कहा—"क्यों नहीं साहब! पंजाबी खून ठंडा नहीं होता।"

"जब तक हमारे देश के लोगों में मरने का डर बना रहेगा, हमारा आज़ाद होना बहुत मुश्किल है। मेरा तो यह ख़याल है कि इस बार कोई ऐसा ठोस कार्य-क्रम कांग्रेस को सामने रखना चाहिए कि देश-भर में एक साथ ही संगठित रूप में सामूहिक क्रांति हो। लेकिन अहिंसा और सत्याग्रह से निःशस्त्र जनता गोलियों बमों का कहाँ तक मुकाबिला कर सकती है?" देवकुमार ने जिज्ञासा से पंजाबी विद्यार्थी की ओर देखा।

"हूँ। यही मैं भी तब से सोच रहा हूँ कि आखिर जुलूस निकालने और चीख-चीखकर नारे लगा देने से अँगरेज कैसे भारत से चले जायँगे। कोई अपना एक मकान तो छोड़ता ही नहीं, यह तो पूरा राज्य है। भारत-जैसी सोने की चिड़िया को कौन अपने हाथ से जाने देगा?" विद्यार्थी ने एक उसाँस छोड़ी—"लेकिन ईश्वर जाने, वह कहाँ तक सही है, रेडियो पर एमरी साहब ने ब्रॉडकास्ट किया है कि कांग्रेस ने अब की बार ब्रिटिश राज्य को उलट देने का एक

बड़ा तूफानी कार्य-क्रम बनाया है।" सिक्ख की ओर देवकुमार के इस छोटे से तीसरे दर्जे के डिब्बे में बैठे हुए सभी यात्री ध्यान से देखने लगे, जैसे वे भी यह जानने को उत्सुक हो गए हों कि आखिर वह कांग्रेस का तूफानी कार्य-क्रम क्या है, जो बम्बई से सात समुद्र पार तो पहुँच गया, लेकिन अभी पंजाब तक नहीं पहुँचा।

सिक्ख कहने लगा—"मेरा तो ख्याल है कि अगर यह कार्य-क्रम एक साथ सारे देश में होता, तो अँगरेजी राज्य की धज्जियाँ-धज्जियाँ उड़ जातीं। लेकिन साहब! अँगरेजों के भाग से सन् ५७ का गदर असफल हो गया, और यह आंदोलन भी सिर उठाने के पहले ही कुचल दिया गया।"

"कुचल दिया गया?" देवकुमार की आत्मा तड़प उठी—"लेकिन सरदारजी! यह न भूल जाइए कि सन् ५७ का गदर सिक्ख और गुरखा पलटनों की गद्दारी से ही सफल नहीं हो पाया था। और, आज भी कांग्रेस के खिलाफत करने पर भी वे अपने गोरे बादशाह के चरणों में बैठकर अपने प्राण उत्सर्ग करने की पवित्र शपथ लेने से नहीं चूक रही हैं।"

"सिक्ख और गुरखा लड़ाकू कौमें हैं। उनके खून में गर्मी है। युद्ध ही उनका पेशा है।" सिक्ख ने अपना बचाव किया।

"लेकिन सरदारजी! वह खून की गरमी किस काम की, जो विदेशियों के संकेत से अपने ही भाइयों और मित्रों के खून की प्यासी हो उठे। युद्ध बुरा नहीं है, लेकिन देशद्रोही बनकर युद्ध करना मातृ-भूमि के प्रति गहरा युद्धापराध है। देश ने अपने विश्वास की बागें जिनके हाथों में सौंपी हैं, उन्हें विश्वासघात नहीं करना चाहिए।"

देवकुमार की आँखें रोष और आवेश में जलने लगीं।

... हो गया।

"भाई मेरे! मैं आपको बताऊँ कि सन् ५७ में जो गलती हुई, सो हुई, परंतु आज की स्थिति उससे बिलकुल भिन्न है। यह ठीक है कि फौज में भर्ती होना बहुतों का पुश्तैनी पेशा-सा यहाँ बना हुआ है, लेकिन जो भी नए लोग फौज में भर्ती हो रहे हैं, वे या तो पेट की ज्वाला से लाचार होकर या अपनी जागीर और मिल्कियत की रक्षा के लिये या फिर जबरन् सरकार का नमक खाने के कारण।" दिल में किसी को भी अँगरेजी राज से संतोष नहीं है—कोई भी जान-बूझकर मरना नहीं चाहता। लेकिन लोग यह सोचते हैं कि भूखों मरेंगे, चलो, फौज में ही भर्ती हो जायँ। मौज-बहार में थोड़े-बहुत दिन तो जिंदगी कटेगी ही।"

"कांग्रेस इसी बेबसी, गरीबी और असंतोष को दूर करना चाहती है। जब तक अँगरेजों को भारत से हट जाने को बाध्य नहीं किया जायगा, हम संसार में सिर ऊँचा करके नहीं चल सकते। हाँ, तो साहब! वह एमरी काका ने कांग्रेस का कौन सा कार्य-क्रम रेडियो पर बताया है? जरा यह तो सुन ही लें।"

"एमरी साहब ने यह फरमाया है कि कांग्रेस ने अब की अहिंसा का मार्ग छोड़ दिया है। उसने रेलवे की पटरियाँ उखाड़ने, टेलीफोन के तार काटने, डाकखानों के जलाने, सरकारी इमारतों पर कब्जा करने और उन पर तिरंगा फहराने, सड़कें काटने, पेड़ गिराने—इन सब तोड़-फोड़ों का कार्य-क्रम बनाया है। इसीलिये भारत में शांति और सुव्यवस्था बनाए रखने के लिये कांग्रेस नेताओं को ९ अगस्त को गिरफ्तार कर लिया गया है। अब की कांग्रेस को सदा के लिये कुचल दिया जायगा, जिससे वह फिर कभी अपना सिर न उठा सके।"

"हूँ! जर्मनी और जापान का सामना करने में तो अँगरेजों की नानी मरती है। वहाँ तो वे सफलता पूर्वक पीछे हट' आते हैं।

लेकिन हम निहत्थों को भस्मसात् करने के लिये ये धमकियाँ दी जा रही हैं।" देवकुमार के दाँत किटकिटा उठे।

"आज अँगरेजी साम्राज्य मिट रहा है, लेकिन वह मसल है कि रस्सी जल गई, पर उसकी ऐंठन नहीं गई।" पंजाबी विद्यार्थी ने एमरी के वक्तव्य पर नई टीका जोड़ी।

"ठीक है।" उच्छ्वास छोड़कर देवकुमार कहने लगे—"लेकिन आज तक किसी का दंभ और अभिमान टिक नहीं सका है।"

"इसमें क्या शक।" सिक्ख ने समर्थन करते हुए देवकुमार से पूछा—"आपको कहाँ तक जाना है?"

"लाहौर।"

"लाहौर में कहाँ पर?"

"मैं या तो लाहौर-विश्वविद्यालय में पढ़ता हूँ, लेकिन इस समय शिशिर बाबू से मिलने जा रहा हूँ।"

"कांग्रेस-समाजवादी नेता शिशिरकुमारदास से? मेरा तो यह ख्याल है कि वह भी इस समय तक बाहर तो शायद ही हों। आपका उनसे अच्छा परिचय है क्या?"

"अच्छा नहीं, तो परिचय भी किसी से बुरा होता है क्या?" देवकुमार मुस्किरा पड़े।

"मिलना मैं भी उनसे चाहता था। इसी के लिये मैं भी लाहौर चल रहा हूँ।

"मैं तो उनका शिष्य हूँ और उनसे कांग्रेस के आंदोलन की रूप-रेखा के संबंध में जानकारी प्राप्त करने तथा शहर में चलनेवाले आंदोलन का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने के लिये ही आया था। इसलिए, अगर जेल न गए होंगे, तो संभव है कि मैं उनसे मिल-सकूँ। आपको भी उनसे मिला दूँगा। आप वेश-भूषा से तो कांग्रेसी नहीं जान पड़ते?" देवकुमार ने सिक्ख पर संदेह किया।

"यानी आप मुझ पर संदेह कर रहे हैं? मैं कांग्रेसी तो जरूर नहीं हूँ, लेकिन थोड़ी-बहुत देश-सेवा करने का हौसला जरूर रखता हूँ।"

"मुझे आप-जैसे जन सेवक से मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई। आप तो छिपे रुस्तम निकले।"

"नहीं साहब। मैं किस योग्य हूँ। आप-जैसे देश-भक्तों के सत्संग का ही यह प्रभाव है कि मैं भी पाँचों सवारों में से एक बन गया हूँ।" सिक्ख मुस्किरा पड़ा।

"खूब। बेखूब!!" देवकुमार भी कहकहा लगाकर हँस पड़े। पंजाबी विद्यार्थी भी हँसा। शेष लोगों में से कुछ यात्री लाहौर उतरने की तैयारी में व्यस्त हो गए थे। सहसा देवकुमार और उनके नए साथी को भी जैसे होश आया कि लाहौर का स्टेशन आ रहा है, तैयार हो लें। पंजाबी विद्यार्थी कहीं आगे जा रहा था। वह निश्चिंत होकर डिब्बे के बाहर झाँकने लगा।

स्टेशन आ गया। गाड़ी खड़ी हो गई। देवकुमार उतरे, और सिक्ख भी उतरा। उसके पास कोई सामान न था। अपना चमड़े का हंटर उठाया, और नीचे उतरकर देवकुमार से बोला—"आप चलिए। मैं इन्क्वायरी ऑफिस होकर अभी आया। जरा गेट से निकलकर इंतजार कीजिएगा। मुझे वैसे देर नहीं लगेगी। अभी आता ही हूँ।"

"कोई बात नहीं है, हो आइए। मैं गेट पर आपकी प्रतीक्षा करूँगा।' देवकुमार अपना झोला उठाकर गेट की ओर चल दिए। पंजाबी विद्यार्थी ने उन्हें 'वंदे' किया, और देवकुमार ने भी मुस्किरा-कर सिर झुका दिया।

सिक्ख दो-तीन मिनट बाद ही लौटा। पंजाबी विद्यार्थी उसी प्रकार बाहर झाँक रहा था। उसने सिक्ख को पुनः आया देखकर उससे पूछा—'कहिए, कुछ छूट गया क्या?'

"नगी वह मगाड्य गए ?"

"जा हाँ। आपने ही ता कहा था, चलिए, मैं आ रहा हूँ। गेट इतजार करिएगा। अभी ता दस-पाँच कदम ही आगे गए होंगे।"

"हा-हाँ। ठीक है। अच्छा, वदे।"

"वदे। पजाबी विद्यार्थी ने हाथ जोड़ दिए।

ज्यो ही सिक्ख महाशय कुछ दूर आगे बढे होगे कि दो कास्टेबिल धमक आए बोले—"आप गिरफ्तार किए जाते हैं।" पजाबी द्यार्थी सिटपिटा गया—"गिरफ्तार ! क्या ? कहाँ है मेरे नाम से ?"

"सी० आई० डी० का आप पर शक है। आप सी० आई० डी० स्पेक्टर के आदेश से गिरफ्तार किए जा रहे हैं।"

× × ×

गेट पार करके देवकुमार उस सिक्ख की प्रतीक्षा करने लगे। मने मे वह आ पहुँचा।

"हा आए आप ?" देवकुमार ने पूछा।

"जी हाँ।" मुस्किराकर सिक्ख ने उत्तर दिया।

"आइए, चलें।"

"चलिए।"

कुछ दूर आगे बढते ही पीछे से दो कास्टेबिल आ पहुँचे, और हो के सामने आकर खडे हो गए।

देवकुमार भौचक-से होकर रुक गए। बोले—"क्यों, क्या बात है ?"

"आपको शिशिर बाबू ने बडे घर बुलाया है।" एक कास्टेबिल ने उत्तर दिया।

"बडे घर !" देवकुमार पलक मारते ही समझ गया—"अच्छा, ... भाई। वदे सरदारजी। मैं जेल जा रहा हूँ। मुझे दुःख है कि शिशिर बाबू से आपको नहीं मिला सका। वह स्वयं भी

के पीछे बद मालूम होते हैं। आज भारत इसीलिये गुलाम है कि उसमें आप-जैसे जयचंद अभी मौजूद हैं। बंदे।" देवकुमार कांस्टेबिलों के साथ चलने को अग्रसर हुआ।

"बंदे! लेकिन भाई मेरे! आप मुझे जो चाहें, कह लें। मैं इसी लिये खद्दर के कपड़े और गांधी टोपी नहीं लगाता कि कहीं रामनाम के लिये पुलिसवाले हैरान न करें।"

"स्मरण रखिए सरदारजी! तुम्हारे-जैसे लंका-भेदियों को एक दिन अवश्य ही पुरस्कार मिलेगा।"

सिख जोर से आँखें मिचमिचाकर हँस पड़ा—"जाइए नेताजी! मैं शीघ्र ही आपसे और आपके गुरु शिशिर बाबू से मिलने के लिए आपके दौलतखाने आऊँगा। बंदे।" और सिख मुस्किराता हुआ चला गया।

पुलिस-कांस्टेबिल देवकुमार को थाने की ओर ले चले।

[६]

"हलो भाभी !"

निर्मला ने चौपाल में प्रवेश किया। अंजना अपनी उपेक्षा और अपने पतन पर अभी भी चारपाई पर पड़ी आँसू बहा रही थी। निर्मला की आवाज सुनकर आँसू पोंछ डाले।

"भाभी !" निर्मला चारपाई पर आकर बैठ गई—"तुम तब से पड़ी पड़ी हो। भैया का विरह बड़ा दुःख दे रहा है क्या ?" वह खिलखिला पड़ी और कंधा झकझोरकर अंजना के मुँह पर झुक गई। अंजना की आँखें बंद थीं, और कोरों में आँसू भरे हुए थे—"तुम तो रो रही हो भाभी। रोने की इसमें क्या बात है ? भैया लाहौर ही तो गए हैं। दो-एक दिन में आ जायँगे।"

"वे आएँ, चाहे न आएँ। मेरे तो करम फूट गए हैं। क्या मालूम था कि ब्याह हो जाने पर मैं पिंजड़े में बंद हो जाऊँगी।" अंजना अब फफककर रो पड़ी।

"क्या मसला है भाभी। वह तुमसे लड़कर तो नहीं गए हैं ?" निर्मला खिलखिलाहट रोककर अंजना के उत्तर की प्रतीक्षा करने लगी।

"मुझे क्या मालूम ?"

"भाभी। एक बार तो भैया को मैं मौत के घर से वापस ले आई थी। आज उस दिन की साक्षी है। भला हो उस बेचारी का कि फाँसी लगाने के पूर्व ही वह घटनास्थल पर पहुँच गई, नहीं तो कभी की तुम्हारी माँग का सिंदूर मिट चुका होता। पता नहीं कि उन्हें क्या हो जाता है ? हे भगवान !"

"हे भगवान् !" अंजना की आँखों के आँसू सूख गए, और वह

उठकर बैठ गई। उसने आँखें मूँद लीं—'उन्हें कुछ हो, इसके पहले मुझे मौत दे।" उसने एक उसास छोड़ी, और आँखें खोलकर शून्य दृष्टि से पृथ्वी की ओर देखने लगी।

"भाभी! भैया की रक्षा तो अब भगवान् करेगा। अब तक वह जहाँ पहुँच गए होंगे, वहाँ न मैं पहुँच सकती हूँ और न तुम। यदि तुम्हें मौत ही प्यारी है, तो उठो भाभी! मातृभूमि के उद्धार में अपने जीवन का उत्सर्ग करो।

"देव भैया का यही सदेश है। भले ही आज भी वह तुमसे रूठकर ही बाहर क्यों न गए हो—मेरा दिल तो यह कहता है कि वह इतने कायर नहीं हैं कि कर्म-क्षेत्र से पलायन करने के लिये वह फिर आत्म-हत्या का वरण करेंगे। जब तक वह लाहौर से अपना काय पूरा करके नहीं लौटते, हमें उनका यहाँ का काय पूरा करना है। चलो, अमर ने बुला भेजा है। दस हजार जवान और बालक अमराइ में एकत्र हो गए हैं। अमर ने कहला भेजा है कि सभा का काम तुम्हारे आने पर ही प्रारंभ होगा।"

"निर्मला बीबी! बहू-बेटियाँ मर्दों की सभा में नहीं जातीं। अम्माजी नाराज होंगी। अमर रानी से मेरे लिये माफी माँग देना। तुम्हें अम्माजी भले कुछ न कहें, लेकिन मैंने अगर घर से पैर निकाला, तो वह खा जायँगी मुझे।"

"भाभी! ऐसी तो कोई रोक तुम पर है नहीं। हाँ, अम्मा की अनुमति की कहो, तो मैं दिला दूँ।"

"अम्माजी अनुमति नहीं देंगी। बीबीजी, मैं उनकी मर्जी के बिना कोई काम नहीं कर सकती।"

"भाभी! यह पट्टी तो उसे पढ़ाओ, जो तुम्हारी रग-रग से परिचित न हो। मुझे अच्छी तरह मालूम है कि तुम अम्मा के कहने में कितना अधिक चलती हो।"

"तुम तीखे व्यंग्य मुझ पर कर सकती हो, लेकिन यह मैं ही जानती हूँ कि कैसे सबकी शुभ कामनाएँ करते हुए दिन बिताती हूँ। . अच्छा।" निर्मला चली गई।

अंजना फिर चारपाई पर लेट गई, और बड़ी देर तक एकांत में आँचल से मुँह ढँककर सिसकती रही।

× × ×

उस दिन शाम की सभा अमर के छोटे-से, किंतु जोशीले भाषण के पश्चात् समाप्त हो गई। जनता में काफी उत्तेजना पैदा हो गई थी, परंतु अभी तक उनके सामने कोई ठोस कार्य-क्रम न था, इसलिये उसे देशभक्तजी के लौटने तक की प्रतीक्षा करने को कह दिया गया था। सभी में कुछ कर डालने या मरमिटने की अमिट अभिलाषा और उमंगें भर उठी थीं, परंतु एक दिन बीता, दो दिन बीते, देशभक्त न लौटे, तो सभी की बेचैनी बढ़ने लगी। जगह-जगह युवक और वयस्क किसान, जो प्रायः जाट थे, टोलियों में एकत्र होकर, जुलूस बनाकर एक गाँव से दूसरे गाँव तक 'इनक़िलाब ज़िंदबाद' और 'अंगरेजो भारत छोड़ो' के नारे लगाते हुए जाते। छोटी और कुमार पीढ़ी के सदस्य भी उसमें शामिल हो जाते और वह जुलूस तूफानी लहरों के समान एक अंधड़ का, एक हलचल का संदेश लेकर आगे बढ़ चलता। बढ़ता ही जाता। पड़ोस के गाँव में भी पहुँचकर वे लोग एक नवस्फूर्ति, जागृति और चेतना का संचार कर देते। उनके बुलंद नारों की प्रतिध्वनि अमराइयों में, नदी-कूलों के उस पार और ऊपर निरभ्र आकाश में छा जाती।

देशभक्तजी न लौटे, परंतु शहर में और आस-पास के कस्बों तथा बड़ी तहसीलों में तरह-तरह के समाचार आने लगे। जो भी लाहौर, अमृतसर, दिल्ली और अन्य शहरों में होकर या भागकर अपने गाँव लौटता, उसे उसकी दास्तां जानने तथा गांधीजी के

मालिक—'सफ़ेदपोश' थे, लम्बरदार की बात का समर्थन करते हुए कहा—"इसमें कोई शक नहीं कि तेजसिंहजी ने जो बातें आप लोगों के सामने रक्खी हैं, वे बहुत नपी-तुली और बावन तोले, पाव रत्ती सही हैं। कोई भी क़दम उठाने के पहले हमें अपना आगा-पीछा सोच लेना चाहिए। जहाँ तक सभा करने, जुलूस निकालने या नारे लगाने के सवाल हैं, उनमें हम यह दिखलाते हैं कि हम अँगरेजी राज्य में नहीं रहना चाहते। गोरे हमारे देश को छोड़कर चले जायँ। हम खुद अपनी सरकार बना लेंगे। हम सब हिंदू, मुसलमान, सिख, पारसी और ईसाई आज दूर-दूर जरूर हैं, लेकिन तुम चले जाओ, हम एक हो जायँगे। अभी इतना विरोध करना ही काफ़ी है। इतने में हमें संगठित होकर शक्ति एकत्रित कर लेनी चाहिए, जिससे मौक़ा आने पर हम अँगरेजों से कह दें कि बस, अब हमें तुम्हारी कोई आवश्यकता नहीं है। अपना डेरा-डंडा उठाओ, अपने प्रमाणित इंद्रजाल की गठरी बाँधो, और हमारी-तुम्हारी आखिरी दुआ-सलाम। जब तक हम संगठित न हो जायँगे, हम गोरों को यहाँ से जाने को बाध्य नहीं कर सकेंगे।"

अमर तिलमिलाकर उठ खड़ी हुई, और अपने साथियों तथा वयस्क सदस्यों की ओर दृष्टिपात करती हुई बोली—'युद्ध जब तक न आवे, हम अपनी आत्मा को यह कहकर धोखा दे सकते हैं कि हम संगठन कर रहे हैं। लेकिन युद्ध के सामने आ जाने पर भी हम यही कहते जायँ कि हम तो अभी संगठित हो रहे हैं, तो इससे बढ़-कर हमारी कायरता और बुजदिली और नहीं हो सकती। हम युगों से संगठन में लगे हैं, और आज हमारे संगठन की परीक्षा का, आत्म-मारण का समय आ गया है। हम संगठित नहीं हो पाए, यह कहकर भी हम युद्ध से इनकार नहीं कर सकते। हम संगठित हैं या नहीं, आखिर युद्ध में हमें शामिल होना ही होगा। रही हिंसा-अहिंसा की

बात। योद्धा अपना लक्ष्य देखता है, लक्ष्य की प्राप्ति के साधन नहीं। साधन युग के अनुसार बदलते रहते हैं। कल तक हम तोपों और बन्दूकों से युद्ध होना देखते थे, परन्तु आज टैंको और विमानों से युद्ध होते हैं। हम अभी तक अहिंसा के अस्त्र से लड़े, परन्तु उसका काम मुर्दादिलों में चेतना उत्पन्न करना और उससे मृत्यु के भय को दूर करना था। वह काम पूरा हो गया, और अहिंसा का अभिप्राय भी पूरा हो गया। बड़ी हिंसा का मुकाबला हम छोटी हिंसा से नहीं कर सकते, यह ठीक है। लेकिन हम खाली हाथों भी गुरिल्ला-युद्ध कर सकते हैं। आखिर भारत-माता की ४० करोड़ संतानें किस दिन के लिये हैं? प्राणों का मोह, अपनों की ममता और समाज के बंधन हमें तोड़ने होंगे। देश के लिये यदि हम सर्वस्व भी अपना त्याग कर दें, तो भी हम कर्तव्य ही करेंगे—किसी पर एहसान नहीं।'

अमर की सहेलियों और तरुण युवकों ने ताली बजाकर अमर के विचारों का स्वागत किया। अमर बैठ गई और यह कहकर कि "मैं चाहती हूँ कि आप अनुभवी गुरुजन इस दृष्टि से इस कार्य-क्रम पर पुनर्विचार करें।'

छोटूलाल ने अमर का पक्ष समर्थन करते हुए उठकर कहना शुरू किया—'अमर रानी की बातें सुनकर भगवान् श्रीकृष्ण के वे वचन मुझे याद आते हैं कि 'हे अर्जुन! तू आवेग, भय और आशंकाएँ छोड़कर युद्ध कर। आत्मा अमर है। न वह मरती है, और न कोई उसे मार सकता है।' मृत्यु के भय को मनुष्य से दूर रखनेवाला दुनिया का यह सबसे बड़ा महामंत्र है। गांधीजी और कांग्रेस के बड़े बड़े नेता इस युद्ध का उत्तरदायित्व हम पर छोड़कर जेल चले गए हैं। यदि आज हम इस युद्ध से इनकार करेंगे, तो गुरु गोविंद-सिंह के पंजाब की नाक कट जायगी। हम भारत मा की उद्धार

करनेवाली सेना के सैनिक हैं। निंदा और अपमान का जीवन सैनिक कभी बर्दाश्त नहीं कर सकता। मेरा तो यह ख्याल है कि आज तीसरे पहर हम सभी आज़ादी के दीवाने सैनिकों का गुड़गाँव के थाने पर चलकर कब्ज़ा कर लेना चाहिए। हम लोग थानेदार को गिरफ्तार करके सारा अधिकार अपने हाथों में ले लेंगे, और थाने पर लगा ब्रिटिश झंडा उखाड़कर तिरंगा लहराएँगे। आज से जेल, पुलिस, फौज और अदालत हमारी होगी। हमारी जन-रक्षा समितियाँ, जो जापान और जर्मनी के हमले के समय गाँव की रक्षा के लिये बनाई गई हैं, वे ही हमारी पुलिस बनकर हमारी रक्षा करेंगी। न्याय के लिये हमारे गाँव की पंचायत ही अदालत का काम करेगी। हम सब मिलकर इस स्वतंत्र सरकार के सिपाही होंगे। और मेरा यह सुझाव है कि गुड़गाँव की इस खुदमुख्तार सरकार का अध्यक्ष किसी वयोवृद्ध अनुभवी व्यक्ति को ही बनाया जाय।" छोटेलाल बैठ गए। करतल-ध्वनि।

निर्मला ने उठकर प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा—"मेरी राय भी यही है। यदि चाचाजी को राष्ट्रीय सरकार का अध्यक्ष, भैयाजी को पंचायती अदालत का सरपंच और अमरकुँवरि को आज़ादी की सेना का नेतृत्व दिया जाय, तो बुरा न होगा।" निर्मला बैठ गई। सभी ने हर्ष-ध्वनि के साथ इस सुझाव का समर्थन किया।

अमर ने उठकर सबका आभार प्रकट करते हुए कहा कि गुरुजन मुझे क्षमा करेंगे। आज़ादी की सेना के सेनापति की हैसियत से मैं यह घोषणा करता हूँ कि आज ही तीसरे पहर गुड़गाँव के थाने पर हमारी पहली चढ़ाई होगी। इसके लिये सभी सैनिक दोपहर बाद अमराई में एकत्र हों। पास-पड़ोस के गाँवों में संदेश भेज दिया जाय कि सभी लोग देशोद्धार के लिये कुर्बानी का दृढ़ संकल्प लेकर ग्राम सभा में शामिल हों।' वह बैठ गई।

करतल-ध्वनि के साथ इस घोषणा का भी स्वागत किया गया। निर्मला ने उठकर कहा—'मैं अपने सेनापति की इस घोषणा का हृदय से स्वागत करती हूँ। अब हम लोग देव भैया के लौटने की प्रतीक्षा नहीं कर सकते। कार्य-क्रम हमारे सामने है। अब उसे पूरा करने में तनिक भी देर नहीं होना चाहिए।" निर्मला बैठ गई।

छोटूलाल ने देवकुमार के उपस्थित न रहने पर दुःख प्रकट करते हुए कहा—'यदि देवकुमार भी यहाँ होते, तो वे हमारा नेतृत्व और भी उचित ढंग से करते। अपनी अनुपस्थिति में वह सारा कार्य-भार अमर पर छोड़ गए हैं। हमें अमर का आदेश मान्य है।" छोटूलाल बैठ गए।

भैयाजी अर्थात् सरदार तेजसिंह भी उठे। बोले—"निर्मला ने मुझे पंचायती अदालत का सरपंच बना दिया है, लेकिन प्रस्ताव पास कर देने से ही न गुड़गाँव स्वतन्त्र हो गया, न पंचायत बनी, और न मैं उसका सरपंच। बच्चों में जो उत्साह है, उसकी मैं प्रशंसा करता हूँ लेकिन स्याऊँ का ठौर पकड़ने के लिये कौन कौन आगे आएँगे, क्या मैं यह जान सकता हूँ? जोश और उमंगों में चाहे जो कुछ बक देना सरल है परन्तु मैं पूछता हूँ कि कौन-कौन सामने खड़ा पुलिस की गोलियाँ खाने को तैयार है?"

एक मिनट तक सन्नाटा-सा छा गया। लेकिन अमर उठ खड़ी हुई, और बोली—"हम। हम तैयार हैं गोली खाने को?" निर्मला उठ खड़ी हुई—"मैं भी गोली खाने को तैयार हूँ।"

और एक साथ ही सभी चाचाजी अर्थात् रायसाहब सरदार प्रकाश-सिंह के साथ ही उठ खड़े हुए, और एक स्वर से चिल्लाकर बोले—'हम सभी लोग गोलियाँ खाने को तैयार हैं।'

बूढ़े सरदार की आँखें मुस्किरा उठीं। बोला—"निश्चय ही भारत की आजादी के दिन निकट आ गए हैं। जिस जाति में अपना

सिर ऊँचा उठाकर चलने के लिये मरमिटने की कामना पैदा हो जाती है, वह गुलाम नहीं रह सकता। मातृभूमि के उद्धार के लिये आज मेरा मेराए, मगर मन कुछ और मेरा शरीर भी अर्पित है।'

सभी मे बिजली दौड़ गई। अमर ने नारा दिया—"भारत माता की..."

'जय!' सबने उत्तर दिया।

तीन बार भारत माता की जय हो चुकने के बाद 'इनकिलाब, जिंदाबाद' और 'अँगरेजो भारत छोड़ो' के नारों से रायसाहब की सारी चौपाल गूँज उठी।

---

[७]

"नहीं हो सकता, इनायतुल्लाखाँ—गुड़गाँव थाने का इंचार्ज—किसी के सामने अपना सिर न झुकाएगा। कौन कहता है कि मैंने जुल्म किए हैं? मैंने जिसका नमक खाया है, और जिसकी बदौलत इनायतुल्लाखाँ एक पूरे थाने का मालिक है, वह आज अपने मालिक को धोखा न देगा। रामहरख, वफादारी और राजभक्ति भी कोई चीज होती है, तभी तो ब्रिटिश हुकूमत ने मुझे यहाँ का इंचार्ज बनाकर भेजा है। मैं सरकार के साथ विश्वासघात नहीं करूँगा। मेरा फर्ज है कि मुल्क में अमन और शांति रक्खी जाय। कानून विद्रोह, हमले, लूट-मार और हत्या करने की इजाजत नहीं देता। भीड़ थाने पर हमला करने आ रही है। यह बगावत है, बगावत रामहरख। इनायतुल्ला अपनी कुर्सी पर से मुट्ठी बाँध और दाँत किट-किटाकर उठ खड़ा हुआ।

"हुजूर ठीक फरमाते हैं। कांग्रेस बगावत करके सन् ५७ की तरह ब्रिटिश हुकूमत को उलट देना चाहती है।" रामहरख कांस्टेबिल एक क्षण के लिये भी घबराहट, भय और आतंक से मुक्ति न पाकर फिर हाँफने लगा—"बागियों को तुरत गिरफ्तार कर लिया जाय हुजूर।" उसने यह सुझाव रखकर जैसे कुछ राहत-सी पाई।

इनायतुल्ला राक्षसी अट्टहास के साथ हँस पड़ा।

"तुम नहीं समझते, रामहरख। बगावत के समय कोई दस-पाँच आदमी नहीं आते, और न उस समय गिरफ्तारियों से उन्हें डराया जा सकता है।"

"जी हुजूर! तो फिर?"

"रामहरख! तुम दोगले तो नहीं हो?"

"ऐसा तो हुजूर नहीं है।"

"तुम्हारी नसों में गरम खून है?"

"तो क्या सरकार को नसें चीरकर भी दिखानी होगी?" रामहरख मुस्किरा पड़ा।

"ठीक है। तुम मरना जानते हो?"

"हुजूर!...पहले कभी तो ऐसा मौका पड़ा नहीं, लेकिन... मरना तो एक दिन है ही। कौन कह सकता है कि मैं नहीं मरूँगा।"

"ठीक है। जब एक दिन मरना ही है, तो मरने के लिये हमें ज्यादा इंतजार नहीं करना होगा। तुम बन्दूक चला लेते हो? तुम्हारे हाथ उस समय गोली चलाते हुए तो न काँपेंगे?"

"तो क्या खुदकशी करनी होगी हुजूर?" रामहरख के मुख पर फिर मृत्यु का भय और घबराहट छा गई।

"तुम समझे नहीं।"

"जी, नहीं।"

"देखो, बागियों पर गोलियाँ चलानी होंगी। थाने में तुम करीब पाँच-छः जने हो। हम पाँच-छः सौ को मारकर मरेंगे। समझे!"

"जी हुजूर। लेकिन..."

"लेकिन क्या?"

"जी हुजूर। यहाँ तो इस थाने में मुश्किल से दो-तीन ही हैं। ऐसा किया जाय कि कम से कम एक बन्दूक लगे हाथ राय-साहब की भी मँगवा ली जाय।"

"चेबूर, रामहरख!"

इसी बीच जनता की सेना थाने के निकट आ पहुँची। गूँजा

हुए नारों की ध्वनि वायुमंडल में तूफानी लहरें उत्पन्न करती हुए थाने की ईंट-ईंट में प्रवेश करने लगी—

"क़ायम हो—"

"जनता का राज।"

"मिट जाएँगे—"

"गोरे आज।"

"इंक़िलाब—"

"ज़िंदाबाद।" ३ ॥

"क़ौमी नारा—"

"वंदे ऽऽऽऽ।"

इनायतुल्ला, रामहरख और उनके दूसरे साथियों के दिल दहल उठे। कुछ क्षणों के लिये सबमें मुर्दनी छा गई।

इनायतुल्ला ने सावधान हो जाने के लिये सीटी बजाई। दूसरी सीटी कुछ क्षणों बाद बजाई गई, और सभी कांस्टेबिल एकत्र हो गए। दो-तीन के हाथ में बंदूकें और दो-तीन के हाथ में लाठियाँ।

'रामहरख! मेरे पास रिवाल्वर है। तुम झट से रायसाहब की बंदूक ले आओ। जाओ। हम बागियों का तब तक मुक़ाबिला करते हैं।' इनायतुल्ला ने आदेश दिया।

रामहरख दरवाज़े की ओर चला।

इनायतुल्ला ने शेष कांस्टेबिलों को आदेश दिया कि हुक्म होते ही बागियों पर गोलियाँ चलाना होगी।

पैसा न चीज़ गए दभी सिपाही अपने ही देश की निरशस्त्र, अहिंसक, किंतु वीर सेना पर गोली चलाने को प्रस्तुत हो गए।

रामहरख ज्यों ही थाने से बाहर निकला, उसने देखा रायसाहब, जमादार और अमरकुँवरि, तीनों उसी ओर चले आ रहे हैं। निकट पहुँचते ही रायसाहब के सामने रामहरख ने झुककर सलाम करते हुए

कहा—"आप बड़े मौके पर पहुँचे रायसाहब ! मैं आप ही की तलाश में आ रहा था। हुजूर को थानेदार साहब ने याद किया था।"

"चलो। मैं भी उनसे ही मिलना चाहता था। कहाँ हैं थानेदार साहब ?" थानेदार साहब का उच्चारण घृणा और क्रोध से इस प्रकार रायसाहब करते हैं कि रामहरख सहम उठा। "अंदर हैं," कहकर वह चुपके से रायसाहब और उनके दल के पीछे पीछे हो लिया।

इनायतुल्ला क्षण-क्षण इस प्रतीक्षा में थे कि अब ये लोग आगे बढ़ें कि चट से मैंने गोली चला देने का हुक्म दिया। नहीं छोड़ूँगा किसी को, भून डालूँगा सभी को। कांग्रेस का बार-बार फुफकार उठनेवाला जहरीला फन अब की हमेशा के लिये मरोड़ डालूँगा। हिंदू-राज का सपना देखते हैं ये कांग्रेसी। अंगरेजों ने मुगलों से सलतनत पाई—दिल्ली के तख्त के असली हकदार हम इस्लाम के बंदे ही हो सकते हैं। गर्क हो हिंदुओं का बेड़ा।

"इतने ही में सामने से आते हुए दिखाई पड़े रायसाहब। उनके पीछे थी अमर और फिर लम्बरदार और रामहरख।

रायसाहब के कुछ कहने के पूर्व इनायतुल्ला को ही उनका प्रणाम अभिनंदन किया, और बोला—"दोस्त वह, जो मौके पर काम आए। आप भी बड़े मौके पर आ पहुँचे, रायसाहब।"

"जी हाँ। कहिए, रामहरख को आपने मेरे पास कैसे भेजा था ?"

"कैसे क्या रायसाहब। आपकी बंदूक की बनी सल्तनत को, गाँववालों ने बगावत कर दी है।"

"गाँववालों ने बगावत कर दी है ? थानेदार साहब। गाँववाले बागी हैं, तो हम सब भी बागी हैं।" रायसाहब की आँखें शोले उगलने लगीं।

"थानेदार साहब। हिंदुस्थान में जनता का राज हो गया है, और आप लोग भी हथियार रख दें। गोरे बनिए इस देश के अब मालिक

नहीं रहे।' अमर ने थानेदार से स्पष्ट शब्दों में समूचे थाने के आत्म-समर्पण की मांग की।

"जनता की सेना पाप का महल गिराने के लिये आ पहुँची है, थानेदार साहब। बंदूकों और लाठियों का स्वप्न न देखकर आँखें खोलिए।" बूढ़े लम्बरदार ने चेतावनी दी।

मुस्कराकर इनायतुल्ला ने उत्तर दिया--"आप सब लोगों ने मिलकर जैसे मुझे सचमुच में ही डरा दिया। आप जैसी राजभक्त प्रजा तो ख्वाब में भी अंगरेजी राज की बुराई नहीं सोच सकती। माफ कीजिएगा रायसाहब और मुखिया जी। मेरा मतलब कांग्रेसवालों से था, आप लोगों से नहीं।'

"देश का बच्चा-बच्चा कांग्रेसवाला है, थानेदार साहब। कांग्रेस को जो बागी कहता है, वह खुद अपने ही देश के खिलाफ बगावत करता है।' अमर ने दृढ़ता के साथ उत्तर दिया।

"अमर बेटा! अब तू बहुत बड़ी-बड़ी बातें करने लगी। छोटी-सी थी, तब तुझे बहुत बार गोद में खिलाया है। समझी बेटा!" इनायतुल्ला ने मुस्कराकर कहा।

"ठीक है थानेदार साहब। लेकिन गड़े मुर्दे उखाड़ने से क्या फायदा? इस समय मैं जनता की सेना की सेनापति हूँ, और जनता की ओर से आपसे मेरी यह स्पष्ट मांग है कि आप थाने को जनता के हवाले कर दें। नहीं तो जनता आपको गिरफ्तार करके बड़े घर भेज देगी।" अमर ने फिर अपनी बात दुहराई।

"रामहरख!" इनायतुल्ला झुँझलाकर चिल्लाया।

'जी हुजूर!' आगे बढ़ते हुए रामहरख ने उत्तर दिया।

'कर लो गिरफ्तार इस छोकरी को।"

"बहुत अच्छा हुजूर।' रामहरख आगे बढ़ा।

"खबरदार रामहरख!' रायसाहब ने लाल आँखें करके

कहा—"आप बड़े मौके पर पहुँचे रायसाहब ! मैं आप ही की तलाश में आ रहा था। हुजूर को थानेदार साहब ने याद किया था।"

"चलो। मैं भी उनसे ही मिलना चाहता था। कहाँ हैं थानेदार साहब ?" थानेदार साहब का उच्चारण घृणा और क्रोध में इस प्रकार रायसाहब करते हैं कि रामहरख सहम उठा। "अंदर हैं," कहकर वह चुपके से रायसाहब और उनके दल के पीछे पीछे हो लिया।

इनायतुल्ला क्षण-क्षण इस प्रतीक्षा में थे कि अब ये भी आगे बढ़ें कि चट से मैंने गोली चला देने का हुक्म दिया। नहीं छोड़ूँगा किसी को, भून डालूँगा सभी को। कांग्रेस का बार-बार फुफकार उठनेवाला जहरीला फन अब की हमेशा के लिये मरोड़ डालूँगा। हिंदू-राज का सपना देखते हैं ये कांग्रेसी। अंगरेजों ने मुगलों से सलतनत पाई—दिल्ली के तख्त के असली हकदार हम इस्लाम के बंदे ही हो सकते हैं। गर्क हो हिंदुओं का बेड़ा।

"इतने ही में सामने से आते हुए दिखाई पड़े रायसाहब। उनके पीछे थी अमर और फिर लंबरदार और रामहरख।

रायसाहब के कुछ कहने के पूर्व इनायतुल्ला को ही उनका प्रथम अभिनंदन किया, और बोला—"दोस्त वह, जो मौके पर काम आए। आप भी बड़े मौके पर आ पहुँचे, रायसाहब।"

"जी हाँ। कहिए, रामहरख को आपने मेरे पास कैसे भेजा था ?"

"कैसे क्या रायसाहब। आपकी बंदूक की बड़ी सख्त जरूरत थी, गाँववालों ने बगावत कर दी है।"

"गाँववालों ने बगावत कर दी है ? थानेदार साहब ! गाँववाले बागी हैं, तो हम सब भी बागी हैं।" रायसाहब की आँखें शोले उगलने लगीं।

"थानेदार साहब ! हिंदुस्थान में जनता का राज हो गया है, अब आप लोग भी हथियार रख दें। गोरे बनिए इस देश के अब मालिक

रामहरख को घुड़क दिया। रामहरख वहीं बुत होकर खड़ा रह गया।

"अमर बेटी को हाथ न लगाना। उसे गिरफ्तार करने के पहले मुझे और रायसाहब को भी गिरफ्तार करना होगा। तुम लोग क्यों बैठे-बिठाए बर्र के छत्ते में हाथ डाल रहे हो? अँगरेजी राज की रक्षा करनेवाले काले कुत्तो। अँगरेजी राज टूटे जहाज पर लदकर सात समुदर पार पहुँच गया। हिंदुस्थान का राज अब जनता के हाथ में है। यदि हममें से कोई एक या हम सभी गिरफ़्तार किए गए, तो तुम्हें जनता की सेना का जोरदार मुक़ाबला करना होगा। एक नारा देते ही सारी सेना थाने पर टूट पड़ेगी।" लम्बरदार ने धमकी दी।

इनायतुल्ला भीतर-ही-भीतर बौखला उठा। बोला—"लम्बरदारजी! अभी तक मैं यही समझता था कि आप लोग मेरे साथ हैं, लेकिन मैं अब समझ गया कि आप तीनों ही बागियों के नेता हैं। लिहाजा राजद्रोह करने के लिये जनता को उभाड़ने के जुर्म में आप तीनों गिरफ्तार किए जाते हैं।"

अमर, रायसाहब और लम्बरदार, तीनों ने एक स्वर से उत्तर दिया—"हम तीनों तैयार हैं।"

"गाज़ी, अहमद, मुश्ताक! तीनों बागी नेताओं को बड़े घर तक ब-इज्जत ले जाओ।" इनायतुल्ला ने आदेश दिया।

तीनों सिपाही आगे बढ़े।

अमर ने नारा दिया—"अँगरेजो!"

"भारत छोड़ो।" रायसाहब और लम्बरदार ने उत्तर दिया।

"भारत माता की—"

"जय!"

"इन्क़िलाब—"

"जिंदाबाद ।'

कौमी नारा—'

"वंदे ऽऽऽऽ।'

कान्स्टेबिलों ने तीनों नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। इतनी देर बाद सहसा नारा की आवाज सुनकर जनता की सेना ने निर्मला के नेतृत्व में आगे कूच कर दिया। आजादी के दीवाने कोई दस हजार सैनिक दूने उत्साह के साथ थाने पर अधिकार कर लेने के लिये कमर कसकर तैयार थे। गांधीजी ने आदेश दिया था कि इस बार देश की आजादी के लिये अंतिम बार 'करो या मरो' का संकल्प लेकर जूझ पड़ना है। इस अंतिम युद्ध में प्रत्यावर्तन न होगा।

थाने का दरवाजा बंद कर दिया गया था। जनता वहीं रुक गई। कुछ चुने हुए जवान जान हथेली पर लेकर पीछे की दीवाल पर चढ़ गए। निर्मला भी उनके साथ ही थी। निर्मला ने 'कौमी नारा' की आवाज दी, और 'वंदे' कहकर सभी जवान थाने के आँगन में कूद पड़े। इनायतुल्ला ने गोली चलाने का आदेश दिया, लेकिन तीन बंदूकची कान्स्टेबिल तीनों नेताओं को 'बड़े घर' पहुँचाने चले गए थे। इनायतुल्ला ने स्वयं रिवाल्वर तान लिया, और एक निशाना लगाया। मोहनलाल नाम के एक युवक की जाँघ में गोली निकल गई। लेकिन निर्मला ने शेष जवानों के साथ इनायतुल्ला और उसके कान्स्टेबिलों को घेर लिया। इधर एक ने थाने का द्वार खोल दिया और जन सेना—

'[illegible] हो—"

'जनता का राज।'

'मिट जाएँगे—

"मगर आज।' के नारे देती हुई भीतर घुस आई।

निर्मला ने मुड़कर आदेश दिया—"थानेदार साहब! अब आप जनता के क़ैदी हैं। रिवाल्वर रख दीजिए।"

"रिवाल्वर रख दीजिए," "रिवाल्वर रख दीजिए," की आवाज़ें एक साथ इनायतुल्ला के कान फाड़ने लगीं। मोहनलाल ने भीड़ में से लंगड़ाते हुए निकलकर इनायतुल्ला के काँपते हुए हाथ से रिवाल्वर छीन लिया। रिवाल्वर उसने इनायतुल्ला की छाती पर तानकर कहना शुरू किया—काले कुत्ते! गोरों की गुलामी करते करते तू इतना राक्षस क्या हो गया कि अपने भाइयों का खून पीकर ही तेरी प्यास बुझ पाती है? मातृभूमि आज दाने-दाने, और एक एक धजी धजी का मुहताज हो गई। माताओं के स्तन सूख गए, और नंगे-भूखे बच्चे पिचककर रस-निचोड़े नीबू बन गए हैं। घूसखोर, आततायी! बोल, जनता आज तेरा न्याय करेगी, तुझे क्या दंड मिलना चाहिए?"

"प्राणदंड!", "गोली मार दो!" जनता ने चिल्लाकर उत्तर दिया।

इनायतुल्ला और उसके साथियों के प्राण सूख गए। तीनों बंदूकची कांस्टेबिल तीनों नेताओं को एक सींखचोंदार कोठरी में बंद कर ही रहे थे कि भीड़ के भीतर घुस आने तथा नारों की गूँज से घबराकर भाग खड़े हुए। बंदूकें उन्होंने वहीं छोड़ दीं। दीवाल फाँदते हुए तीनों कांस्टेबिल पकड़े गए। दो-तीन जवानों ने अपने अपने साफ़ों से उनके हाथ पैर बाँध दिए, और पकड़कर निर्मल के सामने वे लाए गए। कुछ लोग सींखचों की कोठरी की ओर भी पहुँच गए, और तीनों नेताओं के साथ शेष सभी क़ैदियों को भी उन्होंने मुक्त कर दिया। वे भी आँगन की ओर बढ़े। भीड़ ने अपने नेताओं को रिहा करके हर्ष के मारे उनके नाम पर 'ज़िंदाबाद' के नारे लगाए।

आँगन में आते ही सबने फिर उनका अभिनंदन किया, औ

बीच में आ जाने के लिये रास्ता बना दिया। अमर, रायसाहब और मुखिया, तीनों बीच में आ गए। मोहनलाल की धोती खून से लथपथ हो रही थी, परन्तु फिर भी वह रिवाल्वर इनायतुल्ला की छाती पर ताने हुए खड़ा था। अमर ने यह दृश्य देखते ही आदेश दिया—"ठहरो, मोहन भैया! आज, हम अपनी जीत की खुशी में किसी के भी प्राण न लेंगे। थानेदार को क्षमा करो।"

"नहीं, थानेदार को हम क्षमा नहीं करेंगे। उसने देश द्रोह किया है उसने मोहन भैया की हत्या की है।" भीड़ ने चिल्लाकर कहा।

मोहनलाल असमंजस में पड़ गया कि मैं अब क्या करूँ, और क्या न करूँ? सेनापति का आदेश मानूँ या जनता का।

इस गतिरोध को भंग करने के लिये सरदार तेजसिंह आगे बढ़े, और जन-सेना को संबोधित करते हुए बोले—"अमर बेटी ने जो कुछ अभी कहा, वह एक बड़ी ऊँची बात है, और मानने लायक है। लेकिन जनता का निर्णय भी नहीं टाला जा सकता। इसलिये इस मौके की गंभीरता को देखते हुए ऐसा करना चाहिए कि तीन दिन के लिये थानेदार और उनके साथियों को थाने में ही मेहमान बनाकर रक्खा जाय, और फिर चौथे दिन उन्हें गुड़गाँव से बाहर कुछ जवानों के साथ सुरक्षित पहुँचा दिया जाय।"

"खूब! खूब!! तेजसिंहजी ने दूध का-दूध और पानी-का-पानी निर्णय कर दिया है। क्या सब लोग इस निर्णय से सहमत हैं?" रायसाहब ने ऊँची आवाज से जनता से पूछा।

"हमने भैयाजी को सरपंच चुना है। उनका दिया हुआ फैसला हम सभी लोगों को मान्य होना चाहिए।" निर्मला ने रायसाहब का समर्थन किया।

"हम सभी लोग भैयाजी का फ़ैसला मानते हैं।" भीड़ ने एक स्वर से उत्तर दिया।

"अच्छा! तो सेनापति की हैसियत से मैं आदेश देती हूँ कि थानेदार साहब को मेहमानदारी के लिये सींकचेवाली कोठरी में पहुँचा दिया जाय, और उनके सभी साथियों की भी अच्छी तरह खातिर तवज्जो की जाय।" अमर के आदेश से दो दो जवानों ने एक एक कांस्टेबिल को हिरासत में ले लिया। थानेदार और कांस्टेबिल तुरंत ही सीखचों के पीछे बाँध दिए गए।

अमर ने नारा दिया—

"क़ायम हो—"

"जनता का राज।"

"मिट जाएँगे—"

"गोरे आज।"

"अँगरेजो!"

"भारत छोड़ो।"

"इंक़िलाब—"

"जिंदाबाद।"

"क़ौमी नारा—"

"वंदे SSSS."

थाने पर तिरंगा झंडा लहरा दिया गया।

× × ×

मोहनलाल चारपाई पर पड़ा है। उसकी जाँघ में पट्टी बँधी है। आसपास के गाँवों के सभी होशियार वैद्य-डॉक्टर उसको दिन में एक बार देखने आते हैं, और देश के लिये मरमिटने की चाह रखनेवाले अमर वीर की चिकित्सा करने का अवसर पाने में अपना सौभाग्य समझते हैं। सर्वत्र उसके कुशल-क्षेम की चर्चा चलती है, और

उसके दर्शन करने बहुत से लोग ५-७ मील की दूरी से भी गुडगाँव आते हैं।

अमर, रायसाहब, मुखिया छोटूलाल और सभी श्रद्धालु देशभक्त युवक मोहनलाल के प्रति असीम श्रद्धा और समवेदना पैदा हो जाने के कारण, बराबर उसके पास बने ही रहते हैं। उनके ऊपर जनता की रक्षा, सुख-शांति और न्याय का भार आ पड़ा है, परन्तु फिर भी वे मोहनलाल को नित्य देखना और पास में घड़ी-दो घड़ी बैठना नहीं भूलते।

निर्मला के मन में इस दिन न जाने कैसी हलचल मची रहती है, और उसे अब अपने घर दो घड़ी का जाना भी अच्छा नहीं लगता। वह गुडगाँव की शासन-व्यवस्था में भी अब प्रमुख भाग नहीं लेती। घूम-फिरकर वह मोहनलाल के घर ही चली आती है, और ठीक समय पर दवा देना सेवा-शुश्रूषा करना, तरह-तरह की बातें करके मन बहलाना और मोहनलाल की बूढ़ी माँ को सान्त्वना देना, इन सबका भार जैसे उसने अपने सिर पर ही उठा लिया है।

निर्मला के सहयोग और उसे निरन्तर देखते रहने से मोहनलाल को भी अतुल शांति मिलती है। किसी कार्य वश जब भी निर्मला घर या थाने चली जाती है, तो उसे कुछ अजब बेचैनी का अनुभव-सा होता है।

दोनों ही अपनी आन्तरिक विकलता और मानसिक हलचल का अनुभव करते हैं, परन्तु कोई भी किसी से कुछ कहता नहीं।

जाने वे परस्पर क्षण भर स्वप्निल-स्वर्णिम जा हो गए थे।

[८]

डॉ० हेमलता मुखर्जी शिशिर बाबू की पत्नी है।

उम्र अब लगभग ३० वर्ष से कम की नहीं, परंतु विवाह हुए कोई २ वर्ष ही हुए होंगे। जब वह डॉक्टरी पढ़ रही थी, तभी उसने निश्चय कर लिया था कि मैं आजन्म अविवाहित रहूँगी। उसके मा-बाप की वह एकलौती पुत्री थी। उन्होंने उसे पुत्र की भाँति ही पढ़ाया-लिखाया और उसे उतना ही आदर-मान एवं लाड़-प्यार भी दिया। डॉक्टरी पढ़ लेने पर उन्होंने बहुत चाहा कि हेमलता का विवाह हो जाय, और गृहलक्ष्मी बनकर आनंद के साथ रहे। परंतु हेमलता अपने निश्चय पर अटल रही। और, लाहौर में ही स्वतंत्र रूप से डॉक्टरी करने लगी। थोड़े दिनों बाद दो माह के हेर-फेर से उसके माता-पिता का स्वर्गवास हो गया। हेमलता अपने तईं पूर्णतया मुक्त हो गई। तीन-चार सौ रुपए कमाना और हर महीने उतना ही फूँक देना यही उसका व्यसन हो गया। दवाखाने में सवेरे-शाम बैठना, मरीजों को देखना और दोपहर में घर रेडियो सुनना, पास-पड़ोस की औरतों से गप्पें लड़ाना, प्रायः सिनेमा के दूसरे शो में जाना, यही उसकी दिनचर्या-सी हो गई। राजनीति में वह मार्क्सवाद को अधिक पसंद करती थी, और उसका यह विश्वास हो गया था कि देश का उद्धार कभी हो सका, तो वह रक्त-रंजित क्रांति से ही होगा। वह प्रायः सभा-सोसाइटियों में भी आती-जाती और अपने विचार के नेताओं से विशेषकर संपर्क-स्थापना का प्रयत्न करती।

कांग्रेस समाजवादी दल की ओर से लाहौर में भी दल की स्थापना और संगठन का कार्य-भार लेकर शिशिरकुमारदास लाहौर आए। उन्होंने समय-समय पर सभाओं और प्रेस-सम्मेलनों का आयोजन किया, और समाजवादी व्यवस्था की रूप-रेखा और उसकी स्थापना की आवश्यकताएँ समझाईं। गांधीवादी विचार-धारा देश को आगे ले जाने में असफल हो चुकी थी। वह मोर्चों पर मोर्चे हार चुकने के बाद विधानवाद और समझौते के मार्ग की ओर झुक गई थी। उसकी नसों में उष्णता और उफान नहीं रह गया था--इसी अभाव को दूर करके कांग्रेस और राष्ट्र में नव-रक्त का संचार करने के लिये समाजवादी दल का प्रसार और प्रचार सरल हो गया। नवयुवकों, किसानों और मजदूरों का नेतृत्व उसके हाथ में धीरे-धीरे आने लगा।

हेमलता शिशिर बाबू के तर्कों और व्याख्यानों से बहुत प्रभावित हो चुकी थी। वह बराबर उनके संपर्क में रहने लगी। उसने समाजवादी दल की सदस्यता भी स्वीकार कर ली। दल में सम्भवतः वह इसलिये और भी आई थी कि वह दल के संस्थापक के व्यक्तित्व से भी कुछ-कुछ अभिभूत हो चली थी। शिशिर बाबू स्वयं भी न-जाने क्यों हेमलता की ओर विशेष रूप से आकृष्ट हो गए थे। वह भी उसके निकट रहने में एक प्रकार के स्वर्गीय सुख का अनुभव करते थे।

धीरे-धीरे इस आकर्षण ने वह रूप धारण कर लिया, जिसे दुनिया प्रेम कहती है। २८ वर्ष तक अविवाहित रहकर भी अब हेमलता में इतनी शक्ति नहीं रह गई थी कि वह अपना व्रत आगे तक निभा सकती। वह शिशिर बाबू के चित्र की नित्य अपने कमरे को चारों ओर से बंद करके पूजा करती। एक दिन असावधानी से एक द्वार खुला रह गया। शिशिर बाबू उस दिन अकस्मात् उसके यहाँ आ निकले। दबे पैर वह उसके पीछे जाकर खड़े हो गए, और उन्होंने हेमलता की आँखें मूँद लीं। सामने चित्र था, और उस पर बेला के फूलों की

एक माला पड़ी हुई थी। तन्मय होकर हेमलता उसे एकटक देख रही थी।

किसी के आँख मूँद लेने पर हेमलता पहले तो चौंकी, परन्तु वह समझ गई कि यह शिशिर बाबू ही हैं। उसने अपनी कोमल हथेलियों में शिशिर बाबू के हाथ दबा लिए, और मुस्किराकर बोली—"शिशिर बाबू।"

शिशिरकुमार ने आँखें खोल दीं। शरमाकर हेमलता उठ खड़ी हुई, और शिशिर बाबू पर एक मद-भरी दृष्टि और एक मुस्किराहट फेंककर नीचे देखने लगी।

"हेमलता। तुम किसकी पूजा कर रही थीं?" शिशिर ने पूछा।

"अपने देवता की।" हेमलता ने उत्तर दिया।

"लेकिन यह चित्र तो किसी देवता का नहीं है।"

"लेकिन वह मनुष्य-रूप में ही देवता हैं। जरा तुम मेरी आँखों से देखो, युगों की साधना के बाद आज मैं उन्हें अपने इतना निकट पा रही हूँ।" हेमलता की आँखें प्रेमाश्रु से उमड़ आईं।

"हेमलता।"

"शिशिर बाबू। मेरे प्राण . . ."

"आज तक किसी की नशीली चितवन भी मुझे न झुका सकी परन्तु तुम्हारी इन आँखों ने मेरे अंतस्तम को अपनी ओर लिया है। पता नहीं, तुम्हारे निकट आकर हृदय में कैसी जीब धड़कन होने लगती है, रोम-रोम स्वर्गीय मधु का पान करके बेहोश हो जाते हैं। चेतना के तार-तार सिहर उठते हैं। मैं जितना ही दूर भागने का प्रयत्न करता हूँ, उतना ही जैसे कोई अपनी बाँहों में कसकर अपने हृदय के निकट तक खींचता चला आता है।"

"यह इसलिये कि तुम उससे मिलकर एक हो जाओ।" हेमलता मुस्किरा उठी।

रूपकिशोर को हेमलता के साथ हँसने-बोलने और रहने-सहने के लिये पूरी छूट मिल गई। उसकी पत्नी पीहर कई महीनों से थी। हेमलता और रूपकिशोर दोनों ही एक साथ रहते और एक ही कमरे में सोते-बैठते। हेमलता भी जैसे अपने दाम्पत्य जीवन के बंधन से मुक्त हो गई थी, और उसने अपने का नए सिरे से अपने नए प्रेमी को समर्पित कर दिया।

हेमलता बहुत थोड़े समय के लिये ही दवाखाने जाती, और बाकी समय बँगले ही में बीतता। इधर रूपकिशोर का भी यही हाल था। उसने अपना सारा रोजगार और काम-धंधा अपने मुनीमों पर छोड़ दिया। आम तौर पर घंटे-दो घंटे से ज्यादा गद्दी पर न रहता।

शिशिर बाबू को जेल गए लगभग ५-६ दिन हो गए थे।

रात का पहला पहर बीत रहा है। बंकिम चंद्र बरगद की दो नीचे लटककर झूमती हुई डालों में से हेमलता के कमरे में झाँक रहा है। झरोखा खुला है और कमरे में लगभग १० कैंडिल पावर की हरी बत्ती जल रही है। दीवालें, हेमलता स्वयं और शयनागार की प्रत्येक वस्तु हलके हरे रंग में रँग गई है। छत की एक धन्नी के कुंडे में लटका बिजली का पंखा हेमलता के रेशमी आँचल को आंदोलित कर रहा है।

वह रूपकिशोर के आने की प्रतीक्षा कर रही है। उसके सोने का समय हो चुका है, और अँगड़ाई तोड़कर, जँभाई लेकर बार बार वह अपने को सजग बना रही है। आज वह नहीं आया। जाने कहाँ चला गया। शाम तक हेमलता उसके साथ कैरम खेलती रही है। भोजन भी यहाँ नहीं करके गया।

रूपकिशोर को अपने बँगले लौटने पर खबर मिली थी कि उसका एकमात्र पुत्र सख्त बीमार है, और वह पितृस्नेह से विह्वल होकर

अपनी ससुराल चला गया। उसे यह खयाल नहीं रह गया था कि वह कह जाए कि आज रात को नहीं आऊँगा। हेमलता को अकेले चैन नहीं पड रही थी। कभी झरोखे पर खडी होकर किसी पेड़ के नीचे से उसके आने की कल्पना करती, कभी रूपकिशोर के बँगले की ओर झाँकती और कभी कोई आहट-सी पाकर कान खड़े करके उस आहट का अंदाज़ लेती, और जब रूपकिशोर न आता, तो उच्छ्वास छोडकर सामने चंद्रमा की ओर देखने लगती।

उसे विकलता इस बात से और भी हो रही थी कि क्या आज भी इतनी मनहर रात यों ही निकल जायगी? ऐसी बेचैनी उसे शिशिर बाबू के साथ विवाह कर लेने के बाद के कुछ सुनहले दिनों में हुआ करती थी, जब शिशिर बाबू कह जाते कि मैं अमुक बजे तक लौट आऊंगा, और उन्हे प्राय थोडी-बहुत देर लौटने में हो जाती। परतु शिशिर बाबू का जीवन किसी एक के उष्ण प्यार मे बँधकर बीत जाने को नहीं था, और उनका प्राय. घर मे दूर रहना, शहर से बाहर जाना एक आम बात हो गई। हेमलता के हृदय में प्रेम का जो ज्वार इतनी तेजी से उठा था, वह किसी कूल को अपने बंधन में न पाकर उतनी ही तेजी के साथ उतर चला। परंतु इसमे भी उसके मन की अशाति न मिटी। यौवन के स्वप्निल क्षणों को तेजी से भागते देखकर उसका अतस्तल कराह उठा।

"वह न आएगा।"

हेमलता के ओठ हिले, और उसकी आँखों म विषाद की रेखाएँ छा गईं। अभी तक वह बैठी थी, तकिए का सहारा लेकर लेट गई। आँखें मूँदकर वह नींद बुलाने लगी। परतु अब नींद कहाँ?

ठंडी हवा के झोंके झरोखे से आने लगे, और वह सोचते सोचते हलकी नींद मे सो गई।

स्वप्न मे हेमलता को अनुभव हुआ कि जैसे रूपकिशोर आ गया।

सफ़ेद बुर्राक धोती और तंजेब का कुरता पहने हुए हैं, जिसमें से उसके गठीले, गोरे रग की काति दमक मार रही है। आते ही चिर-परिचित खस की नशीली महक कमरे मे, उसके नासिका-रंध्रों से होकर मस्तिष्क मे छा गई।

हेमलता ने मुस्किराकर उसका स्वागत किया, और दोनो पास-पास पलग पर बैठ गए। हेमलता ने रूपकिशोर को अपनी गोरी, मसृण बाँहों मे उलझा लिया, और रूपकिशोर ने बदले मे उसके अगूरी ओठों पर अपने ओठ रख दिए। कुछ ही क्षणों मे दोनो एक दूसरे की बाँहों में बँधकर लेट गए।

हेमलता नशे मे विभोर हो गई। रूपकिशोर ने जैसे उसके बंधन से अपने को मुक्त कर लिया, और वह उठकर चल दिया।

हेमलता—"रूप बाबू। मेरे प्रियतम !! ठहरो !!!" कहकर उसके पीछे हो ली।

रूपकिशोर जैसे सुनी-अनसुनी करके आगे बढ़ता ही गया। नींद में ही हेमलता उसका पीछा करती रही।

शिशिर बाबू और देशभक्त दोनो अभी कुछ देर पहले ही जेल से फ़रार हो गए थे। देशभक्त अपने गाँव का ओर अपने गुरुदेव स ...देश लेकर चले गए थे, और शिशिरकुमार अंतिम बार अपनी ...ी से मिलने घर पहुँचे। कमरे के पास पहुँचते ही उन्होने देखा, ...हमलता कमरे से बाहर निकली, और लॉन की ओर चल दी। उसके मुँह से कुछ अस्फुट शब्द भी निकल रहे थे—"ठहरो, रूप बाबू ! मेरे राजा !!" कुछ फासले से दबे पाँव शिशिर बाबू ने उसका पीछा कर लिया।

हेमलता रूपकिशोर के बँगले की ओर चली। वह चलती ही चली गई। न उसने कहीं ठोकर खाई, और न उसकी कहीं आँखें खुलीं। शिशिर बाबू का सदेह पूरा हो गया। वह समझ गए कि मेरे पीछे

वह रोज़ रूपकिशोर के यहाँ आती-जाती है। दोनो में अवश्य गहरी नोक-झोंक है। उन्होंने अपना रिवाल्वर ताना, और आवेश में घोड़ा दबा दिया।

"ठाँय।" और "आह।" करके हेमलता का फूल-सा कोमल शरीर रक्त में लथपथ होकर जमीन पर लोटने लगा। दो क्षण के लिये उसकी आँखें खुलीं, परतु उसके स्वप्न के साथ उसके जीवन का भी सदा के लिये अंत हो गया। गोली उसकी कमर में लगी, परंतु सहसा नींद में इतनी बड़ी वास्तविक चोट खाकर उसकी हृदय की गति रुक गई। नीरव निशीथ में एक चीत्कार हवा में गूँजकर रह गई।

शिशिर बाबू उसकी ओर से निश्चित होकर वहाँ से नौ-दो-ग्यारह हो गए।

उन्हे देश के लिये बहुत कुछ करना जो शेष था।

[६]

रात का पहला पहर सम त हो गया।

सभी श्रद्धालु और सवेदना रखनेवाले अपने-अपने घर वापस चले गए थे। कुछ को गाँव की चौकसी के लिये पहरे पर जाना था, वे भी चले गए। मोहनलाल क पास क्वल निर्मला रह गई। निर्मला मोहनलाल की वृद्धा मा को खिला-पिलाकर सोने को भेज कर चलने को हुई कि सहसा बड़ी-बड़ी बूँदें पड़ने लगीं। बिजली काफ़ी देर से बादलों के श्यामल अचल में कौंध रही थी। देखते-ही-देखते घनघोर वृष्टि होने लगी।

मोहनलाल अब निर्मला की निरतर सेवा और देख-भाल से काफ़ी अच्छा हो चला था। उसे जाने को तैयार देखकर बोला—"निर्मला, तुम भी जाती हो? कहाँ जाओगी? पानी तो बड़ी जोरों का पड़ रहा है।"

निर्मला ने मुस्किराकर उत्तर दिया—"मै कागज की थोडे न हूँ कि गल जाऊँगी। अम्मा और भाभी रास्ता देखती होंगी कि निर्मला अभी खाने नहीं आई।"

"लेकिन इतना तो वे लोग भी समझ सकती हैं कि इतना पानी पड़ रहा है, तो निर्मला कैसे आएगी। यहीं खा लेना।"

"ठीक है।" मुस्किराकर निर्मला ने कहा—"पर पराए घर रात को किसी लड़की का रहना ठीक नहीं है।"

"अच्छा! तो इसके मानी यह हुए कि जब यह घर पराया है, तो मैं भी पराया हुआ, क्यों? फिर तुमने इतनी लगन के साथ मेरी तीमारदारी क्यों की थी?"

"इसलिये कि तुम्हें गोली जो लगी, वह मेरे ही कारण लगी थी। न मैं थाने पर चढ़ने की सलाह देती, और न तुम्हें चोट लगती।"

"इसमें तुम्हारा क्या दोष है? गुलामी की ज़ंजीरों में जकड़ी हुई भारत माता के लिये तो मैं अपने प्राणों की भी बाजी लगा सकता हूँ, निर्मला। गुड़गाँव के थाने पर तिरंगा लहराता देखकर मुझे अपने घाव की पीड़ा भूल गई है। उलटे मुझे तो अपने घायल होने पर नाज़ है। और, साथ ही मुझे इस बात पर भी नाज़ है कि तुम्हारे ही अहिंसक नेतृत्व में ही जनता की सेना ने आजादी के मोर्चे को जीता। निर्मला, बड़े-बूढ़ों की बात का खयाल नहीं करते। उनके विचार परिवार और पास-पड़ोस के छोटे-से घरौंदे में ही सीमित हैं। वे उससे आगे बढ़कर समाज और राष्ट्र के सुख-दुख की कल्पना नहीं कर सकते। तुम्हारी कीमत तो मैं समझता हूँ निर्मला। मैं नहीं जानता कि तुम्हारे प्रति मुझमें कितनी श्रद्धा, कितनी सम्मान की भावना पैदा हो गई है।"

निर्मला रुक गई थी। वह नीचे पड़ी चटाई पर बैठ गई, और क्षण-भर सजल नेत्रों से पावस-बाला की आँखों की सजल बरसात देखकर उसने मुँह नीचे कर लिया। बोली—'एक अबला लड़की के क्षुद्र साहस की क्या क़ीमत हो सकती है। मोहन बाबू! पुरुष मुँहजबानी तो हमारी जाति की प्रशंसा में आकाश-पाताल के कुलावे मिला डालता है, लेकिन व्यवहार में वह आज भी स्त्री को अपनी जूती से बढ़कर नहीं मानता।"

"तुम्हारे मुँह से ये बातें शोभा नहीं देतीं निर्मला! यदि मैं हृदय चीरकर दिखा सकता, तो तुम देखतीं कि इसमें तुम्हीं एक आज तक बसी हो!"

"ये तो सब कहने की बातें हैं!" निर्मला के ओठों पर मुस्किराहट की एक रजत-लहर दौड़ गई।

"सच मानो निर्मला! जब तुम चली जाती हो, तो मुझे रात-भर नींद नहीं आती। जब तुम्हें फिर सवेरे देख लेता हूँ, तभी जाकर कुछ शांति मिलती है। पता नहीं, तुमने क्या जादू-टोना डाल दिया है।" मोहनलाल मुस्किरा पड़ा।

"मैं कामरूप कमेच्छा की जादूगरनी हूँ।" निर्मला कुछ जोर से खिलखिलाकर हँस पड़ी।

"मालूम तो यही होता है, क्योंकि तुममें आदमी को मोह लेने की अद्भुत शक्ति है। कहीं हिरन बनाकर न छोड़ रखना।" मोहनलाल भी खिलखिला पड़ा।

"हिरन! मैं तुम्हें अपने सपनों का राजा बना दूँगी।" कहने को तो निर्मला इतना स्पष्ट कह गई, परंतु मारे शरम के उसकी आँखें नीचे झुक गईं, और गोरे-गोरे गालों और कानों में लाली दौड़ गई। वह दाँत से जीभ काटकर रह गई।

मोहनलाल ने उसका एक हाथ अपने हाथों में ले लिया, और उसके गले में अपनी एक बाँह डालकर उसे अपनी ओर खींच लिया। दूसरे हाथ से उसके चिबुक ऊपर उठाकर उसकी आँखों में अपनी आँखें डालकर बोला—"सचमुच? मैं तुम्हें अपने स्वप्न-देश की रानी बनाऊँगा। तुम कितनी सरल और सुंदर हो निर्मला! मन होता है कि मैं तुम्हारा दिल, अंतर और अंग-अंग चूम लूँ।" उसने उसकी हथेली में एक चुंबन आँक दिया। निर्मला प्रथम प्यार का स्पर्श पाकर आँखों को पलकों में छिपाए बेसुध हो चली।

× × ×

"निर्मला नहीं आई बहू, अभी तक। पानी थम चला है, शायद अब आती हो।" चारपाई पर बैठी हुई किशोरी अपनी बहू अंजना से बोली।

अंजना को निर्मला का रात-रात-भर गायब रहना और आधी-आधी रात तक लौटना बड़ा अखरता। द्वार खोलने जाना, उसके लिये रसोई लिए हुए बैठे रहना और उसके बहुत देर तक न आने पर रसोई उठाकर रखने का काम उसे ही करना पड़ता। उसके रहते सास को इन सब बातों के लिये वह कष्ट नहीं दे सकती थी। फिर सबसे बड़ी बात यह कि वह अब निर्मला के विरुद्ध अपनी सास की राय बजा देने के लिये प्रयत्नशील हो चली थी। वह चाहती थी कि यदि मैं फिर से अपना खोया हुआ स्थान प्राप्त न भी कर सकूँ, तो कम-से कम मुझे निर्मला से प्रतिशोध लेना तो छोड़ना नहीं चाहिए। अपने मन की जलन निकालने के लिये यह अच्छा मौका उसके हाथ लग गया था। उसने पड़ोसियों और अपनी सहेलियों के द्वारा उसके रात को देर तक न लौटने, दिन-दिन-भर गायब रहने के संबंध में जाँच-पड़ताल शुरू कर दी। घर का आदमी जब घर के आदमी पर संदेह करने लगता है, तो बाहर के लोग नमक-मिर्च लगाकर उसकी और भी पुष्टि किया करते हैं।

नवधारा सबसे मिली और फिर भी सबसे अलग और सबकी टीका-टिप्पणी में अग्रगण्य है। उसने अंजना को निर्मला और मोहनलाल के बारे में गुप्ततम सूचनाएँ लाकर दीं। आज अंजना इस खबर को अपनी सास के कानों में डाल देना चाहती थी। बोली—'अम्माजी! आप तो बीबीजी को कुछ कहना-सुनना बुरा समझती हैं। कल को उन्होंने आपकी नाक कटा दी, तो हम सभी लोग मुँह दिखाने लायक भी नहीं रह जायँगे। जवान लड़कियों को इस तरह दिन-रात घर से बाहर न रहना चाहिए। लेकिन कौन उन्हें कहे, और क्या आपसे कहा जाय।"

"क्यों बहू! निर्मला भी तो वही कर रही है, जो उसका भाई करता है। निर्मला का नाम आसपास के गाँवों में भी फैल गया है।

सभी लोग उसके काम की, उसकी बहादुरी की सराहना करते हैं। अभी तक देवकुमार भी लाहौर से नहीं लौटा। जाने ऐसा क्या काम हो गया। गुड़गाँव को आजाद करने में निर्मला के साहस और कार्य के बारे में सुनकर तो वह भी उसकी प्रशंसा करता।"

"आप बड़ी हैं, अम्माजी। मेरी छोटी-सी अक़्ल में जो बात समझ में आई, वह आपके सामने रख दी। जान-बूझकर आदमी न देखने का नाटक करे, तो फिर आगे कुछ भी कहना बेकार है। आजकल का ज़माना पहले-जैसा नहीं रहा। दूसरों से सुनती हूँ, तो जी जलकर रह जाता है। मैंने सोचा था कि आपको समाज में नीचा देखने के पहले आगाह कर दूँ, लेकिन...खैर। मुझे क्या करना है।"

'तूने क्या सुना है, बहू? मैंने तो आज तक निर्मला की कोई बुराई नहीं सुनी।"

"आपसे सब लोग इस तरह की बातें कहने-सुनने में झिझकते हैं। बीसों बातें दुनिया की मुझे सुननी पड़ती हैं।"

"कुछ बता भी तो, लोग तुझसे क्या कहते हैं?"

"कहते क्या हैं? इस बात की तो गाँव-भर में चर्चा है कि बीबीजी और मोहनलाल दोनों लैला-मजनू बने हुए हैं। मैं यह कभी नहीं [illegible]त कर सकती कि एक खत्री का लड़का ब्राह्मणों का दामाद [illegible]। यह नाक अपनी कटी कि रही। इसे आप समझ लीजिए। मैं यह सोचती थी कि बीबीजी खुद इतनी समझदार हैं। आप ही राह पर आ जायँगी। लेकिन अब लाचार होकर यह बात आपके आगे रखनी पड़ी। अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है, अम्माजी। बिगड़ती बात अभी भी बन सकती है। पीछे मैं नहीं जानती। आपकी लड़की है, आप जानिए फिर। देख लीजिए, आधी रात होने आ रही है। अभी तक सवेरे की निकली घर में चरण वापस नहीं धरे हैं।"

"लेकिन लोग जो कहते हैं, उसे तूने तो आँख से नहीं देखा है अभी ? क्यों बहू !"

"आज नहीं, तो कल आप भी आँखों से देख लीजिएगा। मेरी बात का जब कोई विश्वास ही नहीं है, तो मैंने गलती की कि आपको समय रहते चेतावनी दी। अच्छा ." अजना उठ खड़ी हुई—"मै रसोई धरे आती हूँ उठाकर। अब कहाँ तक बीबीजी की राह देखी जाय।"

किशोरी ने एक दीर्घ उच्छ्वास छोड़ी—"रख दे उठाकर फिर।" किशोरी आँगन की ओर चली गई। वह दालान में चारपाई बिछाकर लेट रही।

अजना रसोई उठाकर धर आई, और अपने कमरे मे आकर पलग पर पड़ रही। पानी काफ़ी बरस जाने से ठड हो गई थी। इस-लिये उसने आज भीतर ही सोने का निश्चय किया।

सास ने बुलाया भी—'बहू ! बाहर आ जा। भीतर तो बड़ी गरमी होगी।" तो भी वह नहीं गई। अजना का तीर निशाने पर लग चुका था, और सभवत: इसलिये मन-ही मन वह बहुत प्रसन्न थी। उसके दिल की जलन कुछ-कुछ मिट गई थी। निर्मला से उसने उसके द्वेष, ईर्ष्या और जलन का आज बदला ले लिया था। वह निश्चय कर चुकी थी कि कुल-गौरव और समाज-व्यवस्था की आड़ में निर्मला के चलनेवाले रुपहले सपने या तो भंग कर देगी या फिर अब उसके लिये इस घर मे कोई स्थान शेष न रह जायगा।

अजना ने करवट बदली, और उसकी विचार-धारा का केंद्र भी बदला। सहसा उसे अपने एकाकीपन का अनुभव हुआ। उसके जीवन-देवता अभी तक नहीं लौटे हैं। उन्हें गए एक हफ्ता होने जा रहा है। उसे उस दिन की उपेक्षा और अपमान कभी न भूलते—परन्तु आज वह नहीं हैं, इसलिये उनकी अनुपस्थिति में वह

उनसे रूठी नहीं रह सकती। उनका कोई अनहित नहीं सोच सकती।

परंतु रह-रहकर उसे क्रोध इस बात पर आता है कि मैं तो उन्हें इतना चाहती हूँ, लेकिन उनसे मुझे कभी इतना प्यार नहीं मिला। मैं साँवली हूँ, तो क्या, परंतु ऐसी बदसूरत भी नहीं हूँ। लँगड़ी-लूली अधी-कानी भी नहीं हूँ। कोई गरीब घराने की नहीं। परंतु न वह मेरी क़दर करते हैं, और न उनके घरवाले कोई। मैं तो उनकी तरफ़दारी करते-करते मरी जाती हूँ, लेकिन वह निर्मला और अम्माजी का ही बराबर पक्ष लिया करते हैं। मेरी ओर से एक शब्द भी मुँह से नहीं निकालते। मुझे क्या मालूम था कि मैं इतना पढ़-लिखकर भी इन कसाइयों के हाथ सौंप दी जाऊँगी। जितना खाने न देंगी, उतने से ज्यादा तन से निकलवा लेंगी। घर पर कभी चक्की नहीं पीसी, चूल्हे नहीं झोंके, और जूठे बरतन नहीं माँजे। लेकिन वह भी मुँह उठाकर कभी नहीं कहेंगे कि अभी इससे इतना क्यों काम तुम लोग लेती हो। फिर तो जिंदगी-भर चूल्हे-चक्की से सिर पचाना ही होगा, थोड़ा-बहुत तो जीवन का आनंद ले लेने दो। ये ही थोड़े-से दिन मौज-बहार के होते हैं।

लेकिन उनके दिल में ही मेरे प्रति कोई मान की भावना नहीं है, तो दूसरा मुझे क्यों मान देने लगा? उस दिन बाहर जाना ही इतना जरूरी हो गया कि मुझे बेहोश हो जाने पर छोड़कर चले गए। ऐसा कठोर दिल तो किसी पुरुष का नहीं देखा। फिर वह तो कवि होने का दावा भरते हैं। आए बड़े कहीं के कवि! दिन-रात शेखचिल्लियों के-से सपने देखना और अफ़ीमचियों के-से नशे में डूबे रहना, लंबी-चौड़ी देशोद्धार की बातें बघारना और मौका आने पर दुम दबाकर रण-क्षेत्र से खिसक जाना, बस, यही उनकी कविता है, और यही उनकी राजनीति है। मन होता है कि बस

लेकिन मै उनकी पत्नी कहलाती हूँ। मन फट जाए। अलग हो जाए—समाज की बला मे। लेकिन दोनो को अलग-अलग होने का अधिकार नहीं है। स्वार्थी पुरुषो ने धर्म का बाना पहनाकर स्त्री-जाति को इस बुरी तरह अपमान, घृणा, हीनता और कुढन के लिये बाध्य करनेवाले सामाजिक नियम बना रक्खे हैं कि यदि स्त्री उनको तोडने का प्रयत्न करे, तो उसे कुलटा, कुल-कलकिनी, पापिनी कहा जायगा। जहाँ प्रेम नही है, जहाँ मेरा कोई आदर-मान नहीं है, और जहाँ कोई सुख-शाति नहीं है, ऐसे बधन में अजना को अब कोई बाँधकर नहीं रख सकता। अब की मैं स्पष्ट रूप से कह दूँगी कि मै तिरस्कार, उपेक्षा और ईर्षा, तानेजनी तथा गालियाँ सहकर इस घर मे नहीं रह सकती। तुम्हारे लिये ही तो मैं अपने मा-बाप और भाइयो को छोड़कर यहाँ आई। जब तुम्हीं मुझे नहीं चाहते और कढाई की जलन समझते हो, तो मेरा इस घर से क्या वास्ता है? मै तुम्हारी भी अब कोई नहीं।

अजना के आँसू बह रहे थे। रोते-रोते उसकी हिचकियाँ बँध गई। उसने फिर करवट बदली, और आँचल मे आँसू पोंछ डाले। क्षण-भर के लिये उसका चचल मन उसके अतीत बालापन की ओर दौड़ गया, और उसके सामने से केशर की मनहर मूर्ति नाचती हुई निकल गई। वाह रे केशर। एक तुम थे कि मेरे लिये सबसे झगडे मोल लेते फिरते थे, और मुझे कभी भी अकेला होने का अनुभव नहीं होने देते थे। और, एक वह हैं। इस तुलना से अजना के मन में अपने पति के प्रति घृणा और उपेक्षा की तीव्र भावना जाग उठी। उसने फिर उच्छ्वास ली, और उसका सिर घूम उठा। वह क्षण-भर के लिये मूर्च्छा में आ गई।

थोड़ी देर मे किसी के द्वार खटखटाने और किसी को आवाज देकर किवाडे खुलवाने की पुकार आने लगी। अर्ध-चेतना की अवस्था

मे अञ्जना को जैसे यह लगा कि निर्मला आ गई है, और वही दरवाजे खटखटा रही है। उसे क्षाब हुआ कि इतनी रात बीते बीबीजी क्यों आती हैं? नहीं जाऊँगी खोलने आज। मै उनकी रात दिन की नौकरानी नहीं हूँ। लेकिन...फिर "खट! खट!! ..निर्मला! निर्मला!! खोलो, दरवाजे खोलो!" की ध्वनि उसके कानों तक पहुँची। उसे कुछ चेतना हुई। यह निर्मला नहीं है, तो फिर इतनी रात को निर्मला को कौन आवाज दे रहा है? वह तो हो नहीं सकते। इस वक्त कोई गाड़ी लाहौर से इधर नहीं आती। शायद निर्मला के मजनू होंगे कोई। .. उसने फिर ध्यान से आवाज सुनी। आवाज पहचानी-सी लगी। ओह! वह ही आ गए मालूम होता है। मैं भी कैसी हूँ कि ...

अञ्जना चट से उठी। दीपक जलाकर द्वार की ओर हौले-हौले चली। ठंडी हवा के झोंकों से वह पूर्णतः सजग हो चुकी थी। और, उनके आने के आह्लाद मे उसके रोम-रोम में प्रफुल्लता और चंचलता छा गई थी। उसका अंतस्तल पैरों से कहता, तेजी से बढ़ो। परंतु हाथ का वायु की गतिशील लहरों से प्रकंपित दीपक [illegible]ता, इतना तेज नहीं, मैं बुझ जाऊँगा। दीपक बड़ा कठोर [illegible] उसने अंतस्तल के वेग के ऊपर भी विजय पाई।

अर्गला हटाकर अञ्जना ने द्वार खोल दिए। दीपक के मंद प्रकाश मे देखा—वही हैं। परंतु दाढ़ी बढ़ी हुई है, बाल बिखरे और भीगे हुए हैं। देवकुमार के सारे कपड़े भी भीगे हुए थे। हाथ मे जाते वक्त जो झोला ले गए थे, वह भी साथ में नहीं है। अपने पति का यह स्वरूप देखकर उसका हृदय धक् से करके रह गया। वह गौर से, परंतु अन्यमनस्का-सी होकर उसकी ओर देखने लगी। उसकी वाणी मूक हो गई थी—परंतु उसके नयन पूछ रहे थे—"नाथ! तुम्हारी यह दशा क्यों? इतने दिन कहाँ लगाए?"

"चलो। भीतर चलो।" और देवकुमार ने अपने पीछे के दरवाजे बंद कर दिए।

दोनो भीतर की ओर चले। देवकुमार ने पूछा—"निर्मला वगैरा सो गईं क्या? बड़ी गहरी नींद में सोती हैं।"

"जी हाँ।" अजना ने सोचा कि कमरे में चलकर ही सब बातें कहूँगी। अभी बेचारे थके-थकाए और भीगे हुए आए हैं। पहले कुछ विश्राम तो कर लें।

कमरे में पहुँचकर अजना ने दीपक कमरे के एक कोने में रक्खे हुए दीवट पर रख दिया। देवकुमार पलग पर बैठ गए। बोले—"अजो रानी। कोई दूसरा धोती-कुरता दो। बदल लूँ। फिर कुछ खिलाओ, हो तो। बड़ी जोरों से भूख लग रही है। दो रोज से खाने को कुछ भी नहीं मिला है।"

"दो रोज से। अच्छा।। ऐसी क्या बात हो गई थी?" अजना ने सूटकेस में कपड़े निकालते हुए पूछा।

"सारा क़िस्सा तुम्हें अभी सुना दूँगा। जरा दम ले लेने दो।"

अजना ने धोती कुर्ता निकालकर देवकुमार को दिया। देवकुमार ने भीगी बनियान और कुर्ता उतार डाले, और धोती बदलने लगे। अजना उसके लिये खाना लेने रसोईघर की ओर चली गई। निर्मला नहीं लौटी थी, और उसके हिस्से की पूड़ियाँ और साग-तरकारी रक्खी थीं। देवकुमार कपड़े भी नहीं बदल पाए थे कि अजना ने थाली लाकर पलग पर रख दी।

धोती बदलकर देवकुमार थाली पर टूट पड़े। बड़े-बड़े कौर मुँह में रखकर बिना अच्छी तरह चबाए ही उन्हें निगलने लगे। कुछ ही मिनटों में उन्होंने थाली साफ कर दी, और बोले—"और भी कुछ है क्या?"

"और तो कुछ भी नहीं है। निर्मला बीबी ने नहीं खाया था, उन्हीं

के हिस्से की पूड़ियाँ रखी हुई थीं। मुझे क्या अंदाज था कि तुम इस समय तक आ जाओगे।"

"निर्मला ने क्या नहीं खाया? कुछ अस्वस्थ है क्या वह?

"जी हाँ। उन्हें रोग तो एक हो गया है .."

"कैसा रोग?"

"यही.. प्रेम का। समझे कुछ?" अंजना खिलखिलाकर हँस पड़ी। इस हँसी मे निर्मला के प्रति घृणा, द्वेष और व्यंग्य की भावनाएँ छिपी हुई थीं।

"प्रेम का रोग? क्या कहा? जरा समझाकर कहना तो। यह प्रेम का कौन-सा रोग उसे हो गया है? कब से हो गया है?" देवकुमार ने पानी पीने को गिलास उठाया था, परंतु वह वैसे-का-वैसा ही स्थिर हो गया।"

"यह आप बीबीजी की ही जबानी सुनें, तो ठीक रहेगा।"

"कहाँ है निर्मला? बुलाओ उसे। कह दो कि देव भैया ने बुलाया है।"

"अजी क्या कीजिएगा जगाकर। बीबीजी इस समय अपने प्रेमी की बाँहों में बँधी सो रही होंगी।"

"वह प्रेमी यहाँ आने की हिम्मत करता है, और इस घर की छत के नीचे ही यह प्रेम-कांड चल रहा है, और तुम लोग उसे अपनी आँखों से देख रही हो? क्यों?" देवकुमार की थकावट और नींद हिरन हो गई। पानी पीकर गिलास और थाली नीचे रख दी।

"मैंने तो सब बातें अम्माजी के कानों में डाल दी हैं। परंतु वह भी जब कुछ नहीं ध्यान देतीं, तो मैं क्या कर सकती हूँ। निर्मलाजी का यह हाल है कि रात-रात-भर घर नहीं आतीं। मोहनलाल गोली से घायल हो गया था। उसी के पीछे यही हजरत शहीद हो रही हैं।

दिन-भर उसकी परिचर्या करती हैं, और रात को सपनों का संसार बसाती हैं।

"यह मोहनलाल कौन ? स्व० बुद्ध्लाल खन्ना का लड़का ?"

"जी हाँ।"

"वह घायल कैसे हो गया ? गोली कैसे लग गई उसे ? क्या पुलिस ने यहाँ भी गोलीकांड शुरू कर दिया है ?"

"जी हाँ। सुनने मे यह आया था कि अमर रानी और बीबीजी ने मिलकर तीन-चार रोज पहले एक जुलूस निकाला। अमर रानी, रायसाहब और मुखियाजी थानेदार से जाकर बोले कि थाना आप हम लोगों को सौंप दीजिए। तीनो को थानेदार ने हवालात में उठा-कर बंद कर दिया। इतने ही मे कहते हैं कि बीबीजी, मोहनलाल और थोड़े-से अपने दूसरे प्रेमियों को लेकर..."

"प्रेमियों।" देवकुमार ने रोका। "मोहनलाल के अलावा निर्मला के और भी बहुत-से प्रेमी हैं ? आश्चर्य। हूँ। आगे ?" जिज्ञासा और निर्मला के साहस और देश-प्रेम ने उसके विषय में उत्पन्न आशंका को दबा दिया।

अमर कहने लगी—"सब लोग मिलकर थाने के पीछे चढकर भीतर कूदने लगे। थानेदार ने रिवाल्वर का घोड़ा दाग दिया। निर्मलाजी साफ बच गईं, और गोली मोहनलाल की जाँघ में लगी।"

"शाबाश। शाबाश।। और फिर ?"

"सब लोगों ने मिलकर थानेदार और कांस्टेबिलों को बंद कर रखा है। फ़ौज जब सिर पर आ पहुँचेगी, तब एक-एक करके सभी लोग गोली से उडा दिए जायँगे। औरतों की बेइज्जती होगी, गाँव-का-गाँव उजड़ जायगा। यही होना अब और बाकी है!" अंजना ने उच्छ्वास छोड़ी।

"गुड़गाँव इसके मानी हैं कि आजाद हो गया! शाबाश अमर!"

शाबाश निर्मला ! और मोहनलाल !!! अजो रानी ! यदि निर्मला मोहनलाल से प्यार करती है, तो बड़ी खुशी से मैं दोनों का ब्याह कर दूँगा। सच बताओ, क्या प्यार को तुम इतना बुरा समझती हो कि दो प्यार करनेवालों को तुम घृणा और तिरस्कार की दृष्टि से देखो। क्या तुमने कभी किसी से प्यार नहीं किया ?" देवकुमार मुस्कि-राकर अंजना की ओर देखने लगे।

अंजना का गला रुँध गया, परंतु उसने सारी मानसिक शक्ति एकत्र करके उत्तर दिया—"नहीं ! कभी नहीं !! पता नहीं कि तुम मुझे क्या समझते हो !"

"बिलकुल काली कौवी !" देवकुमार ठठाकर हँस पड़े।

"तुम्हीं कौन बहुत स्वर्ग के देवता हो ?" अंजना खीझ गई।

"अच्छा ! यह बताओ कि अमृतसर चलोगी ?" देवकुमार ने अंजना के गले में हाथ डालकर बड़े प्यार से पूछा।

"क्यों नाहक जलाते हो ?"

"नहीं, सचमुच ? अजो रानी ! मैं गुड़गाँव में नहीं ठहर सकता। मैं लाहौर जाते ही पकड़ लिया गया था—फरार होकर भाग आया हूँ। रास्ते में फौज से भरी एक स्पेशल ट्रेन उलट आया हूँ। मैं दो दिन से लगातार पैदल भाग रहा हूँ। इस समय थककर चकनाचूर हूँ। कुछ भी खाया-पिया नहीं था। अभी जाकर कुछ खाया है। नींद आँखों में भर रही है। चलने की तैयारी कर लो। भोर होते ही यहाँ से चलेंगे। मैं वेश बदलकर चलूँगा। खुफिया पुलिस मेरी खोज में है। यहाँ ठहरना मेरे लिये खतरनाक है। अम्मा निर्मला के साथ यहाँ रहेंगी। सवेरे ही उठकर अम्मा से भी कुछ बातें करूँगा। अब मैं सो रहा हूँ।' और देवकुमार पलँग पर लुढ़क रहे। क्षण-भर बाद ही वह निद्रा की गोद में सो गए।

अजना बड़ी रात गए तक चलने की तैयारी करती रही।

पहर रात रह जाने पर उसने चाहा कि कुछ सो लूँ, परंतु उसकी आँखों में नींद कहाँ ? एक ओर अपने पीहर चलने की खुशी और दूसरी ओर उसके पति के गिरफ़्तार होकर फरार होने तथा फ़ौज से भरी स्पेशल ट्रेन उलटकर भागने की बात से उसके मन में भय, आशंका, अकुलाहट और चिंता के झंझावात चल रहे थे। नीचे चटाई पर पड़ी कभी इस करवट लेटती और कभी उस करवट। एक उच्छ्वास छोड़ती, और दीपक के धीमे आलोक से प्रकाशित छत की ओर देखने लगती। आलस्य में अँगड़ाई तोड़ती और जँभाई लेती। अजना ने दृढ निश्चय किया—कुछ भी हो, उसे कुछ सो ही लेना है। उसने जबरदस्ती अपनी आँखें मूँद लीं, और सोने का नाटक करने लगी।

थोड़ी देर में उसे नींद आ भी गई।

जब बड़े-बड़े तारे ही अकाश में रह गए, तब निर्मला अपने घर लौटी। किशोरी ने उठकर उसके लिये किवाड़े खोले। मा से आते ही निर्मला ने कहा—'मा! आज रात का पहरा देने की मेरी ड्यूटी लगाई गई थी। आज रात को चोरी वगैरा की कोई वारदात नहीं हुई।"

"शाबाश! बेटी!" किशोरी बड़ी प्रसन्न हुई। 'तुम्हारे आने की रात को हम लोग बड़ी प्रतीक्षा करती रही थीं। खाना लिए बैठी रहीं। कुछ खाया कि नहीं रात को तूने ?"

"हा! गुड़गाँव के आजाद होने की खुशी में मैं तो सब कुछ भूल गई हूँ। खाने-पीने की भी कोई चिंता नहीं रही। जहाँ मिल गया, वहीं खा लिया। आज़ादी पा लेने पर आजाद होनेवालों पर बड़ी भारी ज़िम्मेदारियाँ आ जाती हैं मा।"

"अच्छा, चल, सो ले तू। रात-भर की थकावट है।" निर्मला

दालान की ओर चली कि किशोरी बोली—"देखना निर्मला। बहू जग गई हो, तो कह दे कि सानी-पानी गायों की कर दे। मैं मैदान होने जा रही हूँ।"

निर्मला देव भैया के कमरे की ओर चल दी। जाकर देखा कि दीपक टिमटिमा रहा है, और भाभी नीचे चटाई पर पड़ी हुई है, और पलग पर . कोई सो रहा है। देव भैया हैं क्या? कब आए? मा ने मुझे क्यों नहीं अभी तक बताया कि देव भैया आ गए। उसने आवाज़ दी—"भाभी। भाभी।।"

भाभी इस समय गहरी नींद में सो रही थी। न उठी, और न उसने कोई उत्तर हा दिया। निर्मला को झुँझलाहट हुई कि रात रात-भर सोती हैं, फिर भी नींद पूरी नहीं होती। परंतु देव भैया के आने की बात सोचकर उसका क्रोध शांत हो गया। उसने उलटे पैर लौटकर मा से कहा—"भाभी अभी सो रही हैं। रात को देव भैया आ गए क्या?"

मा लोटा भरकर मैदान जाने को आँगन मे खड़ी थी। बोली—"नहीं तो। मुझे तो नहीं मालूम।"

"तो फिर कमरे में पलग पर कौन सो रहा है?"

"तेरी भाभी होगी।"

"भाभी तो जमीन पर चटाई विछाकर पड़ी हुई है।"

"अच्छा। चल, देखूँ।"

दोनो ने कमरे मे झाँककर ध्यान से देखा। अजना वैसे ही नींद मे बेसुध थी। देवकुमार ने द्वार की ओर करवट ले ली थी, और उसके मुँह पर दीपक का प्रकाश झिलमिला रहा था। दोनो का संदेह दूर हो गया। किशोरी मैदान होने खेतो की ओर चली गई, और निर्मला अपनी चारपाई बिछाकर पड़ रही। वह रात के आने मिलन के मधुर सपनो मे निमग्न हो गई।

देवकुमार भी इधर एक सपना देख रहा था।

मानव-बस्ती से बहुत दूर एक घने जंगल के बीच से रेल की पटरी निकली हुई है। रात के घने अंधकार में देवकुमार ने पटरी पर डाइनामाइट लगा दिया, और बर्मा के मोर्चे पर जानेवाली स्पेशल ट्रेन की प्रतीक्षा करने लगा। उसे विश्वस्त सूत्र से पता चल गया था कि अमुक समय पर फ़ौज बर्मा की ओर भेजी जा रही है। ट्रेन आई, और देवकुमार ने पलीते में आग लगा दी। आग लगाकर वह अंधकार में अदृश्य हो गए।

एक भीषण धड़ाका हुआ, और भयानक आवाज के साथ सारी गाड़ी उड़ गई। वायुमंडल में व्याप्त होनेवाली चीख और करुण क्रंदन दूर-दूर तक सुनाई पड़ने लगा। एक क्षण रुककर देवकुमार ने घायल और मरणासन्न सैनिकों की चीख-पुकार सुनी, और फिर वह नौ-दो ग्यारह हो गए। उनका कलेजा काँप उठा था, परंतु दूसरे ही क्षण सँभलकर फिर उन्होंने अपना हृदय मजबूत कर लिया। मन को आश्वासन देते गए—"ये सैनिक थे। इन्हें आज नहीं, तो कल मरना ही था। मेरे हाथों नहीं, तो जापानियों के हाथों सही। ये निरपराधों और अनाथ स्त्री-बच्चों का रक्त बहाते, नगर और बड़ी-बड़ी इमारतों को खँडहर बनाते, और उर्वरा भूमि को बंजर करते। चलो, ठीक हुआ। सृष्टि का अकाल प्रलय करनेवालों को सृष्टि-नाश करने के पूर्व ही मैंने मौत के घाट उतार दिया। संहार और ध्वंस के अग्रदूत ये सैनिक! पता नहीं कि कूटनीतिज्ञ इन पिशाचों के मोहरे लेकर क्यों शतरंज की चालें चला करते हैं। बल से, छल से मुझे इनके इस दिमागी खेल को मिटाना ही होगा।" देवकुमार एक पगडंडी पर आ पहुँचे थे। अब वह शांत होकर धीरे धीरे चलने लगे।

परंतु नर-हत्या का भूत फिर उनके सिर पर सवार हो चला।

उनका मन अस्थिर हुआ। आँखें सतर्क हुईं, और पैरों में तेजी आ गई। साँसें तेज हो गईं।

किशोरी नित्यकर्म से मुक्त होकर देवकुमार के कमरे में आई। अंजना अब तक उठ बैठी थी। किशोरी ने देवकुमार को उठाना शुरू किया। सहसा स्वप्न से चौंककर देवकुमार भी जाग उठे। उन्होंने देखा, सवेरा हो चला है, और मा उन्हें जगा रही है। आँखें मलते हुए उस रेल-दुर्घटना की याद दिलानेवाले स्वप्न से मुक्ति सी पाकर वह उठ बैठे।

"आ गए भैया? तुम कब आए? रात को आए थे क्या? इतने दिन कहाँ लगा दिए थे?" देवकुमार से किशोरी ने प्रश्नों की झड़ी लगा दी।

"रात को ही आया हूँ, मा! तुम सब लोग मजे में रहीं?"

"हाँ, और तू?"

"मैं भी। मैं एक जरूरी कारण-वश इसी समय अमृतसर जा रहा हूँ।"

"अभी तो आया है, और अभी चला जायगा! अमृतसर में ऐसा क्या काम है?"

"काम तो कुछ भी नहीं और बहुत कुछ है। संक्षेप में यह समझ लो कि यहाँ रहने में खतरा है।"

किशोरी भाँप गई कि शायद गिरफ्तार होने का डर है। बोली—"तो फिर वहाँ से लौटेगा कब? यहाँ रहने में भी वैसे तो कोई खास बात नहीं है। तुम्हें नहीं मालूम। यहाँ तो अमर रानी, निर्मला, रायसाहब, लम्बरदार, इन सब लोगों ने मिलकर थानेदार को गिरफ्तार करके गुड़गाँव से बाहर ले जाकर छोड़ दिया है। यहाँ तो अब अपना राज हो गया है, भैया!" किशोरी के ओठों पर मुस्कराहट आ गई थी।

"सुन लिया है सब मा।" एक क्षण के लिये देवकुमार के ओठों पर भी प्रसन्नता की लहर दौड़ी, परतु वह फिर गभीर हो गए—"निर्मला नहीं दिखाई पडी ?"

"सो रही है, इस समय। बेचारी रात-रात-भर गाँव का पहरा देती है। आज इसी की ड्यूटी बाँधी गई थी।"

"सुन लिया ?" मुस्किराकर अपनी पत्नी की ओर देवकुमार ने सकेत किया—"अब न कहना कि निर्मला रात-रात-भर जाने कहाँ रहती है ?"

"ऊँहूँ। मुझे क्या करना है। नाऊ-नाऊ! कितने बाल ? कि भैया सब सामने आते हैं।" अजना ने उपेक्षा की भावना से नाक सिकोड़कर मुँह मोड़ लिया।

"हाथ कगन को आरसी क्या है। बुलाओ निर्मला को तो।" देवकुमार ने मा से कहा। किशोरी ने सोचा—बेचारी अभी-अभी सोई है, क्यों जगाऊँ। बोली—"अभी-अभी सोई है, वह भैया।"

"कह तो दिया। अम्माजी बीबीजी को कभी बुला ही नहीं सकतीं। मेरी तो यह राय है कि मोहनलाल को अपना जमाई बना लिया जाय।"

"क्या कह रही है बहू! निर्मला बेचारी को जीने भी देगी। इसी के मारे और भी वह घर कम रहती है।"

"वह ठीक कह रही है मा! मेरी भी यही राय है कि निर्मला जिसे अपना वर चुन ले, उसी के साथ उसका ब्याह होना चाहिए।" देवकुमार ने अपनी मा की राय जानने के लिये कहा।

"चल। ऐसा भी दुनिया में कहीं हुआ है। वह सतयुग कहाँ रहा, जब सीता ने राम के गले में वरमाला डाली थी। निर्मला बेचारी इन सब बातों को अभी क्या जाने। बच्ची है, अभी तो।"

"देवकुमार को अपनी मा के उत्तर से कुछ निराशा हुई, परतु इनके

सब प्रश्नों पर बातें करने के लिये उनके पास अधिक अवकाश भी न था। वह जल्दी-से-जल्दी गाँव से बाहर निकल जाना चाहते थे, जिससे किसी गाँववाले को यह पता न चल सके कि मैं यहाँ आया भी था या नहीं, और मैं कहाँ हूँ। बोले—"मा! तुम खुद समझदार हो। उसका ब्याह ऐसी जगह ही होना चाहिए, जहाँ उसे रत्ती भर दुःख न हो।...इस समय मुझे जाने की आज्ञा दो।"

"जा भैया! तू जहाँ भी रहे, ईश्वर तुझे बनाए रक्खें।" किशोरी ने एक उच्छ्वास छोड़ी।

"तुम भी पूछ लो मा से।" देवकुमार ने अजना से कहा।

"क्या बहू भी अमृतसर जायगी?"

"जी, यदि आपकी आज्ञा हो, तो मैं भी हो आऊँ।" अजना ने अपनी सास से नम्र-कोमल शब्दों में अनुमति माँगी।

किशोरी ने उसे भी अनुमति दे दी।

---

[१०]

इनायतुल्ला हैरान था कि मुझे जनता ने तीन दिन तक कैद रखकर भी कोई कष्ट नहीं दिया, और न कोई दुर्व्यवहार ही मेरे साथ किया गया। मेरे इतना अत्याचार करने और रुखाई से पेश आने पर भी इन अहिंसा के पुजारियों ने मेरे साथ इतनी सहिष्णुता दिखलाई। उफ़! अमर कितनी सुंदर और कितनी उदार, सरल और क्षमाशील है। उसी ने उस दिन मेरे प्राण बचाए। लेकिन यह निर्मला! गजब की शेर-दिल, भयानक लड़की है। मौत से भी नहीं डरती! उसी के इशारे पर मेरी जान ली जा रही थी। हूँ! मैं भी देख लूँगा। इसे और इसके भाई को मिट्टी में न मिलाकर छोड़ा, तो मेरा नाम इनायतुल्ला नहीं।

शहर में पहुँचकर उसकी जान मे जान आई। उसे अपनी पराजय, गुड़गाँव से अपने निष्कासन और राजू और बदलू के उसे गाँव से बाहर निकालकर उससे 'गांधीजी की जय' और 'भारत माता की जय' जबरन् कहलाने का क्षोभ, तीनो एक साथ उसे मथे डाल रहे थे। उसकी नौकरी, घूस और लूट-मार के साझे की रोजी चली जा रही थी। सबसे अधिक उसे अपनी नौकरी की चिंता थी कि यदि अँगरेजी हुकूमत ने मुझे अयोग्य ठहराकर निकाल दिया, तो कल को बाल-बच्चों को क्या खिलाऊँगा। उसके पारिवारिक गुड़गाँव से कोई दस मील दूर एक बड़े देहात में रहते थे, जहाँ इनायतुल्ला के बाप-दादों की जमीन-जायदाद भी थी। लेकिन उससे उसे इतनी आमदनी न थी कि उसके बढ़े हुए लंबे खर्चे उस जायदाद से

चल सकते। यहाँ औसतन् उसे ढाई-तीन सौ रुपए माहवार पड़ जाते थे। किसी-किसी महीने तो लूट और डाके के साझे में ही दो तीन सौ रुपया या उतने ही मूल्य के जेवर वगैरा उसके हाथ लग जाते थे। उसकी नौकरी ही जब खटाई में पड़ गई थी, तो वह साझा उसे अब कहाँ से मिलता? फिर जब से इन बागियों ने थाने पर कब्जा किया, तब से गुड़गाँव और पास-पड़ोस के गाँवों में कोई डकैती-चोरी ही नहीं हुई। इनायतुल्ला की गिरफ्तारी की आहट मिलते ही उसके साझीदार कजड़ और डकैत नौ दो ग्यारह हो गए थे। जाटों के आपस के झगड़े पंचायत से निबटने लगे—और घूसखोरी भी बंद हो चुकी थी।

इनायतुल्ला सुपरिंटेंडेंट पुलिस (रूरल एरिया) हंटर के यहाँ पहुँचा—हाँफता, थका, आकुल और प्रतिशोध लेने की भावना से उन्मत्त। सामना होते ही इनायतुल्ला ने हंटर के सामने झुककर सलामी दागी। हंटर बंगले के पोर्टिको में अपनी मेम से विदाई लेकर कहीं जाने की तैयारी में था। उसकी कार सामने खड़ी थी, और बँगले के बाहर एक पुलिस-लारी भी खड़ी थी, जिसमें लगभग २८ सशस्त्र कांस्टेबिल कूच करने को तैयार बैठे थे। हंटर ने उन्मुख होकर इनायतुल्ला के अभिवादन का सिर हिलाकर उत्तर देते हुए पूछा—"तुम क्या चाहता है?"

"हुजूर! आपका यह खादिम गुड़गाँव का थानेदार है। बगावत हो गई है। थाना कब्जे से चला गया है, इसी की इत्तिला . "

"हमको इसका इत्तिला है। तुम वहाँ से भाग क्यों आया? . कावर्ड! डरपोक!!"

"हुजूर! " हाथ जोड़कर इनायतुल्ला भीगी बिल्ली-सा बना ठिठककर खड़ा रह गया, और बोलती उत्तर न दे सकने से बंद हो जाने पर बड़ी करुण और विकल दृष्टि से टुकुर-टुकुर उसकी ओर

'हुजूर का बच्चा !'' दाँत किटकिटाकर हंटर बोला—''टुम नहीं जानता कि अँगरेजी राज चला जायगा, तो टुम क्या खायगा ? टुम बागियों का मुकाबला क्या नहीं किया ? अच्छा ! हम गुड़गाँव ही चल रहा है। हमारा साथ टुम चलेगा। बागियों को एक-एक करके गोलों मे उड़ा दिया जायगा।''

हंटर ने अपनी मेम से विदा लेकर कार की ओर पैर बढ़ाया। इनायतुल्ला से बोला—''टुम बी कार में बैठेगा।''

हंटर ड्राइवर की जगह स्वयं बैठा, और कार स्टार्ट कर दी। इनायतुल्ला पीछे बैठ लिया। द्वार पर पहुँचकर लॉरी ड्राइवर को आदेश दिया कि पीछे आए। कार आगे और लॉरी पीछे चल दी।

× × ×

आज नागपंचमी का मेला है।

गुड़गाँव में अब का विशेष उत्साह और चेतना है, क्योंकि दो सौ वर्ष की गुलामी के बाद प्रथम बार स्वतंत्र और मुक्त जीवन का अनुभव गुड़गाँववालों ने किया था।

अमराई में एक दिन पहले से ही सौदागरों, हलवाइयों, खोमचे-वालों, तमोलियों, बिसातियों आदि ने अपने अपने खेमे एवं तंबू तानकर दूकानें जमा दीं। सर्कस, झूले, जादू के तमाशे, साँप के नाच, बकरी-बंदर के नाच की भी पूर्ण व्यवस्था अपने आप हो गई। अमर और उनके साथियों की ओर से 'भारत माता-मंदिर' की आयोजना की गई। यह मंदिर एक ऊँचे टीले पर मेले के बीचोबीच में बनाया गया, जिसमें भारत माता की एक मूर्ति के सामने गांधी, सुभाष, जवाहर, मौलाना आजाद एवं सरदार पटेल की पाँच मूर्तियाँ हथेली पर अपना कटा हुआ शीश लिए दिखलाई गई थीं। शीशों से टप-टप लाल खून भी चूता हुआ दिखाया गया था। भारत माता के हाथ में तिरंगा झंडा ऊँचाई पर बरसाती हवा के झोंकों से अठखेलियाँ

कर रहा था। दूर-दूर से लोग इसे देखने के लिये मवेरे से ही आने लगे। इसके निर्माण की चर्चा पास-पड़ोस के सभी गाँवों में फैल चुकी थी। प्रत्येक दूकान, प्रत्येक घर और अमराई के प्रत्येक वृक्ष पर तिरंगा लहराया गया। एक बड़ा अखाड़ा भी बनवाया गया था, जिसमें गिने-चुने जवानों के जोड़ भी शाम को छूटनेवाले थे। राजू और बदलू में भी जोड़ बद लिया गया था, और इसकी घोषणा भी कर दी गई थी। राजू और बदलू दोनों भाई-भाई थे। दोनों में दो वर्ष की छोटाई-बड़ाई थी। दोनों अपने दाँव-पेचों और बलिष्ठ लंबे-चौड़े डील-डौल के लिये प्रसिद्ध थे। इनायतुल्ला के जमाने में ये गुप्त रूप से दूर-दूर के गाँवों में डकैती डालते थे, और इनायतुल्ला को हिस्सा-पत्ती देकर उसे अपने पंजे में रखते थे। परंतु जब से अस्थायी राष्ट्रीय सरकार की गुड़गाँव में स्थापना हुई, दोनों ने मातृभूमि की क़सम खाकर प्रतिज्ञा ली कि अब हम कभी डाकेजनी न करेंगे। यदि आवश्यकता हुई, तो हम अपने देश की आन-बान को क़ायम रखने के लिये अपनी क़ुर्बानी भी दे देंगे। पहले गाँव-के-गाँव राजू और बदलू के नाम से थर्राते थे—लेकिन अब वे भय और आतंक की वस्तु न रहकर स्नेह और आदर के पात्र बन गए थे।

अमराई के पास ही एक तालाब था, जहाँ प्रतिवर्ष नागपंचमी के दिन गुड़ियाँ पीटी जाती थीं। अमराई में मेला लगने के कारण अमर और निर्मला का झूला तालाब के ऊपर झुकी नीम की डाल पर डाल दिया गया।

तालाब के किनारे गुड़ियाँ पीटी जाने लगीं। अमर, निर्मला, नरवारा, नयनतारा, सभी ने अपनी दूसरी बहनों के साथ इस उत्सव (?) में सहयोग किया। अमर और निर्मला, दोनों ने तिरंगी साड़ियाँ पहन रक्खी थीं—जब भी उनके अंचल हवा में लहरा उठते, तो ऐसा जान पड़ता कि तिरंगा स्वयं मूर्तिमान् हो उठा है। दोनों

सभी औरतों और लड़कियों के कौतुक का विषय बन गईं। नवधारा ने मजाक की—"आज तो ऐसे मालूम होता है कि अमर और निर्मला, दोनो सगी बहनें हो।"

निर्मला ने कहा—"सचमुच? अमर रानी को आज बड़ी मुश्किल से साड़ी पहनाई है। इनकी रेशमी चुन्नी और सलवार से कहीं ज्यादा यह साड़ी खिल रही है।"

"इसमे तो कोई शक नहीं। लेकिन अमर रानी की नाक मे बड़ी-सी नथुनी और पहना दी जाती, तो निर्मला और अमर, दोनो गुलाबो-सिताबो की अच्छी जोड़ी बन जाती।" नयनतारा की बात से सभी खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

इतने ही में सिर पर गहरे काले बादल छा गए, और नन्ही-नन्ही फुही पड़ने लगीं। निर्मला ने प्रस्ताव किया—"चलो, झूला जाय।"

अमर बहुत दिनो से झूले पर न बैठी थी। एक तो विरह का दुःख, और दूसरे, परिस्थितियों का ऐसा दबाव कि इन सब बातों के लिये अब उसके पास अवकाश नहीं बचता। उसे झूले का नाम लेते ही वह दिन याद आया, जिस दिन उसे पति के गिरफ्तार हो जाने की सूचना मिली थी। उसने एक उच्छ्वास छोड़कर कहा—"तुम लोग झूलो। मैं एक काम से जा रही हूँ अमराई की ओर।"

"वाह! तुम्हारे बिना क्या आनद आएगा झूलने में।" नवधारा बोली।

"ठीक है भाभी! लेकिन मुझे शाम के उत्सव और 'भारत माता-मंदिर' के उद्घाटन की तैयारी करनी है।" अमर ने अपनी सफाई दी।

"तब तो भई! अमर रानी को विवश नहीं किया जा सकता।" नयनतारा ने अमर का समर्थन किया।

"तो फिर तुम जाओगी अमर रानी। उद्घाटन तो पापाजी को करना है, फिक्र इसकी ना उन्हें होनी चाहिए। फिर अभी बहुत समय है। ग्यारह-साढे ग्यारह तक लौट चलेंगे।" निर्मला ने अमर को जाने न देने के लिये एक नया सुझाव रक्खा।

"भई! बात तो निर्मलाजी ने भी पते की कही है।" नयनतारा ने अब की निर्मला को बात पर सही दी।

"दो-एक झोंके झूलती जाओ फिर। सबका मन रख दो, अमर बीबी। किसी का दिल दुखाना अच्छा नहीं है।" नवतारा ने चुटकी ली। सब हँस पड़ीं। अमर रुक गई।

सभी झूले की ओर हँसी-मजाक करती हुई बढ़ीं। और, सबसे पहले अमर को झूलने के लिये विवश किया गया।

अमर झूले पर बैठ गई। भूले हुए अपने प्रिय की याद ने उसे अचचल बना दिया था। यदि मुस्किराती भी थी, तो ऊपरी मन से, जिससे उसकी सहेलियाँ उसके मन के अंतर्द्वंद्व को कहीं भाँप न जायँ।

निर्मला ने झोके देकर अपनी शेष सहेलियों के साथ गीत गाना शुरू कर दिया, जिसका आशय इस प्रकार था—

"घर आ गए! आज साजन घर आ गए!!

"युग-युग की साध पूरी हो गई। युग-युग से बढ़ती जानेवाली हमारे बीच की दूरी भी दूर हो गई। वे अपनी मुस्कान से मंगल की वर्षा कर रहे हैं, और मन को हुलास से भर दे रहे हैं। आज मेरे साजन घर आ गए।'

अमर को उसके अपने प्रियतम की दूरी ने झकझोर दिया। एक हलचल उठी, किंतु विवशता और निराशा ने उसे कुचल दिया। साधों के महल बने हुए थे, वे किसी के एक ही पदाघात से चूर-चूर हो गए। उसकी मुखमुद्रा गंभीर होने लगी। गीत चलता ही गया—

सहेलियों के साथ वह मुस्किराई, और इसीलिये वे अमर के मन में चलनेवाले तूफ़ान को न समझ सकीं।

अब की निर्मला की बारी आई। निर्मला झूले पर बैठी। सहेलियों ने एक नया गीत छेड़ा— आख़िर अब मेरी जवानी आ ही गई।

"मेरे ओठों में लालिमा छा गई है। मैंने अपनी आँखों में लज्जा का अनमोल मोती चुराकर छिपा लिया है। मेरा बालापन अब कहने-सुनने की वस्तु बनकर पीछे छूट गया है। आख़िर मेरी जवानी आ ही गई।"

निर्मला को यह गीत बहुत पसंद था, और उसकी सहेलियाँ उसकी इस पसंद को भली भाँति समझती थीं। वे उसके ओठों की उस अरुणिमा, और आँखों-ही-आँखों में चलनेवाली गुपचुप ताक-झाँक देखकर ही उसके अंतस्तल की तह पर पहुँच चुकी थीं। निर्मला ने गीत में सबका सहयोग दिया। वह नीचे जल में पड़नेवाली अपनी परछाईं देखकर विभोर हो उठी।

इसी समय लगभग ५० फ़ीट की दूरी पर से इस गीत पर बाँसुरी बज उठी। मोहनलाल अब तक स्वतंत्र हो चुका था, और निर्मला से मिलने के लिये इधर चला आया था। वह बाँसुरी बजाने में विशेष कुशल था। निर्मला ने धुन सुनी, उसकी सखियों ने भी धुन सुनी। निर्मला समझ गई कि हो-न-हो, मोहनलाल—उसके प्रियतम—ही बाँसुरी बजा रहे हैं, और अपनी राधा की खोज में कहीं पेड़ पर छिपे बैठे हैं। सखियों ने भी धुन सुनी, और सारा रहस्य पल-भर में ही समझ गईं। वे और भी मस्ती के साथ, पूरी तन्मयता के साथ, गाने लगीं। गीत आगे बढ़ा—

"आज अँगड़ाई इन मद-भरे अंगों पर टूट रही है। मेरी जँभाई भी बड़ी मादक है। आज मुझे उनकी भूलें बड़ी सुहानी लगती हैं। आख़िर मेरी जवानी आ ही गई।"

मोहनलाल की बाँसुरी माधुर्य, तन्मयता और आकर्षण की बरसा करने लगी। निर्मला के प्राण उस बाँसुरी के स्वरों ने खींच लिए। वह बेसुध हो चली। आलस्य तन-मन में भर उठा।

"कल मेरे द्वार पर उनकी शहनाई बजेगी, और मैं उनके पीछे चली जाऊँगी—अपने घर। मैं इस पीहर मे दो दिन की पाहुन और हूँ। आज की यह अठखेली और शेष सब बातें कल को बीते युग की घटनाएँ बन जायँगी। आखिर अब तो मेरी जवानी आ ही गई।"

निर्मला को अब तक होश नहीं रह गया था। टेक की पंक्ति चल ही रही थी—बाँसुरी का स्वर अब खिंच ही रहा था कि निर्मला के हाथ से झूले की रस्सी छूट गई। झम्म। और निर्मला नीचे के तालाब में गिर गई।

झूला थम गया, गीत बंद हो गया, और बाँसुरी का स्वर टूट गया।

"निर्मला!" अमर चीख उठी।

"निर्मला!" सब सखियों के मुँह पर मुर्दनी छा गई।

अमर चिल्लाई—"दौड़ो, दौड़ो, निर्मला को बचाओ कोई।"

निर्मला तालाब की निचली तह तक पहुँचकर फिर ऊपर उछली, उसने कुछ क्षणों तक भीषण रूप से हाथ पैर पटके, परंतु सब बेकार। वह फिर नीचे गई। इतने ही में पास से कोई कूदा। यह मोहनलाल था। सबने देख लिया था मोहनलाल को कूदते। उसको कुछ राहत मिली, परंतु सब साँस बाँधे मोहनलाल और निर्मला के फिर से निकलने की प्रतीक्षा करने लगे। शोर-गुल सुनकर घाट पर की अन्य और औरतें और आसपास से गुजरनेवाले राहगीर आकर किनारे एकत्र हो गए। भीड़ की कानाफूसी में ही सब तथ्यों का पता चल गया, और सभी ने बड़ी विकलता, बड़ी संवेदना के साथ निर्मला के निकल आने की मन-ही-मन कामना की।

कुछ ही क्षणों में मोहनलाल निर्मला को लेकर ऊपर उठ आया। भीड़ में प्रसन्नता छा गई। बड़ी कुशलता के साथ मोहनलाल निर्मला को लेकर किनारे आ गया। निर्मला ने अभी तक विशेष पानी नहीं पिया था, और न वह बिलकुल बेहोश ही हुई थी। बाहर निकल आने पर उसे बड़ी राहत मिली। परंतु उसे बड़ी शरम भी आ रही थी कि वह मदहोश इतनी कैसे हो गई थी कि तालाब में गिर पड़ी। उसकी आँखें मोहनलाल की आँखों से मिलीं। दोनों मुस्किरा पड़े। निर्मला की मुस्कान में ही मोहनलाल ने अपना पुरस्कार पा लिया।

निर्मला की साँसें कुछ तेज चल रही थीं, और वह एक तरह की थकावट और कमजोरी का अनुभव कर रही थी। अमर ने उसे राय दी कि वह किनारे चलकर कुछ लेट रहे। मोहनलाल ने भीड़ हटा दी और भीड़ भी उसके आदेश से छँट गई।

अब रह गई निर्मला, अमर, नवधारा, नयनतारा और मोहनलाल। मोहनलाल जब भीड़ हटाने में व्यस्त हो गया, तो अमर ने मजाक किया—"निर्मला, हम लोगों के बड़े भाग हैं कि तुम्हें हम लोगों ने खोकर फिर से पा लिया। नहीं तो तुम्हारे उनकी धरोहर को हम कहाँ से लाते।"

"अरे भई! धरोहर रखनेवाले को खुद इसकी चिंता रहती है।" नवधारा ने गहरी चुटकी ली। सब हँस पड़ीं।

"अजी! तुम लोग कहती क्या हो! ऐसे जीजाजी बड़े भाग से ही किसी को मिलते हैं।" नयनतारा ने मोहनलाल को लक्ष्य करके कहा।

"जाओ भी! तुम लोग बड़ी वह हो।" निर्मला ने बनावटी क्रोध प्रकट किया। वह अपने प्रियतम की बाहों के जल में भीतर बँध गई थी। उसकी सिहरन का वह अभी भी अनुभव कर रही थी।

करके जो सेवा-शुश्रूषा मेरी की है, उसके देखते तो यदि मेरे पुत्र की भी इन्हें जरूरत पड़े, तो उसे देकर भी मैं इनका ऋण नहीं चुका सकता।"

किशोरी मुस्किरा पड़ी।

जब शाम को निर्मला ने भारत माता-मंदिर के उद्घाटन में जाने का हठ किया, और मोहनलाल ने भी आश्वासन दिया, तो किशोरी ने उसे जाने की अनुमति दे दी। किशोरी ने जाते-जाते मोहनलाल से कहा—"मोहन बाबू! निर्मला को मैं भेज तो रही हूँ, लेकिन मैं तुम्हारे ऊपर ही इसे जाने देती हूँ। इसका खयाल रखना जरा।"

मोहनलाल ने मुस्किराकर उत्तर दिया—"वाह चाचीजी! यह भी कोई कहने की बात है। इनकी पूरी जिम्मेदारी मेरे ऊपर है।"

मा आश्वस्त हो गई, और निर्मला कनखियों से मोहनलाल की ओर देखकर मुस्किरा पड़ी।

दोनों चल दिए मेले। किशोरी ने मन-ही-मन सोचा, कैसी अच्छी यह जोड़ी होगी।

× × ×

इधर सशस्त्र पुलिस लेकर इनायतुल्ला के साथ गुड़गांव आ पहुँचा।

इनायतुल्ला के सिपाहियों ने पंचायती राज्य की स्थापना हो जाने पर मन-ही-मन यह निश्चय कर लिया कि हम अब से देश का साथ देंगे। उन्हें ग्लानि हुई कि हमने अब तक अज्ञान में अपने ही देश-भाइयों के प्रति बड़ा अन्याय, दुर्व्यवहार और विश्वासघात किया है—अब उसका प्रायश्चित्त जरूर करना है। सभी ने चौथे दिन देश निकाले के पूर्व पंचायती राज्य के अध्यक्ष सरदार प्रकाशसिंह के सम्मुख देशभक्ति की पवित्र शपथ ली, और अपनी सेवाएँ पंचायती राज्य के सिपुर्द कर दीं।

थाने की रक्षा का भार उन्हें पुन. सौंप दिया गया। इस समय अमर के आदेश से रामहरख और गाजी थाने की चौकसी के लिये नियुक्त कर दिए गए थे। शेष सभी हिंदू-मुसलमान कास्टेबिलों ने स्वयसेवक बनकर मेले के प्रबध एव व्यवस्था में भाग लिया। स्वय-सेवकों के सगठन, मेले की व्यवस्था, शाति और रक्षा का सारा भार, पूर्व-निश्चय के अनुसार, अमर पर ही था, क्योंकि वही जन-सेना की सेनापति भी थी। प्यार से और सम्मान के लिये भी सभी लोग उसे अब कप्तान अमर कौर कहते थे।

ग़ाज़ी और रामहरख लाठी लिए, काग्रेस-स्वयसेवक की वेश-भूषा में, बड़ी मुस्तैदी के साथ थाने के द्वार पर चौकसी कर रहे थे।

दूर से थाने पर तिरगा लहराता देखकर हटर आगबबूला हो गया। इनायतुल्ला ने उसकी क्रोधाग्नि म घृत उँडेलते हुए कहा—"देखिए, हुजूर। इन शैतान बागियों ने काग्रेस का झडा थाने पर लगा रक्खा है।"

"हम अभी सब काग्रेसवाला को भून डालेगा।. मेरा नाम मि० हंटर है।"

कार थाने के सामने रुकी, और पीछे की लारी भी। इनायतुल्ला, हंटर और उसके सशस्त्र कास्टेबिल नीचे उतर पडे। चारो ओर सुनसान। सामने केवल दो द्वार-रक्षक—ग़ाज़ी और रामहरख। इनायतुल्ला चकराया कि आख़िर मैं यह क्या देख रहा हूँ? इन लोगों का तो देश निकाला होनेवाला था, ये खुद कैसे बागी बन गए!

हंटर ने आदेश दिया—"उड़ा दो इन बागियों को, और घेर लो इस थाने को।" उसने सोचा कि बागी थाने के भीतर ही होगे।

आदेश पाकर सशस्त्र पुलिस ने अपनी सगीनें सँभालीं, और दो ने रामहरख और गाजी पर निशाना लगाया, और बाक़ी ने थाना घेर लिया। रामहरख और गाजी तनकर, छाती फुलाकर खडे हो गए।

इनायतुल्ला ने हंटर को गोली चलाने का आदेश देते-देते रोक दिया, और हस्तक्षेप करता हुआ बोला—"ठहरिए हुजूर। ये लोग अपने पुराने आदमी हैं। इनको गोली से न उड़ाकर गिरफ्तार कर लिया जाय। थाने में कोई नहीं जान पड़ता—घेरा डालने की कोई जरूरत नहीं। तिरंगा उतारकर अँगरेजी झंडा फहरा दिया जाय।"

हंटर को इनायतुल्ला की राय पसंद आई। उसने भी चारों ओर श्मशान की-सी शांति देखकर सब समझ लिया कि यहाँ बागी नहीं हैं। उसने अपना आदेश बदल दिया—"गिरफ्तार कर लो इन साला लोगों को।"

गाली सुनकर रामहरख और गाज़ी दोनों का खून उबल उठा। दो कांस्टेबिल उन्हें गिरफ्तार करने के लिये आगे बढ़े। गाज़ी ने लाल आँखें करके कड़कते हुए कहा—"बेशरम! काले कुत्तो!! एक गोरा तुम्हारे भाइयों को गाली दे, और तुम इस सहन करके अपने भाई की ही गर्दन उतार लो। दूर रहो। हमारी देह मत छूना।"

"खबरदार! आगे कदम मत उठाना।" रामहरख ने डाँटा।

दोनों कांस्टेबिल ठिठक गए।

कड़ककर हंटर बोला—"क्या देखता है, तुम लोग!"

"हुजूर! मैं इन दोनों को गिरफ्तार करता हूँ। ये दोनों बागी हैं।" इनायतुल्ला ने अपने गोरे आका की अनुमति चाही।

"जरूर! जरूर!!" हंटर ने अनुमति दे दी। उसने सीटी बजाकर घेरा डालनेवाले सभी सिपाहियों को बुला लिया, और उन्हें अगल-बगल खड़ा कर दिया।

इनायतुल्ला आगे बढ़ा। पास पहुँचकर बोला—"तुम दोनों लाठी रख दो। दोनों सरकारी हिरासत में लिए जाते हो।"

"हम पंचायती राज्य के रक्षक हैं। हम गोरी हुकूमत और उनके

वाले गुर्गों का हुक्म मानने को तैयार नहीं।" गाजी ने उत्तर दिया।

"हुक्म मानो, वरना गोली से उड़ा दिए जाओगे।" इनायतुल्ला ने धमकी दी।

"देश के लिये मौत कोई महँगी चीज नहीं।" ग़ाज़ी ने उत्तर दिया।

"तुम रामहरख ?"

"आज़ाद होने के बाद हिंदुस्थानी गुलाम बनकर नहीं जी सकता।" रामहरख ने उत्तर दिया।

"तो तुम दोनो भी बागी हो गए ? याद रक्खो, बागी की सज़ा मौत है।" इनायतुल्ला ने हटर को इशारा किया कि पास आए। "हुज़ूर। ये दोनो बागी हैं। दोनो गोली से उड़ा दिए जायँ।"

हटर ने आदेश दिया। दूसरे ही क्षण दो सगीनें तनीं, और दोनो बागी जमीन पर लोटने लगे।

इनायतुल्ला ने सशस्त्र पुलिस-सहित भीतर प्रवेश किया। थाने की छत पर चढ़कर वह स्वय तिरगा उतार लाया, औ रटुकडे-टुकडे करके अपने जूते के नीचे उसे रौंद डाला। हटर ने सब कुछ देखा, और मुस्किरा पड़ा।

हटर की कार पर उड़नेवाला ब्रिटिश जैक फिर से थाने पर लगा दिया गया।

दो सशस्त्र कास्टेबिल थाने पर तैनात कर दिए गए, और शेष लोग बागियों का पता लगाने के लिये निकल पडे।

इनायतुल्ला गुड़गाँव में लगभग २० वर्ष से रहते-रहते हिदुओं के रीति-रिवाज सब जान गया था। उसने हटर को बतलाया कि आज गुड़ियों का मेला है। सभी बागी और गाँववाले अमराई मे मिलेंगे। चलते ही धुआँधार गोली-वर्षा शुरू कर दी जाय।

पथ-प्रदर्शन करता हुए इनायतुल्ला हंटर के साथ आगे-आगे चला। सशस्त्र पुलिस पीछे हो ली। छोटे रास्ते न जाकर अमराई पहुँचने के लिये वह गाँव के बाहर से चला। वह यह नहीं चाहता था कि पुलिस के आ जाने की कोई खबर गाँववालों को लगे।

× × ×

सरदार प्रकाशसिंह ने 'भारत माता-मंदिर' का उद्घाटन कर दिया। तालियों से सारी अमराई गूँज उठी।

अमर ने तीन बार नारे लगाए—

"भारत माता की—"

और जन-राशि ने अपार श्रद्धा और उत्साह के साथ तीन बार उत्तर दिए—'जय!"

जनता भारत माता के चरणों में समर्पण करने के लिये 'पाँच बड़े' नेताओं की हथेलियों पर रक्खे, खून से सराबोर, उनके पाँच शीश देखकर बहुत प्रभावित हुई। सबको श्रद्धांजलि देकर भीड़ ने मन-ही-मन यह संकल्प किया कि हम भी किसी दिन भारत माता के उद्धार के लिये अपने प्राणों की आहुति दे देंगे। गुड़गाँव को ही स्वतन्त्र करके हम सन्तोष न लेंगे, हमारा स्वातन्त्र्य-युद्ध तब तक चलता रहेगा, जब तक भारत के ७ लाख गाँव विदेशियों के चंगुल से छूट न जाएँ।

सरदार प्रकाशसिंह ने अपने उद्घाटन-भाषण में कहा कि अँगरेजी राज्य की नींव हिल चुकी है। एक दिन हमने गांधीजी के नेतृत्व में 'करो या मरो' का अमिट संकल्प लिया था, और उस संकल्प के लेते ही एक भूचाल आ गया। अँगरेजी राज्य डगमगा कर गिरने जा रहा है। लेकिन बुझने के पहले जैसे दीपक की बत्ती एक बार जोर लगाकर भभक पड़ती है, उसी प्रकार अँगरेज मिटने के पहले अपनी सारी कूटनीतिक एवं सैनिक शक्ति एकत्र कर अपने अस्तित्व की रक्षा के लिये अन्तिम प्रयत्न करेंगे। परन्तु हमने जो आ[illegible]

प्राप्त कर ली है, उसे अब हाथ मे न जाने देंगे। उनकी गोलियो का जवाब हम अपने सीने फैलाकर देंगे। हमारे नेता अपने शीश हथेली पर लेकर महाक्राति की ज्वाला में कूद पडे हैं। हम उनके सैनिक हैं, उन्हें धोखा न देंगे। देश के लिये प्रत्येक व्यक्ति को बलिदान और त्याग का अधिकार है। हमें आज उस अधिकार का उपयोग करना होगा—इसलिये कि कल को हम अपनी सतानो को गुलाम न देख सकें, इसलिये कि कोई विदेशी हमारा अपमान न कर सके, इसलिये कि अन्यायी की हम कलाई मरोड दें, और इसलिये कि रोटी और वस्त्र के लिये हमें दूसरो के सामने हाथ न फैलाना पडे। वदे।"

अमर ने घोषणा की—"अब अखाडे में राजू और बदलू का जोड़ छूटेगा। राजू और बदलू, इन दो भाइयों के नाम से आस-पास के गाँववाले सभी परिचित हैं। इन्होंने अब देश-भक्ति की शपथ ले ली है, और अपना पुराना पेशा छोड दिया है। गुड़गाँव तथा पड़ोस के गाँवो में इतने दिनो तक जो शाति और जान-माल की सुरक्षा रही, उसका बहुत कुछ श्रेय इन्हीं दोनो को है। सभी लोगों को यह दंगल देखने का आमंत्रण है।"

टीले के सामने ही अखाड़ा था। राजू और बदलू अपनी-अपनी मूछें ऐंठकर अखाड़े मे उतर पडे। चारो ओर से करतल-ध्वनि हुई। अमर घोषणा करने के बाद निर्मला, नयनतारा, नवधारा आदि जहाँ बैठी थी, उन्हीं के पास जाकर बैठ गई। सामने की तरफ राय-साहब, लम्बरदार, छोटूलाल, मोहनलाल आदि बैठे थे।

मल्लयुद्ध प्रारभ हो गया। भीड को अखाडे से कुछ फासले पर रखने के लिये चारो ओर खंभे गाड़कर रस्सी बाँध दी गई थी, और स्वयंसेवक खडे कर दिए गए थे।

राजू और बदलू एक दूसरे से उलझ गए। राजू बड़ा था, परतु बदलू ने दाँव ऐसा मारा कि राजू गिर पड़ा, लेकिन वह छाती के बल

इस तरह चिपट गया जमीन से कि बदलू ने एड़ी-चोटी का पसीना एक कर दिया उसे चित करने मे, लेकिन राजू न डिगा अपने स्थान से। साँस बाँधकर भीड़ इस कशमकश को देखने लगी।

इतने ही में पीछे, हवा में, दो फायर हुए, और गोलियाँ भारत माता के हाथ में फहरानेवाले तिरगे को छूती हुई निकल गई। सभी लोग सन्न हो गए कि एकाएक ये गोलियाँ कहाँ से चली। भीड़ में आतंक छाया। मौका पाकर राजू ने बदलू को एक ही झटके म नीचे गिराकर चित कर दिया।...परतु सबकी दिलचस्पी इधर से टूट चुकी थी। भीड़ में भगदड़ पड़ गई। राजू और बदलू भी उठ खडे हुए। तालियाँ बजाते हुए मदिर के टीले पर बैठे रायसाहब और अमर का दल भी उठ खडा हुआ—यह देखने के लिये कि ये गोलियाँ कहाँ से आईं।

सबने देखा, एक गोरे के साथ एक फौज की टुकड़ी-सी चली आ रही है। गोरे का रिवाल्वर उन्हीं की ओर तना हुआ है।

अमर और निर्मला ने एक-एक ओर खडे होकर भागती हुई भीड़ को रोकने की चेष्टा की, परतु मरने का भय। उसने भीड़ को रुकने न दिया। अमर और निर्मला ने चिल्लाकर कहा—"ठहरो! सबको अपनी मा के दूध और बहना के सतीत्व की कसम है कि न भागें। ठहरो! भारत माता की आजादी चाहनेवालो! तुमने मर-मिटने की प्रतिज्ञा ली है। ठहरो! तुम्हें एक दिन मरना है। तुम कायरों की मौत न मरो, वीरों की मौत मरो। ठहरो! ठहरो! ठहरो!"

अब तक अधिकाश मेला उजड चुका था। दूकानदार दूकान छोड़कर और बाजीगर अपना सामान डाल, पुरुष अपने स्त्री-बच्चों को लेकर और नकली देशभक्त अपनी टोपी फेंक-फेंककर भागे। परतु निर्मला और अमर की ललकार सुनकर उनमें से अधिकाश रुक गए।

धाँय ! धाँय !! फिर दो फ़ायर हुए। एक निर्मला के लिये और एक अमर के लिये। मोहनलाल को अपना आश्वासन स्मरण आया, और वह निर्मला के आगे आ गया, और रायसाहब ने अमर की रक्षा के लिये अपने सीने पर गोली झेल ली। दोनो घायल होकर गिर पड़े। निर्मला चीत्कार करके मोहनलाल के बेहोश शरीर पर झुक गई, और अमर अपने पिता के ऊपर।

भीड़ उत्तेजित हो उठी और उसने डटकर बेतहाशा पत्थर और ईंट के टुकड़े पुलिसवालों की ओर फेकने शुरू कर दिए। कई सशस्त्र कान्स्टेबिल घायल हो गए।

हटर चिल्लाया—"टुम लोग पत्थर फेकना बंद करो, नहीं तो टुम लोग को मार दिया जायगा।"

"सब लोग भाग जाएँ, हट जाएँ।" इनायतुल्ला ने अपने अफ़सर की आवाज दोहराई।

लेकिन भीड़ तिल-भर भी न हटी, और कदम-कदम पर उग्रतर होकर ढेला-बारी करने लगी। हटर ने 'फ़ायर' करने का आदेश दिया। चाँदी के कुछ टुकड़ो से खरीदे गए काले सिपाहियों ने एक विदेशी गोरे के कहने से अपने काले भाइयों पर गोली चलाने के लिए संगीनें सँभाल लीं। इतने ही में एक बड़ा-सा पत्थर हटर के माथे में लगा, और उसका मुँह खून से भीग उठा। गोली चली, परंतु तुरंत ही बागी जमीन पर लेट गए। सारी गोलियाँ बेकार गईं। एक गोली उचटकर पीछे से पत्थर ढो-ढोकर लानेवाले छोटे बालक के लग गई। वह घायल होकर गिर पड़ा। इस बीच में सभी औरतें अमराई से हटाई जा चुकी थीं। परंतु निर्मला और अमर न गईं, और उनके न जाने पर नयनतारा और नवतारा भी ठहर गईं। गाँववालों ने उन्हें समझा-बुझाकर टीले की आड़ में कर दिया।

सिपाही अपनी रायफलों में गोली भरने लगे। इधर उस घायल

बालक को निर्मला और अमर उठाकर टीले की आड़ में ले गए। बागियों ने फिर उठकर पत्थर फेंकने शुरू कर दिए। अब की हंटर ने अपना रिवाल्वर भी प्रयोग में लाना शुरू कर दिया। गाँववालों में से कई घायल हो गए।

(इधर राजू और बदलू अपना ४०-५० चुने आदमियों का गिरोह लेकर अमराई के पीछे से निकलकर हंटर और उसके साथियों के ऊपर टूट पड़े। तीन-चार कान्स्टेबिल पहले ही बुरी तरह घायल होकर बेकार हो चुके थे, और शेष भी इस अप्रत्याशित हमले के लिये तैयार न थे। दो-तीन गला दबाकर वहीं और खत्म कर दिए गए। बदलू ने इनायतुल्ला पर और राजू ने हंटर पर हमला बोल दिया। राजू ने साहब का रिवाल्वर भी छीन लिया, और इसी प्रकार से उसके दूसरे साथियों ने कान्स्टेबिलों की संगीनें छीन लीं। कुछ कान्स्टेबिलों ने भागने की कोशिश की, परंतु सब-के-सब पकड़ लिए गए।)

पत्थर फेंकनेवाले बागी भी दौड़कर आ पहुँचे। बूढ़े लम्बरदार ने नवतारा को समझाकर कि वह सभी घायलों की सेवा-परिचर्या का प्रबंध देखे, तथा अमर और निर्मला को सान्त्वना देती रहे। स्वयं घटना-स्थल की ओर प्रस्थान किया। मोर्चा जीता जा चुका था, और बागी विजयी होकर देश के वास्तविक द्रोहियों एवं दुश्मनों को न्याय के लिये सरपंच के पास ला रहे थे।

टीले पर, जो रायसाहब और मोहनलाल के रक्त से रंगा जा चुका था, अदालत बैठी। जनता के घेरे में आज सिर झुकाकर भारत माता का चीर-हरण करनेवाले दुःशासन, गरीबों और मासूमों का खून पीने-वाले गद्दार, और देश के वीर सैनिकों को [illegible] [illegible] व्यवसायी अपने भाग्य का फैसला सुनने के लिये [illegible] थे। उनके चारों ओर नंगी-नंगी [illegible] संगीनें और रिवाल्वर लिये [illegible]।

इधर टीले के सामने अपना [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

अदालत का फैसला जानने के लिये खड़ी हो गई। रायसाहब और मोहनलाल दोनो मूर्च्छित अवस्था में थे। उनके घाव घातक थे, और उनके बचने की कोई सभावना न थी। शेष घायलों में से एक बूढे की दशा ही और चिंतनीय थी।

जनता ने न्याय की दुहाई देते हुए जोरदार माँग की कि इन देशद्रोहियों को इस बार न छोड़ा जाय। देश-द्रोह का दड प्राण-दड है। इन्हें गोली से उड़ा दिया जाय।

पंचों ने आपस में परामर्श किया, और कुछ ही मिनट बाद सरपच ने उठकर फैसला सुनाया।

"अदालत जनता की माँग का समर्थन करती है, और यह फैसला देती है कि देशद्रोहियों को तुरत गोली से उड़ा दिया जाय।"

जनता ने हर्षित होकर अदालत के निर्णय पर करतल-ध्वनि की। किसी ने नारा दिया—"आजाद भारत—"

जनता ने पुरजोश स्वरों में उत्तर दिया—'जिंदाबाद।"

भीड़ एक ओर छँट गई। बदी एक कतार में खडे कर दिए गए। उनकी छाती के सामने सगीनें और रिवाल्वर लगा दिए गए।

सरपच ने गोली मारने से पहले अभियुक्तों से पूछा—'किसी को कोई बात आखिरी वक्त भी कहनी है?"

अभियुक्तों का मुँह पीला पड़ चुका था। मौत का भय पल पल उनके सिर पर खडा ताडव कर रहा था। सबकी जबान बँध गई।

अमर और निर्मला ने सरपच से कुछ कहने की आज्ञा माँगी। आज्ञा मिल गई। अमर ने टीले पर खडे होकर कहा—'अदालत का निर्णय हम सबके सिर-माथे पर है, परतु अदालत और अपने दूसरे भाइयों से मैं अपील करती हूँ कि वे अपने निर्णय पर एक बार पुन. विचार करें। यह ठीक है कि इन लोगों ने अपने नीरीह देशभाइयों की हत्या की है, लेकिन हत्या के बदले में हत्या भारतवर्ष की आत्मा

और वसूलों के खिलाफ़ है। अँगरेजों के कठोर और निर्दय कानून अँगरेजों के साथ उनकी कब्र में चले जायँगे, आज़ाद भारत में ऐसे कानूनों के लिये कोई जगह न होगी। देश-द्रोह सबसे बड़ा और घृणित अपराध है, लेकिन उसकी सजा मौत नहीं, आजीवन क़ैद होनी चाहिए।" जनता के कुछ सदस्यों ने इसका विरोध किया। एक ने आगे आकर कहा—"हम हत्यारों और देशद्रोहियों के साथ कोई रियायत नहीं कर सकते।" दूसरे ने कहा—"यह रियायत करने का ही फल है कि इनायतुल्ला फ़ौज लेकर हम लोगों के ऊपर चढ़ आया।"

"शरम! शरम!!" की आवाज से अमराई गूँज उठी।

निर्मला ने आगे आकर कहा—"अदालत के माननीय पंचों और मेरे भाइयो! आपके प्राणप्यारे नेता और भाई आज आपसे बिछुड़ रहे हैं, और हम सब इस दुःख में दुखी हैं। हमारे हृदय में इन निरपराधों की हत्या करनेवालों के प्रति काफ़ी रोष और विद्रोह है। हम उनकी हत्याओं का बदला लेना चाहते हैं। लेकिन हमने जिनके नेतृत्व में यह संग्राम शुरू किया है, उस विश्ववंद्य, अहिंसा के परम पुजारी महात्माजी का संदेश हम क्यों भूले जा रहे हैं। हमें अपराध से घृणा करनी चाहिए, अपराधियों से नहीं। यदि हो सके, तो आप इन्हें फिर से प्राण-दान दीजिए। आज के संग्राम में होनेवाले शहीद अब न लौटेंगे। हम उन्हें अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं। यदि बापाजी और आपके वीर नेता बाबू मोहनलालजी कुछ भी होश में होते, तो वे भी यही कहते कि हो सके, तो इन भूले हुओं को प्राण-दान दो। देश-द्रोह के लिये बहुत अमर का मुक़ाबला काफ़ी है।"

जनता को निर्मला की वाणी ने फिर से विचार करने के लिये बाध्य कर दिया। उसने एक स्वर से अदालत से माँग की कि अदालत अपना निर्णय बदल दे।

पचों ने इस माँग पर पुन. गभीरता-पूर्वक विचार किया। पाच मिनट तक तर्क-वितर्क करने के बाद सरपच ने फिर से फ़ैसला सुनाया। इस बार दया करके मौत की सजा आजन्म कैद में बदल दी गई।

जनता ने करतल-ध्वनि के साथ इस निर्णय का स्वागत किया। जनता ने अभियुक्तों को यथापूर्व घेर लिया, और वे थाने की ओर ले जाए गए। भारत माता तथा नेताओं की जय तथा 'इन्किलाब-जिंदाबाद' के नारों से अमराई फिर गूँज उठी।

कुछ लोग घायलों को उनके घर पहुँचाने के लिये पीछे रुक गए। बैलगाड़ियाँ ले आई गईं, और उनमें घायल लिटा दिए गए। बैल-गाड़ियाँ गाँव की ओर चल दीं। अँधेरा हो चला था। साथ में मशालें जला ली गईं। निर्मला, अमर, नयनतारा, नत्रधारा, सब पीछे-पीछे साथ चलीं।

निर्मला और अमर, दोनो का अन्तस्तल रो पड़ा—एक ने अपना प्रियतम और एक ने अपना जन्मदाता बाप खो दिया था।

भीड़ थाने के निकट नारे लगाती हुई पहुँची, तो दाल में काला देखकर दोनो कान्स्टेबिल भाग खड़े हुए। खून बहुत निकल चुकने से गाजी और रामहरख के प्राण पखेरू उड़ चुके थे।

× × ×

एक पहर रात रहते ही रायसाहब ने प्राण त्याग दिए। वसत का सुहाग सूना हो गया। अमर ने भीगी आँखों से अपनी मा को बहुत ढाढ़स बँधाया—"ऐसी मौत बिरले की ही होती है। पिताजी ने जन्मभूमि के लिये प्राण-त्याग किया है। वह अब अमर हो चुके हैं, तुम न रोओ मा।"

परंतु रायसाहब के आँख मूँद लेने के शोक का वेग न सँभला। मा-बेटी एक दूसरे से लिपट गईं। दोनो की आँखें झरना बन गईं।

बूढे लम्बरदार और शेष सभी लोगों की आँखों में आँसू आ गए। लम्बरदार ने अमर और उसकी मां को बहुत कुछ समझाने-बुझाने की कोशिश की। अमर अपनी मां के आँसू रोकने के लिए अपनी आँखों के आँसू आँखों में ही पीने लगा। बसंत आया। अपने सुहाग के सिंदूर को एकाएक लुटा देखकर कैसे दिलजमई करती।

इधर सवेरा होते-होते मोहनलाल को कुछ होश हुआ। रात भर मोहनलाल की मां, निर्मला और किशोरी ने जागरण किया। नवतारा भी कुछ देर पहले यहाँ ही आ पहुँची। वैद्य और हकीम ने मोहनलाल की हालत गंभीर और चिंताजनक बताकर निराशा प्रकट कर दी थी। परंतु मोहनलाल को होश में आते देखकर सभी के मन प्रातःकालीन कमल से फूल उठे। गोली अब की पसली में लगी थी। निर्मला स्थिति को औरों की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह समझती थी। भीतर-ही-भीतर वह रो रही थी। अपने प्रियतम को होश में आता देखकर उसकी आँखें मुस्कराईं, परंतु उनमें दो मोती चुपके से टपक कर मोहनलाल के हाथ पर गिर पड़े। निर्मला ने मुँह फेर लिया।

"निर्मला!" धीरे से मोहनलाल ने पुकारा।

"जी!" निर्मला ने आँसू पोंछकर मुस्कराने की कोशिश की।

"अब मेरी अंतिम घड़ी है। लेकिन मैं मरकर अमर होने जा रहा हूँ, ये तुम्हारी आँखों में आँसू क्यों आ रहे हैं?"

दोनों को बातें करते देखकर किशोरी, नवतारा और मोहनलाल की मां, तीनों ही कमरे से हट गईं। निर्मला बोली—"नाथ! ये विदाई के आँसू हैं। तुम जा रहे हो, तो जाओ, मैं तुम्हारी जीवन-भर प्रतीक्षा करूँगी।" निर्मला की अश्रुधारा फूट पड़ी।

मोहनलाल ने निर्मला का हाथ पकड़ लिया, और बोला—"निर्मला! तुम बड़ी पागल हो। तुम्हें मेरे पीछे अपना जीवन बरबाद करना चाहिए। तुम्हें इसका कोई हक नहीं। मैंने अ

तक जो कुछ किया, वह कर्तव्य समझकर किया। यह ठीक है कि मैंने तुम्हें अपने समूचे दिल से प्यार किया है। लेकिन अभी तुम कुँआरी हो, कुँआरी लड़कियों के सौ वर हो सकते हैं।...तुम जाओ,...विवाह के संबंध में अपने मा-भाई की आज्ञा की कभी उपेक्षा न करना। मैं शांति से तभी मर सकूँगा, जब तुम मुझे मोहन भैया कहकर पुकारो।"

"यह मुझसे तो न हो सकेगा मोहन बाबू! रग-रग में फैली हुई प्रीति की लता आज कैसे पल भर में सूख सकेगी।" निर्मला ने अपने हृदय की बेकली और हलचल का अनुभव करके प्रतिवाद किया।

'तुम्हारे जीवन का वसंत बीत चुका है,...पतझड़ आ गया है। .. वह लता अपने आप मुरझा जायगी तब तुम उसे आँसू-जल से फिर न सींचना निर्मला! अच्छा, . बीते हुए को एक सपना समझकर भूल जाना...वंदे। मोहनलाल ने अंतिम साँस ली, और दूसरे ही क्षण सोने का शरीर मिट्टी बन गया।

निर्मला फफककर रो पड़ी।

"क्या है? क्या हुआ?", करके सभी दौड़ी आईं। नवधारा ने बढ़कर मोहनलाल के मुँह पर चादर ढँक दी।

सबके नयन भीग उठे।

सवेरा हो गया।...गुड़गाँव से आज चार अर्थियाँ तिरंगा में लिपटी हुई साथ-साथ उठीं। शोकाकुल जनता ने भारी दिल, भारी मन और भारी तन श्मशान तक उनका साथ दिया। जिधर से भी ये अर्थियाँ निकलीं, श्रद्धापूर्वक शीश झुकाकर आबाल-वृद्धों ने उन पर पुष्प वर्षा की।

गाजी की अर्थी दफनाने के लिये कब्रिस्तान ले जाई गई, और शेष तीन अर्थियाँ श्मशान की ओर चिता पर जलाने के लिये। किंतु

इन चारो अर्थियो पर सोनेवाले शहीदो ने एक ही उद्देश्य, एक ही व्रत के लिये अपने उष्ण रक्त से कुर्बानी की स्वर्ण गाथा लिखी थी—एक ही मा—भारत मा—के अचल में।

× × ×

थाने पर फिर से तिरगा फहरा दिया गया।

[११]

देवकुमार ने अमृतसर पहुँचकर सबसे पहला जो काम किया, वह यह कि दैनिक मिलाप का ताजा संस्करण मँगवाकर उसका उन्होंने संक्षिप्त सिंहावलोकन किया।

अखबार-भर में आंदोलन की प्रगति के संबंध में कोई समाचार न था। सर्व-प्रथम सरकार के सेंसर-विभाग की कृपा से आंदोलन-संबंधी समाचार गोल-मटोल होकर कट छँटकर आते थे। फिर दूसरे, भारत-रक्षा-क़ानून की आड़ लेकर इस प्रकार के समाचार देने पर रोक लगा दी गई थी। प्रधान शीर्षक तथा मोटे टाइपों में शीर्षकों के देने पर भी निषेधाज्ञा लागू हो गई थी।

मिलाप के एक कोने में अपने विशेष संवाददाता की लाहौर से केवल एक खबर छपी हुई था, जो देवकुमार के बड़े मतलब की निकली। उस खबर में यह कहा गया था कि यह विश्वस्त सूत्र से पता चला है कि जिन दो समाजवादी नेताओं के फ़रार हो जाने पर पंजाब-सरकार ने उन्हें जीवित पकड़ लाने के दस दस हजार के पुरस्कार की घोषणा की है, उनको श्रीमती हेमलता दास की हत्या और दूसरी रात को होनेवाली स्पेशल ट्रेन-दुर्घटना से संबंधित बतलाया जाता है। संदेह में घटना-स्थल के आस-पास के क्षेत्रों से कई महत्त्व-पूर्ण गिरफ़्तारियाँ हो चुकी हैं। फ़रार की खोज जारी है।

संवाददाता ने बड़ी सावधानी से फ़रारों की गिरफ़्तारी न और गिरफ़्तार होकर क़ानून के क्रूर दंड-विधान से बचने के लिये खतरे की घंटी बजाकर फ़रारों को सजग कर दिया था। लेकिन संवाद-

दाता को इतनी गुप्त कार्रवाइयों का पता कहाँ से चला ? श्रीमती हेमलता दास की हत्या, और उन दो फरारों में से किसी एक ने की ? तो क्या शिशिर बाबू ने अपनी पत्नी की हत्या कर डाली है ? ... जरूर गए थे, . परन्तु यह निरीह हत्या क्यों ? क्या प्रेमजन्य विवाह में परस्पर अविश्वास और प्रीति का इतना निर्मम अभाव हो सकता है ? परन्तु शिशिर बाबू ने दूसरी रात को निश्चित स्थान पर मिलने पर तो मुझे कुछ भी न बताया था। उनका चेहरा गंभीर जरूर था, परन्तु उदासी की जगह उसमें दृढ़ता, कार्य-तत्परता और देश के प्रति लगन की भावनाएँ ही अधिक परिलक्षित हो रही थीं। मुझे, बोतासिंह और कृपालसिंह को आवश्यक निर्देश तथा डायनामाइट देकर वह क्रांति को संचालित करने के लिये वहाँ से चले गए थे। शिशिर बाबू ने मुझसे एक हफ्ते बाद अमृतसर में मिलने का वादा किया है। लेकिन अभी उनके आने में दो-तीन दिन की कसर है। यह निश्चित है कि सी० आई० डी० द्वारा सरकार को बहुत कुछ रहस्य का पता चल चुका है, तो फिर बोतासिंह और कृपालसिंह में से कोई गिरफ्तार हो गया है क्या ? यदि ऐसा हुआ, तो बोतासिंह बहुत कमजोर दिल का आदमी है। अगर पुलिस का मुखबिर हो गया, तो फिर ईश्वर ही कुशल करे।

देवकुमार ने बैठक में बिछे गद्दे पर एक उच्छ्वास छोड़कर करवट बदली। अखबार एक ओर डाल दिया, और दिमाग में इन सब चीजों को बाहर निकाल फेंकने तथा कुछ देर विश्राम कर लेने का प्रयत्न करने लगे। रात की थकावट और नींद अभी दूर नहीं हुई थी। उन्हें जल्दी ही नींद आ गई।

तीसरे पहर अंजना ने अपने छोटे पाँच-छः वर्ष के भाई ... को भेजा कि देख आओ कि तुम्हारे जीजाजी क्या कर रहे हैं। दूकान और देवकुमार जिस बैठक में सो रहे थे, उसमें आनाजाना

ग्रा आया और धीमे से उसने आवाज दी—"जीजाजी।" उनके न
बोलने पर वह उनके और निकट आया, और यह देखकर कि वह सो
रहे हैं, लौट गया। अपनी जीजी से उसने बतला दिया कि जीजाजी
सो रहे हैं।

अंजना ने सोचा था कि चलूँगी, जल-पान कुछ लेती जाऊँगी, और
बातें भी कुछ करती आऊँगी। लेकिन अब सो रहे हैं, तो जगाना ठीक
नहीं, सो लेने दो। जागेंगे, तब दे आऊँगी जल-पान। बाबूजी बैंक
से लौटकर छ बजे के पहले नहीं आते। तब तक अगर यह घंटे भर
भी पहले उठ बैठे, तो बातचीत करने को काफ़ी समय मिल जायगा।

लगभग ५॥ बजे देवकुमार सोकर उठे, तो उन्होंने देखा कि
अंजनादेवी उनके लिये जल-पान लेकर बैठी हुई हैं। अंजना ने
अपने पति के उठने पर मुस्किराकर उनका स्वागत किया। बदले में
देवकुमार भी मुस्किराकर बोले—"कितनी देर से तुम यहाँ हो?
आज तो बड़ी गहरी नींद आ गई थी।"

"तो अब आप रात को नहीं सोएँगे।" अंजना ने उत्तर दिया।
"लीजिए, जल-पान कर लीजिए।"

"बड़ा कष्ट किया आज श्रीमतीजी ने।"

"वाह! आप भी खूब कह रहे हैं।"

"अच्छा, तो तुम्हें भी साथ में हिस्सा बँटाना पड़ेगा।"

"नहीं, मैं तो अभी-अभी जल-पान करके आ रही हूँ।" अंजना ने
कुमार को पट्टी पढ़ानी चाही।

देवकुमार ने मुस्किराकर कहा—"तब तो आज तुमने अपना पति-
धर्म तोड़ दिया। मेरे खाने के पहले तो तुम्हें ...।"

"यह नियम सब जगह के लिये थोड़े न होता है।"

"ठीक! तो वहाँ पर दिखावे के लिये ही यह ढोंग रचा जाता
क्यों?"

"नहीं। बात यह है कि यहाँ कोई देख लेगा, तो हँसाई होगी।"

"शाबाश! यह माजरा है। लेकिन जब तक तुम न खाओगी, मैं भी न खाऊँगा।"

हार खाकर अंजना को साथ ही जल-पान पर बैठना पड़ा। इस बीच बहुत-सी इधर-उधर की बातें चलती रहीं।

बातों-ही-बातों में देवकुमार ने अंजना को बतलाया कि दो-चार दिन में सम्भवतः मुझे एक काम से चला जाना पड़े। फिर पता नहीं कि मैं कब तक लौटूँ।

अंजना का दिल धक्-धक् करने लगा, परन्तु फिर भी मुस्कराने की चेष्टा करते हुए बोली—"मैं आपको जाने ही न दूँगी, तब?"

"तुम मुझे न रोक सकोगी, रानी।"

"क्यों?"

"यह ऐसी ही एक बात है।" देवकुमार के इस उत्तर से अंजना के मुँह पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। उसे मालूम था कि वह जेल से फ़रार होकर भागे हुए हैं, और रही-सही एक स्पेशल ट्रेन [illegible] आए हैं। अँगरेज़ी कानून की किताब में ऐसे गुरुतर और [illegible] अपराध के लिये एक ही विधान है, एक ही दण्ड है—फाँसी। अंजना की रूह काँप उठी। हे भगवान्! क्या इतनी जल्दी [illegible], बासन्ती फूल खिलने के पूर्व ही क्या [illegible] की कलि [illegible] मेरी माँग का लाल सिंदूर धुल जायगा! क्या आज का मिलन [illegible] बीती हुई कहानी बन जायगी! उसने गिड़गिड़ाकर [illegible] को "नाथ! आप [illegible] में कहीं भी बाहर न जाइए। मैं आपसे आँचल पसारकर भीख माँगती हूँ।"

देवकुमार अट्टहास कर उठा।

"इतने ही में घबरा गईं! [illegible]" [illegible] आया।

"क्या है चंद्र।"

'आओ चंद्र बाबू।" देवकुमार ने प्रकृतिस्थ होकर प्यार से चंद्रकांत को बुलाया।

लेकिन चंद्रकांत अपने जीजाजी की ओर न जाकर अपनी जीजी के कान में चुपके से कुछ फुसफुसाया— 'बाबूजी देक से आ गए।"

"अच्छा, चल। मैं आई।' अंजना ने चंद्रकांत को बाबूजी के आगमन की सूचना देने के लिये बैठक में आने के पहले नियुक्त कर दिया था।

चंद्रकांत चला गया।

अंजना ने बड़े कातर स्वरों में फिर कहा—"आप मुझे वचन दीजिए कि आप यहाँ से कहीं न जायँगे।"

"अंजो रानी। घर में बैठे रहने से पुरुष का काम नहीं चलता। इस घर से बाहर भारत माता का एक विराट् घर है, उसमें आग लगी है। मुझे उस आग को अपने हाथों से बुझाने के लिये जाना ही होगा। जाओ, तुम इन चीजों को अभी नहीं समझ सकता।"

देवकुमार की दृढ़ता और देशभक्ति ने उसे विवश कर दिया कि वह चुपचाप यहाँ से उठकर चली जाय। उसकी आँखों में आँसू छलछला आए, और वह चंद्रकांत की उँगली पकड़कर भीतर चली गई।

देवकुमार हाथ-मुँह धोकर इधर-उधर बैठक में ही चहलकदमी करने लगे।

इतने ही में अंजना के पिता प० नीलकांत चतुर्वेदी ने बैठक में प्रवेश किया। शिष्टाचार और कुशल-क्षेम की वार्ता के अनंतर [illegible] कर्म से निवृत्त होने के लिये वह भीतर चले गए। इत[illegible] अंजना के बड़े भाई प० इंद्रकांत आ पधारे।

इंद्रकांत ने नगर में चलने वाले आंदोल[illegible] [illegible]

पूछ-ताछ करने पर देवकुमार को पता चला कि यहाँ पर सरकार आंदोलन को दबा-सा दिया है। लूट-मार के किस्से इस बीच में थे, जिनके संबंध में तथा आंदोलन में सहानुभूति रखनेवालों भारत-रक्षा-विधान के अंतर्गत बड़ी जोरों से गिरफ़्तारियाँ हो रही सामान्य तौर पर बाजार वगैरह भी खुलने लगे हैं। पुलिस का सतर्क रहती है। सी० आई० डी० फ़रारों का पता लगाने के हाथ धोकर पीछे पड़ी है।

इंद्रकांत यह तो जानते थे कि देवकुमारजी कांग्रेस-समाजवादी के सदस्य हैं, परंतु उन्हें यह न ज्ञात था कि वह भी जेल से फ़ होनेवालों में से एक हैं। इंद्रकांत को सामान्य तौर पर राजनी और अखबारों में उतनी दिलचस्पी भी न थी। दफ्तर चले जाना चले आना, मित्रों के यहाँ गप्प-सड़ाके लगा आना, शतरंज के खेल लेना या सिनेमाबाजी कर आना, इतनी ही उनकी दिनच थी। इन दिनों बीबी घर में थी नहीं, इसलिये घर भी समय पर लौ की उन्हें चिंता न रहती थी।

× × ×

केशर को अपने बचपन की स्मृति भूली नहीं है। उसे यह याद था कि उसके चाहने पर भी अंजना अपना विवाह हो जा के बाद से उससे बातें करना नहीं चाहती थी। परंतु वह यही सोच था, शायद अंजना ऐसा लोक-दिखावे के लिये करती रही हो। ब पन की अंजना तारुण्य से अभिषिचित होकर इतनी जल्दी अतीत स्वप्नों को, दुलार और ममता को कैसे भूल जायगी। मैं यदि फि भी आज प्रश्न करूँगा, तो वह मेरे प्रश्न का उत्तर अवश्य व जायगी। केशर संभवत यही भूल कर रहा था। अंजना विवाहित थी। उसका स्वयं का भी एक सुंदरी पंजाबी युवती से विवाह हुआ था, परंतु अंजना के प्रेम का दीवाना बनकर उसने अपनी परिणीत

के पुनीत प्रेम को ठुकरा दिया था। उसने अपनी दृष्टि में प्रेम के नाम पर उच्छृंखल त्याग किया था, और इसी की वह अजना से भी अपेक्षा करता था।" अपनी पत्नी के मर जाने पर वह उसकी ओर से निश्चिन्त भी हो चुका था।

अजना के आने का पता पाकर वह किसी-न-किसी तरह उससे मिलने के लिये व्याकुल हो उठा। उसे यह भी पता चला कि अंजना के पतिदेव भी आए हुए हैं, और वह कुछ दिनों ठहरनेवाले भी हैं। पड़ोसी होने के कारण अजना के घर की सभी अच्छी-बुरी और छोटी-बड़ी बातों का ज्ञान उसे रहता था। वह यह तो बहुत पहले से ही जानता था कि उसके पति का नाम देवकुमार शर्मा है और कांग्रेस के आदमी हैं। केशर पढ़-लिखकर सरकार के गुप्तचर-विभाग म शामिल हो गया था। और उसके देश-विरोधी कार्यों से प्रसन्न होकर सरकार ने उसे अब सी० आई० डी० इस्पेक्टर बना दिया था। उसे केंद्रीय सरकार से फरारो और जेल से भागनेवाले आम और राजनीतिक क़ैदियों तथा भगोड़े सैनिकों का पता लगाने के लिये आदेश प्राप्त थे। जेल से फ़रार होनेवालो मे शिशिर बाबू और देशभक्त के नाम भी उसकी गुप्त अन्वेषण-सूची मे थे। उसके पास देशभक्त का जो फोटो था, वह देवकुमार के चेहरे और रूप-रेखा से बहुत-कुछ मिलता-जुलता था। स्पष्ट मिलान के लिये उसने मौका पाकर देवकुमार का एक चित्र अपने जासूसी कैमरे से और ले लिया। उसे देशभक्त के चित्र से मिलाने पर केशर का संदेह और भी दृढ़ हो गया। गुड़गाँव से अमृतसर भागकर आना और बहुत गुप्त रूप से रहना भी उसके सदेह की पुष्टि का प्रमाण था। केसर को विश्वास हो गया कि अजना या तो मेरे सामने अब झुककर रहेगी या फिर वह अपने पति से हाथ धो बैठेगी। मेरी हर हालत मे चाँदी है या तो अंजना मिलेगी, और उसे मैं प्रेम करना सिखा लूँगा या

फिर इधर दस हजार का सरकारी पुरस्कार है, जो कहीं गया ही नहीं है।

अजना ने अपने पति का कच्चा चिट्ठा अपनी मा को रो-रोकर बतला दिया। और उन्हे सारी परिस्थिति से अवगत करा दिया था। मा ने एक तो अपने बेटो और नौकरो को निदेश दे दिए थे कि वह देवकुमारजी की गतिविधि पर कड़ी दृष्टि रक्खे, दूसरे, अजना उन्हे हमेशा प्रसन्न रक्खे, और हर समय उनके पास बनी रहे, और तीसरे, अजना को गुप्त रूप से यह भी बतलाया कि केशर सरकार का जासूस हो गया है। न तो उसकी छाया कुँवर साहब पर पड़ने दे, और न कोई बात उनके बारे मे उसे मालूम होने दे।

अजना को यह विश्वास न हुआ कि जो केशर उसके लिये एक दिन मरने-मारने को तैयार था, वह उसे या उसके पति को कोई हानि पहुँचाएगा। उसने यह तो जरूर किया कि अपने पति को केशर की छाया मे बचाने का प्रयत्न किया, लेकिन खुद कभी उससे न मिलना चाहने पर भी केशर ने कई बार यह प्रयत्न किया कि वह उससे एकात मे मिले। वह प्राय ऐसे मौके ढूँढ निकालने की ताक म रहने लगा। अजना भूलकर भी केशर की ओर न देखती।

अजना जब से अमृतसर आई है, वह रोज शिवालय जाकर शिव-पार्वती की पूजा करती, उनसे अपने सुहाग की भीख माँगती और पति की मगल-कामना करती है। उसे कुछ ऐसा विश्वास-सा हो चला था कि भगवान् आशुतोष मुझ पर जरूर प्रसन्न होगे, और उनका कुछ भी न बिगडेगा। यह देवालय अजना के मुहल्ले से काफी दूर और कुछ सुनसान स्थान में पडता था। परतु वह चद्रकात को लेकर रोज शाम को कुछ अँधेरा हो चलने पर शिव-पार्वती के पूजन को जाती थी—आसन्न आपत्ति ने उसे धर्म भीरु और आस्तिक बना दिया था। विवाह हो जाने के बाद से वह सभी देव-देवताओं को

भूल गई थी। विवाह होने के पूर्व तक वह प्राय शिवालय जाया करती थी।

केशर ने दूसरे दिन कुछ दूरी पर रहकर शिवालय तक अजना का पीछा किया। अजना मदिर में प्रवेश करके शिव-पार्वती की पूजा करने लगी। चंद्रकात कुछ देर तक अपनी बहन के पास खड़ा रहा—फिर बाहर निकलकर चबूतरे पर खडा हो गया। केशर मदिर की दीवाल की आड़ म आकर छिप रहा था। वह सामने निकल आया, जैसे वह सड़क चलते मदिर के पास आ पहुँचा हो, और किसी परिचित को देखकर ठहर गया हो। केशर चद्रकात के सामने आकर खड़ा हो गया। बोला—"कहिए, चद्र बाबू! कैसे आए आज? क्या तुम्हारी अजो जीजी साथ आई हैं?"

"हाँ, जीजी भीतर पूजा कर रही हैं।" चद्र ने स्वाभाविक ढग पर मुस्किराते हुए उत्तर दिया।

केशर इधर-उधर की बहुत-सी बातें चद्र से करता रहा, और तब तक न टला, जब तक अजना की पूजा न समाप्त हो गई।

अजना पीठ घुमाए पूजा करती थी, परतु आवाज से केशर को आया और उसे यहाँ से न जाते देखकर मन-ही मन कुढ़ने लगी कि कैसे ही यह हट जाता। लेकिन पूजा समाप्त ही होती और चूँकि केशर को अंजना से मिलने का इससे अच्छा मौका न लगता, वह बिना मिले यहाँ से हटता भी नहीं।

अजना बाहर निकली और धीरे से चद्र से बोली—"चलो चद्र, चलें।"

केशर ने टोका—"मैंने कहा, भूल गई क्या अजो रानी! कब आई?"

अजना को विवश होकर उत्तर देना पड़ा—"वाह! भूल कैसे जाती, केशर बाबू! मेरे आने की बात आपको तो मालूम ही

होगी। अच्छा।" अजना चद्र का हाथ पकड़कर चलने को हुई। उसने न तो केशर की ओर देखा, और न उसे उत्तर देते समय मुस्किराई ही।

केसर को अजना का यह रुख बुरा लगा। मन-ही-मन सोचने लगा—विवाह क्या हो गया है, बड़ी सती सावित्री बन गई हैं। बोला—"मुझे तो ऐसा जान पड़ता है कि तुम मुझे सीधी तरह निगाह उठाकर देखना भी नहीं चाहती। चूहे खाकर बिल्ली हज करने चली है।"

"आपका मतलब ?" भौंहें तानकर अजना ने पूछा।

केशर ने अट्टहास किया—ऐसा अट्टहास, जिसमें क्रूरता, भीषणता, घृणा और क्रोध की भावनाएँ मिली हुई थीं। बोला—"अजो रानी!...क्यों सारी बातें कहलाना चाहती हो। रानी!" केशर की आँखों में नशा छा गया।

अजना ने अपना मुँह केशर के सामने किया। चेहरा लाल हो गया। भौंहें खिच गईं। कड़ककर बोली—"केशर बाबू! तुम्हें इस तरह पर-स्त्री का अपमान करने का अधिकार नहीं है। मै नहीं जानती थी कि तुम सचमुच इतने पतित निकलोगे।"

केशर जोर से हँस पड़ा—"रानी! अगर मैं पतित हूँ, तो तुम मुझसे पहले। मैं आज तक तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रहा था। मैं नहीं चाहता कि तुम्हें मैं धोखा दूँ, बशर्ते कि आज भी तुम मेरी होना स्वीकार कर लो।" केशर के स्वर मे एक विकट आग्रह था।

"केशर! तुम सीमा से आगे बढ़ रहे हो। पर-स्त्री को पाप-कर्म के लिये प्रोत्साहित करते हुए तुम्हें शर्म नहीं आती।" अजना एक हाथ मे पूजा की थाली और एक हाथ से चद्र की उँगली पकड़कर तेजी से आगे बढ़ी।

"शर्म! शर्म औरतों का शृंगार है, पुरुषों का नहीं।...अजना! अगर

तुम अपनी और अपने पति की खैरियत चाहती हो, तो जहाँ-की-तहाँ ठहर जाओ।" केशर ने धमकी दी।

अजना का माथा घूमा। उसके पैर रुक गए, हालाँकि उसका मस्तिष्क जोर-जोर से उससे कह रहा था— 'आगे बढ़ो, आगे बढ़ो। उसे मालूम हो चुका था कि केशर सी० आई० डी० का इंस्पेक्टर है। क्या पता कि उसे उनके बारे में सब कुछ मालूम हो गया हो। उसका जी घबराने लगा। उसकी साँसें ऊपर-की-ऊपर और नीचे-की-नीचे बँध गईं। पसीने से उसका ब्लाउज भीग उठा। उसकी आँखों-तले अँधेरा छाने लगा।

केशर पास आया, और बोला—"अजना! याद रक्खो कि मुझे तुम्हारा और तुम्हारे पति का सारा राज मालूम है। यदि तुमने मेरी बात न मानी, तो इधर मैं तुम्हारा राज तुम्हारे उनके सामने कल खोल दूँगा और तुम्हारे उनका राज सरकार के सामने। मैं तुम्हारे बचपन का साथी हूँ, अजो रानी! बीते हुए सपनों को याद करो, क्यों अपनी इज्जत और अपनी जिंदगी का सारा सुख मिट्टी में मिलाना चाहती हो!"

अजना के हाथ-पाँव ढीले पड़ गए। न वह अपने पति की आँखों और समाज में नीचे गिरना चाहती है, और न यही वह चाहती है कि कल को उसके जीवन-धन गिरफ्तार हो जायँ, और इस प्रकार कलंक का टीका तो मेरे और घरवाला के सिर पर लगे ही, वह अपने प्राणों से भी उधर हाथ धो बैठें। वह अमृतसर आकर बड़े असमंजस में पड़ गई। उसे क्या पता था कि उसके बचपन का एक साथी उसकी जवानी का, उसकी इज्जत का और उसके सुहाग का गाहक बन जायगा। उसने गिड़गिड़ाकर केशर से कहा—"केशर बाबू! मेरी इज्जत तुम्हारे हाथ है।...उनके प्राणों की भीख में आँचल पसारकर तुमसे माँगती हूँ!" अपने भाई की नजर बचाकर

उसने अपना आँचल पसारा, और अपनी अश्रु-भरी बड़ी-बड़ी आँखें नीचे झुका दीं।

केशर का दिल न पसीजा। उसने अंजना के शब्दों का दूसरा अर्थ लगाया, और उसने समझा कि अंजना मुझे आत्मसमर्पण कर रही है। बोला—"अच्छा, जाओ अंजो रानी! कल शिवालय में इसी समय मुझसे फिर अकेले मिलना।"

"लेकिन अकेले अम्मा ने न आने दिया, तो?"

"तो समझ लो कि इसे मैं तुम्हारी वादाखिलाफी समझूँगा, और इसके मानी यह होंगे कि मैं तुम्हारे साथ कोई रू-रियायत न करूँ।"

"तुम बड़े कठोर हो, केशर बाबू।" अंजना की आँखों से दो आँसू टपक पड़े, परंतु उसने झट से मुँह फिराकर आँचल से आए आँसू पोंछ डाले, जिससे चंद्रकांत कुछ समझ न पाए।

लेकिन चंद्रकांत ने देख लिया अपनी जीजी को रोते। बोला—"चलो जीजी! तुम तो रो रही हो।"

"चल, रो कहाँ रही हूँ।" अंजना ने मुस्किराकर उसके गाल थपथपाए और आँखों से केशर को संकेत करके घर की ओर चल दी।

केशर ने भी उसे और रोकना उचित न समझा।

रास्ते में चंद्रकांत ने अंजना से पूछा—"जीजी! तुम लोग दोस्त होकर लड़ क्या रहे थे?"

"लड़ कहाँ रहे थे रे! बातें हो रही थीं।"

"अच्छा!" चंद्रकांत को क्या मालूम था कि उसकी जीजी उससे कभी झूठ बोलेगी। उसने मान लिया कि जीजी जो कुछ कह रही है, ठीक कह रही है।

× × ×

रात को अंजना ने कुछ खाया-पिया नहीं। माँ ने आग्रह किया,

इंद्रकांत ने आग्रह किया, लेकिन उसने यह कहकर कि आज तबियत कुछ ठीक नहीं है, सबका आग्रह टाल दिया। वह जिस उलझन मे थी, उसने उसकी भूख और नींद सब हर ली।

वह अपने बिछौने पर जाकर पड़ रही। अभी तक की सारी परिस्थिति पर उसने पुनर्विचार करना शुरू किया। उसके सामने दो जीवन-साथी थे—एक बचपन का, जो अबसे हमेशा उसके साथ रहने का आग्रह कर रहा है, और दूसरा उसके यौवन का, जिसने सहसा ही उसके जीवन मे प्रवेश किया, परन्तु जिससे अभी तक कोई अरमान उसके पूरे नहीं हुए, और जो अपने कृत्यो से ही उससे हमेशा के लिये शीघ्र ही बिदा होनेवाला है। एक को उसने प्यार किया, और बदले में उससे उसे भरपूर प्यार मिला, और आज भी वह उसके प्रेम में दीवाना है। सुना है, उसकी बीवी उसके प्यार की याचना करते-करते मर गई। और दूसरा। दूसरे को उसने चाहा कि वह जी भरके प्यार करे, लेकिन जिसे आज तक वह अपने वश मे नहीं कर सकी, अपने को सब तरह से अर्पित करके वह जिसके प्यार को नहीं ख़रीद सकी।

अंजना ने करवट बदली। अपनी हार, और अपने दुर्भाग्य पर उसकी आँखें भीग उठीं। उसकी चिंतना आगे बढ़ी। तो भी जिसको मैंने एक बार अपना मान लिया है, क्या उसके सुख-दुःख, दोनो मे ही मुझे उसका साथ नहीं देना चाहिए? क्या मुझे उसके साथ विश्वासघात करना होगा? क्या उनके प्राण बचाने के लिये मुझे केशर की अपनी बनना स्वीकार करना पड़ेगा? या फिर केशर से बैर मोल लेकर अपनी इज़्ज़त और उनके प्राण संकट मे डाल दूँ? कल के केशर और आज के केशर में पृथ्वी-आकाश का फ़र्क है, परंतु मैंने ही तो उसे अपना प्यार देकर इतना प्रगल्भ और इतना उच्छृंखल बना दिया था, और फिर मैंने ही उसके हृदय में प्रेम की टीस पैदा करके

उसे कुचलने की भी कोशिश की। मैंने अपनी आग एक दूसरा जीवन-आधार पाकर बुझा दी, परन्तु उसने अपनी आग मुझसे कहीं सुंदर पत्नी पाकर भी न बुझने दी। लेकिन वह मुझे आग्रह और याचना करके नहीं, धमकी के बल अपनी बनाना चाहता है—फिर जो मुझे धमकी दे सकता है, उसका क्या विश्वास कि वह मेरे राज को छिपाए रक्खेगा, और मुझे सर्वथा अपने लिये सुरक्षित बनाने के लिये उनको अपने मार्ग से हटाने का प्रयत्न न करेगा। और, क्या पता कि वह प्यार का प्रलोभन देकर एक दिन मुझे ठुकरा भी दे—मैं यहाँ से भी जाऊँ, और उधर भी कहीं ठिकाना न रहे। प्यार और धमकी, दोनों उसके छल-बल के अस्त्र भी हो सकते हैं। यह ठीक है कि वह उनसे मेरे और अपने प्रेम के बारे में कुछ झूठी और कुछ सच्ची कहानी कहकर मुझे उनकी और मा-बाप की नजरों से गिरा सकता है, परंतु यदि मैं उन्हें किसी प्रकार सवेरे ही यहाँ से कहीं दूर चले जाने और छिपे रहने को राजी कर सकूँ, तो न मुझे उस पिशाच के आगे झुकना पड़ेगा, न मेरी इज्जत लुट सकेगी, और न वह सरकार के चंगुल में ही आ सकेंगे। हो सकता है कि केशर को उनके बारे में कुछ भी न मालूम हो, लेकिन मैंने भी कैसी मूर्खता की [illegible]उसकी धमकी में आकर इतनी कमजोर पड़ गई। इससे तो उसका [illegible] और भी पुष्ट हो गया होगा। उफ्!

अंजना को अपनी भूल पर बड़ी बेचैनी का अनुभव हुआ, और दूसरी करवट लेट रही।

लेकिन अगर वह न माने, और उन्होंने जिद पकड़ ली कि नहीं, मैं तो न जाऊँगा, तो फिर? तो मैं उन्हें मनाऊँगी, उनके पैरों पड़ जाऊँगी और कहूँगी कि तुम यहाँ से चले जाओ, सी० आई० डी० तुम्हारे पीछे पड़े हैं, वह तुम्हारी जान के गाहक हो रहे हैं। क्या वह तब भी न मानेंगे? क्यों नहीं मानेंगे? वह मौन से खेल खेल रहे हैं,

परतु मैं उनकी अगरक्षिका वनकर यथासभव उनके प्राणों की रक्षा करूँगी। कम-से-कम इतना तो उन पर मेरा अधिकार है ही। देश-सेवा के पीछे वह मेरे सुहाग का सिंदूर नहीं लूट सकते। मैं उस नर-पिशाच के हाथों का न स्वयं खिलौना बनना चाहती हूँ, और न उन्हे खिलौना बनने दूँगी।

इस प्रकार के सकल्प-विकल्प और उधेड़-बुन मे अजना की रात बीत गई। अँधेरे ही उठकर अपने पति की बैठक की ओर गई कि देखूँ, वह जाग गये क्या? परतु देवकुमार अभी सोए हुए थे।

अजना के रोकने और मना करने पर भी देवकुमार साँझ को वाहर निकल जाते और प्राय रात को बारह-एक बजे तक लौटते। कल रात को एक बजे शिवालय के पास शिशिर बाबू आनेवाले थे—परतु वह किसी कारण-वश न आ सके। उनका एक दूत निश्चित समय पर आकर उन्हे बतला गया कि आज से ठीक दो रोज बाद शिशिर बाबू आएँगे, और उन्हें उनके साथ शिमला जाकर पजाब के गवर्नर की हत्या की योजना मे भाग लेना होगा। शिशिर बाबू एक साधु के वेश में आएँगे, और देवकुमार को भी साधु की पोशाक मे ही उनसे वहाँ पर मिलना चाहिए, क्योंकि उसी वेश में, उसी रात को शिमला जाना होगा। दूत ने यह भी बतला दिया कि बोधासिंह गिरफ्तार हो गया है, और वह पुलिस का मुखबिर बन गया है। बडी सतर्कता से रहने की आवश्यकता है। बोधासिंह की मदद मे सी० आई० डी० और पुलिसवाले हम सब लोगों की खोज में पीछे पडे हुए हैं।

देरी से सोने के कारण देवकुमार को गहरी नींद में पड़ा देखकर अजना ने उन्हे जगाना ठीक न समझा। पास ही उसके पिता और इद्रकात भैया भी सोए हुए थे। वह दबे पाँव फिर बिस्तरे पर लौट गई।

दोपहर तक सबके दफ़्तर चले जाने पर उसे अपने पति से मिलने का मौका मिल सका। नौकरों से उसे पता चल गया था कि रात को वह दो बजे लौटे थे, लेकिन कल वह बारह ग्यारह बजे के करीब गए भी थे।

मुस्किराकर अंजना ने पूछा—"सुना है कि आप रात को बड़ी देर में लौटते हैं? कल आप रात को ग्यारह बजे कहाँ गए थे?"

"अंजना रानी की किसी सौत के यहाँ।" देवकुमार ने मुस्किराते हुए उत्तर दिया। "लेकिन महादेवीजी साँझ को रोज कहाँ जाया करती हैं?"

"जहाँ तुम जाते हो, वहीं मैं भी जाती हूँ।" चिढ़ाने के लिये अंजना ने व्यंग्य में कहा।

इस व्यंग्य ने देवकुमार के सोए हुए संदेह को सजग कर दिया। कल शिवालय से लौटने पर अंजना तो भीतर चली गई थी, लेकिन चंद्रकांत को देवकुमार ने अपने पास बुला लिया था, और बातों-ही-बातों में उससे मालूम कर लिया कि जीजी रोज शाम को शिवालय जाती हैं, और कल लौटने लगीं, तो केशर ने जीजी को रोक लिया, और बहुत-सी बातें उन लोगों में हुईं। आज केशर फिर आएगा, जीजी से बोला—'कल तुम अकेले आना। और जीजी रो भी पड़ी थीं। दोनों में बड़े गुस्से की बातें हुई थीं। जीजी तो कहती थीं कि गुस्से की बातें नहीं थीं, ऐसे ही बातें थीं। चंद्रकांत को यह तो याद न रहा कि और क्या-क्या बातें हुई थीं। क्योंकि उसकी अक्ल उसकी उम्र से भी छोटी थी, चंद्रकांत की बातों से उसका शक पक्का हो गया था। केशर की हरकतों और उसे दूर से देखकर अंजना के चौंक उठने आदि से भी उसने यही निष्कर्ष निकाला कि हो न-हो, दाल में कुछ काला अवश्य है। उसने मन-ही-मन अंजना से इस छिपे

की पुष्टि करके आज ही अपने रिवाल्वर से उसके अंत करने का निश्चय कर लिया। बोला—"आज मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा। समझी। आज मैं भी अपने प्रतिद्वन्द्वी के कमल-मुख का दर्शन करना चाहता हूँ।"

अंजना काँप उठी। झूठ-मूठ की उसकी दिल्लगी उसके लिये आज प्राणलेवा फाँसी बन गई। परंतु अब से तो वह निश्चय करके आई थी कि मैं शिवालय नहीं जाऊँगी। अम्मा भी कहेंगी कि हो आओ, तो भी न जाऊँगी। कुछ बहाना बना जाऊँगी। और, उनसे यह कहूँगी कि तुम यहाँ से चले जाओ। पर उस दिन मैंने उनसे कहा था कि घर में ही रहो, यहाँ से बाहर न निकलो। लेकिन आज मैं उनसे अपने सुहाग की भीख माँगने के लिये यह कहूँगी कि प्राणनाथ! मेरे देवता!! मैं अकेली तुम्हारे विरह के दिन तुम्हारी प्रतीक्षा करती हुई काट लूँगी। आज तुम यहाँ से जितनी दूर हो सके, चले जाओ। पृथ्वी के ऐसे कोने में जा छिपो कि चिड़िया भी तुम्हारा पता न पा सके। बस, मैं इतना सुनती रहूँ कि तुम जहाँ भी कहीं हो, अच्छी तरह हो। तुम चाहो, यदि तुम्हें देश-सेवा ही करनी है, तो जाकर गुप्त ढंग से इतनी बड़ी तैयारी करो कि देश का उद्धार हो सके। इधर-उधर छुट-पुट हमलों और निरीह हत्याओं से तो अँगरेज यहाँ से न चले जायँगे। मैं चाहती हूँ कि तुम अपनी गिरफ़्तारी से बचो, और अपने को भारत माता की मुक्ति के लिये सुरक्षित रक्खो।...परंतु अब क्या करूँ? क्या उत्तर दूँ? केशर वहाँ मेरी ताक में जरूर आएगा। यदि उसने मेरे बारे में कुछ झूठी-सच्ची बातें इनसे कह दीं, तो ये मेरे प्राण न छोड़ेंगे, और उधर इनके प्राण भी ख़तरे में पड़ जायँगे। वादाखिलाफ़ी करने पर केशर अपनी नीचता से बाज़ न आएगा। लेकिन इतने ही में एक बात उसके दिमाग में चढ़ी, और उसने अपना बचाव किया—"आपको यदि इस बात

मे सदेह है कि मेरा चाल-चलन ठीक नही, तो लीजिए, मैं आज से शिव-पार्वती की पूजा करने भी न जाऊँगी।"

"और, केशर ने तुम्हें अकेले बुलाया है जो?" देवकुमार की आँखें चढ गईं।

अजना चीख उठी, और उसने दाँतो-तले अपनी उँगली दबा ली। क्षण-भर उसके ललाट पर भय, उत्पीड़न, घबराहट के भाव टेढी-मेढी रेखाएँ बनकर छा गए। मुँह पर पसीना-सा आ गया।

"अजना!" देवकुमार की आवाज उग्र हो उठी।

"मेरे देवता!" अजना ने सिर झुका लिया।

"तुम्हे अपनी सफ़ाई में कुछ कहना है? कौन है यह केशर? इसमे तुम्हारा क्या सबध है?"

"मेरा उस नीच से कोई सबध नहीं है। नाहक ही वह आपके और मेरे बीच में दीवाल बनकर खडा होना चाहता है। विवाह हो जाने के बाद भारतीय नारी पर-पुरुष की ओर आँख उठाकर भी नही देखती। केशर हमारा पडोसी रहा है—इसी से हम लोगो की इतनी जान-पहचान है। यदि जान-पहचान कोई अपराध हो, तो मै अवश्य दोषी हूँ, नाथ!" अजना ने देवकुमार के पैर पकड लिए, और आँसू भरे नयनो से उनकी ओर देखती हुई बोली—"आप चाहे जो कुछ भी दड मेरे लिये निर्धारित करें, लेकिन इस समय आपसे जो प्रार्थना करने आई थी, वह यह कि उस दिन तो मैने आपसे यह वचन माँगे थे कि आप घर से बाहर न जायँ, लेकिन अब आपके लिये यहाँ ख़तरा पैदा हो गया है। आप यहाँ से कहीं ऐसी जगह चले जाइए, जहाँ आपको कोई जानता-पहचानता न हो। केशर सी० आई० डी० का आदमी है, उसको आपके बारे में सब कुछ मालूम हो गया है।"

"हूँ। और जो कुछ उसे न मालूम होगा, उसे तुम उसको बता आई होगी, और जब उसने दस हजार के प्रलोभन मे मुझे गिरफ्तार

हरा देने तथा तुम्हे अपने लिये सुरक्षित कर लेने की योजना सुनाई, तो लोक-लाज के लिये तुम मुझसे यह कहने को आई कि तुम कहीं भाग जाओ।...मैं आज ही तुम दोनो की लाश एक साथ गिराऊँगा। ये वे खूनी अस्त्र हैं।" देवकुमार अपनी कमर मे छिपे हुए रिवाल्वर और छुरा निकालकर दिखाते है—"जिनमे आज शाम को तुम लोगों की अंतिम कपालक्रिया होगी।"

अंजना थरथर काँपने लगी, और भय के मारे उसकी आँखें मिच गईं।

देवकुमार अट्टहास करके हँस पड़े। बोले—"क्या, क्या डर गईं? इतने से ही?"

"जी नहीं। आप मेरी हत्या करना चाहते हैं, इससे बढ़कर पत्नी का क्या सौभाग्य हो सकता है कि उसके पति देव ही उसकी मृत्यु के कारण हों। लेकिन केशर के पास मेरी लाश गिरने मे आपकी बदनामी होगी। आपको मारना है, मुझे यहाँ ही मार डालिए। मै अपने देवता के चरणो में लोटकर अपने को धन्य समझूँगी।"

"लेकिन तुम्हें शिवालय शाम को जाना ही होगा, और यह छुरा लेकर।"

"ऐसा क्यों? क्या आत्महत्या करनी होगी?"

"नहीं। तुम्हें अपने प्रियतम केशर की हत्या करनी होगी। समझीं।"

"नाथ! आप अपने मुँह से मुझ पर बिना देखे कलंक लगाते हैं, यह आपको शोभा नहीं देता। आप हत्या करने को कहते हैं, यह तो मेरे किए न होगा। यदि उलटकर उसने ही मुझ पर वार कर दिया, तो?"

"तुम बड़ी डरपोक हो, अंजना। मैं तुम्हें दुर्गा और रण-चंडिका बनाना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि भारत की प्रत्येक नारी काल्पनिक प्रेम और गृह-कलह को भूलकर इतनी सजग, सरल और स्व— बने

कि उसका अपमान हो, तो वह अपमान करनेवाले की छाती चीर दे, यदि उसकी ओर कोई तरेरकर देखे, तो वह उसकी आँख फोड़ दे। उसे अपने आदमी की ओर हर वक्त सहारा पाने के लिये नहीं देखना चाहिए। उसे अपने में इतना विश्वास होना चाहिए कि वह मरकर भी अपनी इज्ज़त न लुटने देगी। तुमने उस दासी-पुत्र के आगे झुककर अपना ही नहीं, भारतीय नारी का अपमान कराया है। उस अपमान का बदला अपमान करनेवाले के खून से तुम्हें लेना ही होगा। मैं भी तुम्हारी सहायता के लिये साथ चलूँगा, परन्तु तुमसे कुछ दूरी पर रहूँगा, और छिपकर।"

"प्रभु की आज्ञा मुझे स्वीकार है। आज जब मरना ही है, तो मैं अपने हाथ से उस नर-पिशाच की हत्या करके आपके मन का संदेह अवश्य दूर करती जाऊँगी।"

"हूँ।"

"लेकिन मेरी एक प्रार्थना आपसे है ."

"वह क्या ?"

"आप उसके बाद कहीं ऐसी जगह अवश्य चले जाइएगा, जहाँ आपका पता कोई न पा सके।"

"देखूँगा। लेकिन यह तो पीछे की बात है। शाम को शिवालय को अकेले ही जाना। मैं पीछे-पीछे आऊँगा। यह छुरा अपनी कमर में छिपाकर रक्खो।" देवकुमार ने अंजना को छुरा दिया।

अंजना ने उसे ले लिया। उसके हाथों में अब की प्रकंप न था।

× × ×

"तो हत्या करनी ही होगी। और, मैं इसलिये हत्या करूँगी कि भविष्य में कोई भी कामुक किसी परिणीता को पथ-भ्रष्ट करने का साहस न कर सके, उसके उज्ज्वल सतीत्व पर काला धब्बा न लगा सके। लेकिन मैंने भी तो उनके होते हुए पर-पुरुष के प्रेम को अपने

मन म स्थान दिया। मैंने उनकी ओट में घोर मानसिक अपराध किया है।...इसका भी दड मुझे भोगना पडेगा—मौत। पति के हाथों पत्नी की मौत!! यदि मैं इस मौत का स्वेच्छा से भी वरण करूँ, तो भी कानून उन्हे अपराधी ठहराएगा!!! मेरी शुभ कामनाएँ और चिरविदा के मेरे आँसू उनके इस मासल शरीर को चिरजीवी करें। तो फिर प्रभु की इच्छा पूरी हो!!"

साँझ हो गई, और पूजा की थाली लेकर अजना शिवालय की ओर चल दी। कुछ पीछे रहकर देवकुमार पीछे-पीछे चले।

केशर अजना के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। देवकुमार उसे दूर ही से देखकर एक लता से ढके वृक्ष के पीछे छिप गए। अजना को अकेला आता देखकर केशर की बाछें खिल उठीं। बोला—"आ गई अजो रानी!" वह अजना की ओर बढा।

"ठहरिए केशर बाबू। पहले मुझे शकर-पार्वती की पूजा कर लेने दीजिए। मैं आपके प्रश्न का उत्तर अपने साथ लाई हूँ।" अजना ने शिवालय की सीढियाँ चढ़ते हुए कहा।

"रानी! उत्तर साथ लाई हो, तो पहले उत्तर ही क्यों न दे दो! तुम्हारे उत्तर की प्रतीक्षा के एक-एक क्षण पहाड से बडे बन जायँगे! तुम्हारे इसी उत्तर की प्रतीक्षा में एक पूरा युग बीत चुका है, रानी! मैं जानता था कि तुम मुझसे प्रेम करती हो, और आज तुम अकेले ही आओगी। बोलो, ..'हाँ' कर दो न। फिर हम तुम दोनो साथ-साथ ही पूजा करेंगे।" केशर की आँखों में नशा छाता जा रहा था। वह भी सीढी पर चढा। "कह दो ..हाँ, कह दो कि तुम मेरी बनोगी।"

अजना ने देखा कि केशर न मानेगा। उसने थाली नीचे रख दी, और मुस्कराकर बोली—"केशर बाबू! मैं सब तरह से तुम्हारी हूँ!"

"सचमुच? क्या सचमुच?" केशर की आँखों में विस्मय और

मुस्कान दोनों एक साथ छा गए। "तो फिर आओ, ..युग-युग की प्यास बुझा लें। . आओ, रानी। आओ।"

केशर अधखुली आँखों से कुछ अपने आप और कुछ अजना के रूप-सौंदर्य मे भूला उसकी ओर हाथ फैलाकर बढ़ा। अजना खिलौ-डुली नहीं। उसने अपनी कमर पर हाथ रक्खा। केशर उसे ज्यों ही बाँहों मे बाँधे-बाँधे कि अजना का छुरा उसकी छाती मे घुस गया। केशर लड़खड़ाकर सीढ़ियों से नीचे गिर पड़ा।

अब लपककर देवकुमार घटना-स्थल पर आ पहुँचे। उनके मुख पर मुस्किराहट थी, परन्तु अजना के मुँह पर हवाइयाँ उड़ रही थीं—एक पड़ोसी की हत्या के भय से और अपनी मृत्यु की कल्पना से।

'शाबाश अजना।" देवकुमार ने अजना की वीरता की प्रशसा की।

एक फायर हुआ, देवकुमार की जाँघ मे लग गई गोली। अजना भयभीत होकर चीख पड़ी, परन्तु दूसरे ही क्षण देवकुमार ने एक फायर किया, और केशर हमेशा के लिये ठडा हो गया। देवकुमार ने केशर के हाथ से रिवाल्वर और जेबों मे जासूसी कैमरा, अनेकों फ़ोटो तथा गुप्त कागज-पत्र निकालकर अपनी जेब के हवाले किए।

अजना ने अपने अचल से कपड़ा फाड़कर अपने पति की जाँघ मे बाँधते हुए पूछा—'नाथ, इस दुष्ट ने मरते-मरते भी आपको घायल कर दिया। आपके गहरी चोट आ गई है। लेकिन आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप जितनी जल्द हो सके, घर मे चले जाइए।' अजना ने अपने कठ से मोतियों की माला, सोने का हार, इयरिंग, ब्रेसलेट वगैरा उतारकर देते हुए कहा— 'लीजिए, ये कभी आपके काम आएँगे।. मैंने जो अपराध आपसे छिपकर किए हैं उनके लिये मुझे अब दड दीजिए। जल्दी कीजिए, अब आपको यहाँ पल भर भी ठहरना ठीक नहीं। ..उठाइए रिवाल्वर, मैं सा

हूँ आपके सामने...।" सामने आँख मूँदकर अंजना खड़ी हो गई। एक क्षण, दो क्षण, कई क्षण बीते, कोई फायर नहीं हुआ।

"अंजना।"

अंजना ने आँखें खोल दीं। उसके गहने अभी तक वैसे ही ज़मीन पर पड़े थे, और उसके जीवन-देवता उसके निकट मुस्किरा रहे थे।

"रानी।"

"मेरे देवता। जल्दी कीजिए।"

"केशर के पास तुम्हारी लाश गिरने से तुम्हारे देवता की बदनामी होगी,...जल्दी थाली उठाओ, और घर चलो। तुम्हारे अपराध का दंड तुम्हें घर चलकर ही दिया जायगा।"

"प्रभु की जैसी आज्ञा। लेकिन ये गहने तो आप रख ही लीजिए। ."

"पगली, देश के दीवानों को सोने-चाँदी की जरूरत नहीं होती। इन्हें भी उठाओ, और चलो जल्दी।"

"अच्छा।" अंजना ने थाली ली, गहने उठाए, और अपने पति के साथ घर की ओर चल दी।

रास्ते में उसने शंका की—"लेकिन नाथ! आप मुझे सदा के लिये भुलाकर यहाँ से न भाग सके या घरवालों ने मेरी हत्या के लिये आपको दोषी ठहराकर न जाने दिया, तो?"

"तुम इस ओर से निश्चिंत रहो। मुझे आग की दीवारें भी बच निकलने से नहीं रोक सकतीं। तुम्हें यदि मुझे बचाना ही है, तो तुम मरने से पहले लिखकर एक चिट दे देना कि मैंने स्वेच्छा से आत्म-हत्या की, बस।" देवकुमार मुस्किरा पड़े।

"आपके लिये मैं यह भी करूँगी।" अंजना ने सिर नीचे को किए हुए कहा।

दोनो घर पहुँचे। बैठक मे आए। बैठक मे इस समय कोई न था।

"अजना, अब तुम यहाँ सुरक्षित आ गई हो, तुम्हे अब यही दड दिया जाता है कि जब तक मे न लौटूँ, मेरी प्रतीक्षा करना। अब मै जाता हूँ। समझी।"

"तो क्या आपने मुझे क्षमा कर दिया?" कृतज्ञ होकर अजना ने अपने पति के चरणों में घुटने टेक दिए।

"यह तुम जानो। उठो।" अजना को उठाते हुए देवकुमार ने कहा—"अब मुझे देर हो रही है, बिदा दो। यदि मै न भी लौट सकूँ, तो तुम अम्मा को और चाचीजी को सात्वना देती रहना।" देवकुमार अपनी सास को 'चाचीजी' कहा करते थे।

"ऐसे बोल न बोलो नाथ! तुम मेरी पूरी जिदगी लेकर जियो, युग-युग जियो। मै तुम्हारे आने की युग-युग तक प्रतीक्षा करूँगी। लेकिन हो सके, तो अपनी सेवा के लिये मुझे भी ले चलो। तुम्हारे साथ ही मै भी अब भारत माता के उद्धार के लिये अपना बलिदान करना चाहती हूँ।"

अजना की आँखो से आँसू बह रहे थे, परतु मुख पर बलिदानी की दृढता और तेज चमक रहे थे।

"आज मुझे तुम्हारे ये वचन सुनकर तुम पर गर्व है देवि! लेकिन अभी उचित समय नहीं आया है कि मै तुम्हे अपने साथ ले चलूँ, तब तक के लिये तुम ठहरो। मेरा कोई ठिकाना नहीं कि मै कहा रहूँ, और कहाँ नहीं। आज मैं चलता हूँ। हो सका, तो तुमसे फिर मिलूँगा। अच्छा!"

अजना के आँसू बह चले, और क्षण-भर वह देवकुमार के वक्ष से लिपटकर खूब रोई।

देवकुमार अपना आवश्यक सामान लेकर चल दिए, जब तक न

जाते दिखाई दिए, अजना बाहर आकर देखती रही। लेकिन चद्रकात इतने ही में खेलता हुआ आ पहुँचा, और पूछने लगा—"जीजी! तुम यहाँ क्यों खड़ी हो?," तो वह दिल थामकर उसे चुप करती हुई भीतर चली गई।

---

[१२]

ग्राम-सभा मे सर्वप्रथम रायसाहब, मोहनलाल और शेष शहीदो के प्रति श्रद्धाजलि प्रकट की गई, और यह निश्चय किया गया कि उनकी स्मृति मे स्मारक बनवाए जायँ। तदनतर बूढे लम्बरदार ने उठकर यह सुझाव रक्खा कि गुड़गॉव मे बूढो, बच्चो और स्त्रियो को हटाकर पास-पडोस की रिश्तदारियो मे भेज देना चाहिए, क्योकि इस बार हमें सबसे बडे और अतिम मोर्चे के लिये तैयार हो जाना है। परिस्थितियाँ ऐसी हैं, जो हमे उस ओर अपने आप लिए जा रही हैं। यदि मेरा अदाज गलत न निकला, तो निश्चय ही इस बार हम अँगरेजी फौज से मुकाबिला करना होगा। हमने हिंसा का उत्तर हिंसा मे देकर अँगरेजी राज्य को चुनौती दे दी है। आज हम अपनी आजादी की घोषणा करते हुए सगीनो और बममारो के बल से हम पर शासन करनेवालो को फिर से यह बतला देना चाहते हैं कि जब तक हमारे तन में एक भी साँस और नसो मे एक भी बूँद रक्त है, हम अब उनकी गुलामी मे रहने को तैयार नहीं।"

श्रोताओ के रक्त मे विद्युत् दौड गई।

बसत आज पहली बार सामने आई। बोली—"हम स्त्रियां अच्छी तरह जानती हैं कि ऐसे मौको पर हमारा क्या कर्तव्य है। हम या तो हमारी ओर बुरी दृष्टि से देखनेवालो की छाती चीर डालेंगी या फिर खुशी-खुशी मौत का वरण करेंगी। जहाँ हमारे पति पुत्र और भाई मातृभूमि के उद्धार के लिये अपना बलिदान कर रहे हैं, तो क्या हम उनके पीछे-पीछे क्षुद्र प्राणो की रक्षा के लिये इतने व्यग्र हो

जायँ कि गोरी फौज का नाम सुनकर ही भाग खडे हों। यह नहीं हो सकता। भारत मा को यदि हमारे रक्त की भी जरूरत है, तो हम स्त्रियाँ खुशी-खुशी उसके लिये तैयार हैं।"

छोटूलाल ने तेजसिंहजी के प्रस्ताव का समर्थन करते हुए कहा—"यह मौका ऐसा नहीं है कि हम लोग वाद-विवाद करें। भैयाजी का प्रस्ताव बहुत दूरदर्शिता पूर्ण है। यह सामरिक दृष्टि से बडे महत्त्व का है कि वृद्ध, बच्चे और हमारी वे मा बहनें, जो इस प्रकार अपनी आत्मरक्षा में समर्थ नहीं, गुडगांव से हटा दी जायँ। उनके कारण हमारी लड़ाई में कमजोरी आ सकती है, और जगह-जगह बाधाएँ उपस्थित हो सकती हैं।"

नवधारा ने उठकर कहा—"मेरी भी छोटी-सी बुद्धि में छोटू भैया की कही हुई बातें ठीक मालूम पडती हैं। जब मैं ऐसा कहती हूँ, तो इसके यह मानी नहीं कि मुझे अपने प्राणों का मोह है। मैं तो युद्ध के मोर्चे पर ही रहूँगी, परन्तु मैं उन बहनों को, जो इतना साहस अभी नहीं कर सकतीं, यही राय दूँगी कि वे इस प्रस्ताव का समर्थन करें।"

अंत में यह तय पाया गया कि वृद्ध, बच्चे और घूँघट की ओट में रहनेवाली औरतें गुडगाँव से जल्दी-से-जल्दी पास-पड़ोस के गांवों में, अपनी-अपनी रिश्तदारियों में, चली जायँ। लेकिन जिनके रिश्तेदारियाँ नहीं हैं, उनके रहने की गुडगाँव की राष्ट्रीय सरकार व्यवस्था करेगी।

गुडगाँव खाली हो गया। कुछ चुने हुए जवान और राष्ट्रीय सरकार के अधिकारी ही शेष रह गए। स्त्रियों में अमर, निर्मला, वसंत, नवधारा और नयनतारा ही गाँव में रहीं। इन लोगों को भी व्यक्तिगत रूप से म० तेजसिंहजी ने राय दी कि चली जाओ, लेकिन वे न मानीं। कुछ और स्त्रियों ने भी गुडगाँव में ही रहने की इच्छा प्रकट की, लेकिन उन्हें समझा-बुझाकर हटा दिया गया।

× × ×

गुड़गाँव ने शक्तिशाली अस्त से उदय तक फैले हुए अँगरेजी साम्राज्य से लोहा लेने के लिये अपनी मोर्चेबंदी प्रारंभ कर दी। गुड़गाँव को शहर से मिलानेवाली सड़कों पर पेड़ काटकर गिरा दिए गए, और उन पर बड़े-बड़े ढोंके लुढ़का दिए गए। कहीं-कहीं सड़कों को एक गहरी और चौड़ी नाली निकालकर काट भी दिया गया। रेल की पटरी के किनारे-किनारे लगे टेलीफोन और दूसरे बिजली के तार काट दिए गए, और जगह-जगह रेल की पटरियाँ भी उखाड़ दी गईं। सरकारी डाक-बँगला भी जला दिया गया।

शहर से आनेवाली सड़कों के दोनों ओर जंगली झाड़ियों की आड़ में कुछ रक्षक सैनिक नियुक्त कर दिए गए, जिनके ऊपर यह दायित्व रख दिया गया कि वे गोरी फौज के आने की सूचना दें, तथा उसके आने पर उसे अपनी पूरी शक्ति लगाकर रोकें। राजू और बदलू उनके नेतृत्व और शेष सब बातों की देख-रेख के लिये जिम्मेदार बना दिए गए।

आखिर गोरी सेना आ पहुँची।

परंतु उनके जीप ट्रकों का गाँव तक पहुँचना आसान न था। प्रथम ट्रक रुक गया, सामने कटे हुए पेड़ और बड़े-बड़े ढोंके पड़े थे। दूसरा भी उसके कुछ ही पीछे था, वह भी आ रुका। गोरे उतर पड़े। सड़क के दोनों ओर से गोलियाँ चलने लगीं। कई गोरे ढेर हो गए। गोरों ने भी अपनी राइफलें तानीं, और गालियों का उत्तर गोलियों से देना प्रारंभ कर दिया। थोड़ी देर की लड़ाई के बाद सारे रक्षक मारे गए, और अनेक गोरों की लाशें भी जमीन पर बिछ गईं।

गोरी सेना के आने और पहली रक्षक चौकी पर लड़ाई होने का समाचार अगली चौकी तक पहुँच गया, और अगली चौकी से धीरे-धीरे गुड़गाँव तक खबर पहुँच गई कि गोरी सेना आ गई है। अमर और निर्मला, छोटूलाल और तेजसिंह इन लोगों ने मिलकर भागे

का मोर्चा सँभाला। उन हिंदुस्तानी सिपाहियों को भी रक्षक सैनिकों में ले लिया गया था, जिन्होंने देश-सेवा की पुण्य शपथ लेकर मातृ-भूमि के उद्धार के लिये लड़ते रहने की दृढ़ता दिखलाई थी।

गोरी सेना ने संगठित होकर पैदल ही गुड़गाँव की ओर कूच कर दिया। उसने अपने बड़े-बड़े ट्रक पीछे छोड़ दिए। रक्षकों ने रास्ते में उसे बहुत परेशान किया, और दोपहर की साँझ केवल एक मील रास्ता तय करने में ही करवा दी। सब मिलकर शेष रक्षकों ने गोरों के गुड़गाँव थाने तक पहुँच जाने पर पीछे से आक्रमण करने का निश्चय किया।

गोरा कप्तान रास्ते की बाधाओं और लड़ाइयों से इतना आतंकित हो गया था कि उसने यह हुक्म दे दिया कि राह में जो भी हिंदोस्तानी मिले, उसे गोली मार दो। बड़ी दूर तक जब कोई दृष्टि-गोचर न हुआ, तो कप्तान ने अपना गुस्सा एक बकरी के, जिसके दो छोटे-छोटे मेमने दूध पी रहे थे, रिवाल्वर से गोली मारकर कुछ हलका किया।

गोरे गाँव में घुस आए। चारों ओर सुनसान और घरों में ताला बंद देखकर गोरा कप्तान दंग रह गया। अब उसकी समझ में आया कि हिंदोस्तानी भी अँगरेजों को ईंट का जवाब पत्थर से दे सकते हैं। मालूम होता है कि यहाँ हमें ये काले हिंदोस्तानी लोहे का चना चबवा देंगे। उसने पहले कभी इतनी पूर्ण मोर्चेबंदी और लड़ाई के प्रति सजग तैयारी हिंदुस्थान में इधर नहीं देखी थी। उसने बहुत से आंदोलन और विद्रोह दबाए थे, लेकिन आज तक कालों को सशस्त्र होकर पूर्ण युद्ध-कौशल के साथ मुठभेड़ करते उसने नहीं देखा-सुना था।

उसने एक सिरे से मकानों के ताले तोड़ने, लूट-मार करने और समूचे गाँव को जला डालने का आदेश दे दिया। बस, फिर क्या

था। आम लूट मार और लूट-फाड शुरू हो गया। गुड़गाँव बात-की-बात मे आग की धुआँधार लपटो मे सुलग उठा।

थाने मे खबर पहुँच चुकी थी।

इधर कुछ गुरिल्ले सैनिको ने गोरा के ऊपर पीछे से आक्रमण कर दिया। मक्खियो की तरह गोरे टॉमी मारे जाने लगे। वे गुड़गाँव के गली-कूचो से अनजान थे, और गुरिल्लो को वहाँ की जानकारी का लाभ मिल रहा था।

बूढे लम्बरदार ने सबको एकत्र करके इस नई परिस्थिति पर विचार करना शुरू कर दिया। राजू और बदलू भी इधर दूसरे रास्ते से परामर्श लेने के लिये थाने पहुँच चुके थे। राजू ने कहा—"भाइयो और बहनो। एक दिन हम सभी को मरना है, तो आज ही फिर हम मरने मे इतना भय क्या? आजादी के युद्ध-यज्ञ का अंत हमारी आहुतियो मे ही होना चाहिए।"

बदलू बोला—"इन बर्बर गोरो ने बड़ी निर्दयता के साथ हमारे बीसो भाइयो को मृत्यु के घाट उतार दिया है, हम उनके खून का बदला गोरो के खून से अवश्य लेंगे। गोरो ने गाँव में घुसकर उत्पात मचाना प्रारंभ कर दिया है, हमारे घर और हमारी झोपड़ियाँ फूकी जाने लगी हैं। हम अपनी आँखो इस गाँव को मरघट बनता नहीं देख सकते। हमारे कुछ वीर गुरिल्ले गलियो मे गोरो से मोर्चा ले रहे हैं। ..चलिए, हम-आप भी आज एक-एक भारतीय के खून का बदला या तो दस-दस गोरो से ले या इसी प्रयत्न मे फिर हम मर मिटें।"

"बदला तो लेना ही होगा।" निर्मला ने बदलू और राजू का समर्थन किया।

बसंत, छोटूलाल आदि ने भी यही राय दी।

सरदार तेजसिंह बोले—"यदि आप सभी लोगो का यही निर्णय

है, तो फिर ऐसा ही हो।" सबने हर्ष-ध्वनि की। "लेकिन मेरी फिर भी एक यह राय है कि यहाँ से सभी महिलाएँ राजू के साथ पड़ोस के गाँव में सुरक्षित चली जायँ।'

"आप यह क्या कह रहे हैं?" वसंत ने विरोध किया।

"भैयाजी हम लोगों को मरने का मौका क्या नहीं देना चाहते?" निर्मला बोली।

"हम देश के लिये कुर्बानी करने में कभी पीछे नहीं रहेंगी। भैयाजी की आशंका मानवोचित है, परंतु हम लोग उन्हें यह विश्वास दिलाना चाहती हैं कि भारतीय नारी अपने सम्मान को मृत्यु से भी खरीदने में नहीं हिचकिचाएगी। और सबसे बड़ी बात यह कि मैं गुड़गाँव की सेनानी हूँ। अपना यह पद मैं कभी नहीं छोड़ सकती।"

मुझे तुम्हारी-जैसी वीर बालाओं पर गर्व है बेटा! चलो, थाने का फाटक खोल दिया जाय।" बूढ़े लंबरदार ने आदेश दिया।

फाटक खुल गया। बिगुल बजा। "भारत माता की जय" और अंगरेजो भारत छोड़ो' के नारे आकाश में गूँज उठे।

सहसा नारों को सुनकर शेष गोरे चौंक उठे। कई मारे जा चुके, कई जान लेकर भाग चुके थे। उन्हें क्या मालूम था कि गुड़गाँव किस धातु का बना है।

राष्ट्रीय गुरिल्लों ने भागते हुए अनेक गोरों को धराशायी कर दिया। गोरी सेना की अंतिम टुकड़ी इतने ही में और आ पहुँची। धीरे-धीरे सशस्त्र गुरिल्ले मारे जाने लगे। साँझ होते-होते कई नेता लोग भी गोलियों के शिकार हो गए। राजू और बदलू मारे गए। नवधारा और नयनतारा के घातक चोटें लगीं। वसंत के वक्ष पर गोली लगी, और वह स्वर्गधाम को चल दी।

अमर, निर्मला, घायल तेजसिंह और छोटूलाल पकड़े गए। उसके

साथ ही कुछ और भी गुरिल्ले निश्शस्त्र हो जाने पर या कारतूस खत्म हो जाने पर पकड़े गए।

गोरा कप्तान इन बागियों को गिरफ़्तार हुआ देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने सबको थाने पर ले चलने का हुक्म दिया।

किसी को भी अपने आत्मीयों के लिए चिरविछोह या घायल हो जाने पर दो आँसू बहाने का मौका नहीं दिया गया। अमर अपनी मा खोकर, निर्मला अपने प्रिय-वियोग मे और तेजसिंह अपनी पत्नी के घायल होने तथा छोटूलाल अपनी पुत्री के आहत हो जाने से मर्माहत और क्षुब्ध थे, परंतु गोरों ने उन्हें अपने-अपने प्रियजनों से अलग कर दिया, और ले चले थाने की ओर। सब दाँत किटकिटा और हाथ मसलकर रह गए। वे मोर्चा हार चुके थे, विवश थे।

नयनतारा और नवधारा, दोनो ने आखिरी हिचकियाँ लेकर दम तोड़ दिया।

× × ×

हटर, इनायतुल्ला और हटर के टुकड़खोर काले आदमी रिहा हो गए। कुछ काले सशस्त्र कांस्टेबिल, जिन्होंने अवसरवादिता से लाभ उठाकर देशभक्ति का चोला पहन लिया था, पुनः वह चोला उतारकर अपनी असली शक्ल मे आ गए। रिक्त हुई कोठरियों म जनता के नेता और उनके हृदय-सम्राट् आज दुबारा बंद कर दिए गए।

थाने पर अधिकार-परिवर्तन के साथ पुन ब्रिटिश जैक लहराने लगा।

गुड़गाँव आज मरघट बन गया था—जलकर, मरकर और बलिदान देकर। परंतु उसकी छाती पर नमक दरने के लिये गोरी कंपनी ने रात को अपना विजयोत्सव मनाया। शराब का दौर चला, और उन्मत्त होकर आज को जीत की खुशी मे गोरों ने गंदे-से-गंदे अँगरेजी गीत गाए, और उछल-कूद की।

उत्सव से उठकर कप्तान और हंटर अलग चले गए, और एकांत में एक ने अमर को और एक ने निर्मला को बुलवाया।

अमर और निर्मला, दोनो के हृदय काँप उठे, परंतु उन्होंने निश्चय कर लिया कि यदि इन गोरो ने उनका अपमान किया, तो वे उनके प्राण पी लेगी। वे मरकर भी भारतीय नारी के सम्मान की रक्षा करेंगी।

दो टॉमियों ने पृथक्-पृथक् अमर और निर्मला को जबर्दस्ती पकड़ लिया, और वे 'साहबों' के पास पहुँचाई गई।

इनायतुल्ला को इन गोरे साहबों की घातों की कुछ भनक मिल गई। वह स्वयं इस घात मे था कि निर्मला पर अपना डोरा डाले। वह हंटर के कमरे की दीवाल से कान लगाकर खड़ा हो गया।

हंटर नशे में झूम रहा था। निर्मला ने अपने को उसके सामने पाकर पूछा—"आपने मुझे इतनी रात गए कैसे बुलाया है?"

"टुम हमारा डार्लिंग है, डार्लिंग!" हंटर मद्यपो की हँसी हँसता हुआ उसके पास आ खड़ा हुआ।

"दूर रहिए। इस तरह मुझे अपमानित करने का आपको कोई हक़ नहीं है।" निर्मला ने पीछे हटकर कड़कती आवाज मे उत्तर दिया।

"टुम गुस्सा होता है डार्लिंग! हम टुमको प्यार करता है, प्यार! हमारा पास आओ, भागो नहीं। हम टुमको प्यार करेगा।"

निर्मला मन-ही-मन जल उठी। बोली—"क्या आपके देश में इसी प्रकार स्त्री-जाति का सम्मान किया जाता है? धिक्कार है ऐसे देश को और उस देश के रहनेवालों को, जो इतने वर्बर और वासना के गुलाम होते हैं कि वे दूसरे देश की स्त्रियों को डराकर, धमकाकर और ज़बर्दस्ती अपनी वासनाओं का शिकार बनाना चाहते हैं।"

हंटर लाल होकर आगे बढ़ा। उसने रिवाल्वर निर्मला की छाती

के सामने तानकर कहा—"बोलो डार्लिंग! अब भी टुम मेरी बात मानता है कि नहीं? अगर टुमें अपनी जान प्यारी है, तो हमारा साथ करना होगा।"

निर्मला काँप उठी, मुख पर घबराहट, भय और आतंक छा गया। इनायतुल्ला ने सब कुछ सुना, और जब तक कि वह गोरे आततायी के हाथ से निर्मला को बचाने का प्रयत्न करे कि निर्मला ने कमर से छुरी निकालकर अपने उष्ण वक्ष मे रख ली।

हटर हक्का-बक्का होकर रह गया। इनायतुल्ला का खून खौल उठा था—एक तो उसका शिकार उसके हाथ मे चला गया था, और दूसरे, निर्मला के उत्तर मे प्रभावित होकर वह गोरे के हाथ मे हिंदोस्तानी औरत की बेइज्जती होते नहीं देखना चाहता था। उसने पीछे से हटर पर हमला करके उसे जमीन पर ला गिराया, और उसका रिवाल्वर उसी की छाती मे दाग दिया।

उसने तुरत घायल निर्मला को अपनी बाहों में उठाया, और पीछे की खिड़की से भाग निकला। निर्मला की वीरता ने आज उसके कलुषित और पाप-पूर्ण विचार नष्ट कर दिए, उसकी देश-द्रोहिता खत्म कर दी।

उधर अमर भी रक्त से रँगा हुआ छुरा हाथ मे लिए दूसरे कमरे की खिड़की मे पीछे कूदी।

इनायतुल्ला ने धीमे से उसे आवाज दी—"अमर बेटा! बेटी निर्मला ने आतम-हत्या कर ली है।"

अमर इनायतुल्ला की बोली पहचानकर रुकी, और किसी स्त्री को उसकी बाहों मे देखकर उधर बढ़ी। देखा, उसकी बाँहों मे निर्मला बेहोश है। उसकी साड़ी रक्त से भीगी हुई है। अमर ने कहा—"थानेदार साहब! आप हिंदोस्तानी हैं, मुझे आप पर फिर भी विश्वास है। चलिए, तुरत यहाँ मे भाग चलिए। हो सके, तो अपने

माइयों और अपनी बहू-बेटियों की लाज की रक्षा करके फिर से अपने पापों का प्रायश्चित्त कीजिए।"

दोनों भाग खड़े हुए। गोरे टॉमी उधर नाच-रंग में मस्त थे। उन्हें बाहरी दुनिया का कुछ भी ज्ञान न रह गया था कि इतनी देर में कहाँ क्या हो गया।

अमर ने इनायतुल्ला को गोरे कप्तान के उस पर झपटने और बाँहों में जकड़ लेने, फिर कुछ छूट पाकर उसके वक्ष में छुरा भोंक देने की कथा रास्ते में बतलाई। इनायतुल्ला इसे सुनकर बहुत प्रभावित हुआ, और उसने खुदा के नाम की पवित्र शपथ लेकर देश-सेवा करने की प्रतिज्ञा की। उसने निर्मला के प्रति अपनी दुर्भावना स्वीकार करते हुए उसके प्रायश्चित्त करने का भी वादा किया। रास्ते भर वह निर्मला की वीरता, स्वाभिमान, सतीत्व और देशभक्ति की तारीफ़ करता गया।

पड़ोस के एक गाँव में पहुँचकर उन्होंने दम लिया। छुरा निकालकर पहले ही इनायतुल्ला ने फेंक दिया था, परंतु ठीक दिल में घाव कर जाने तथा रास्ते-भर खून बहते रहने से वह इतनी अशक्त और चेतना-हीन हो चली थी कि उसे बाह्य विश्व का कुछ भी परिज्ञान न था। अमर ने अपने रेशमी शालू से उसके पट्टी बाँधी, और इनायतुल्ला को भेजकर उपचार के लिये गाँव के वैद्य को बुलवाया।

वैद्य ने कुछ ऐसी दवा दी कि सवेरा होते-होते उसे कुछ चेतना हुई। चेतना होते ही उसे अपने अंग-अंग में दर्द, शिथिलता, और कमजोरी का अनुभव होने लगा। उसने आँख खोलकर देखना चाहा, परंतु उसे रात की घटना का स्मरण हुआ, और उसने अपनी आँखें न खोलीं। परंतु फिर भयानक पीड़ा और टीस। उसे यह आश्चर्य हुआ कि मैं अभी जीवित हूँ। परंतु यही कठोर सत्य था, और उसने यह सोचा—'देखूँ भी कि आख़िर मैं कहाँ हूँ। उसने पलकें उठा

लीं। वैद्य दवा देकर चला गया था, और कह गया था कि घंटे-भर में निर्मला को कुछ होश हो जायगा। लेकिन घंटा बीता, दो घंटे बीते, अमर और इनायतुल्ला प्रतीक्षा करके निराश हो गए। अमर को रात-भर की थकावट थी, ब्रह्मवेला की शीतल वायु के झकोरों में वह ऊँघ कर सो गई। इनायतुल्ला की आँखें भी मन-ही-मन यह पश्चात्ताप करते हुए लग गईं कि 'क्या मैं निर्मला बेटी से अपने अपराधों की क्षमा न माँग पाऊँगा? यदि वह मुझे उसी दिन गोली से उड़वा देती, तो मैं अपनी आँखों आज गुड़गाँव को कब्रिस्तान बनते और अपनी बेटियों-बहुओं की इस प्रकार इज्जत जाते तो न देखता। मैं ही इस सारे कुचक्र और खुरपेंच का प्रेरक कारण बन गया था, उफ़! मैंने गुड़गाँव को उजाड़कर अपने बदले की आग बुझाने की कोशिश की थी, लेकिन अब तो वही आग मुझे बड़ी उग्रता से जला रही है।" यही सब बेहोश निर्मला के पास बैठा-बैठा सोचता हुआ ऊँघने लगा था। निर्मला ने देखा कि वह झोपड़ी में पड़ी है, पास में अमर पड़ी है, और इनायतुल्ला भी कुछ दूरी पर लुढ़का पड़ा है। उसे प्यास मालूम हुई और उसने कराहते हुए आवाज दी—"पानी!"

दो-तीन बार आवाज देने पर इनायतुल्ला कुछ सजग हुआ, और वह उठ बैठा।

उसने अमर को जगाकर निर्मला को पानी पिलाने को कहा। अमर ने निर्मला को पानी पिलाया, और पूछा—"कैसी तबियत है निर्मला?"

इनायतुल्ला और अमर दोनों को प्रसन्नता हुई कि निर्मला की बेहोशी दूर हो गई। निर्मला ने उत्तर दिया—अमर! देश की सेवा करने को अब मैं और जीती न रह सकूँगी। यदि तुम कभी देव भैया से मिल सको, तो उनसे कह देना कि उन्होंने तुमसे एक

दिन वह जो कहा था कि जब तक वे न लौटें, तब तक अपने प्रेम का दान मातृभूमि के उद्धार के लिये करो, मैंने भैया की वह बात पूरी कर दी है। मेरे वह अभी तक नहीं लौटे हैं, और मैं उन्हीं को खोजने यहाँ से जा रही हूँ। निर्मला की आँखें मुंद गईं, और उनसे अश्रु की धारा बह चली।

अमर और इनायतुल्ला फफक-फफककर रोने लगे। अमर ने कुछ क्षणों में सँभलकर निर्मला के मुख पर आँचल डाल दिया। अमर के आँसुओं में अपने बिछोह और अपने मा-बाप के चिर-बिछोह के आँसू मिल गए, और इनायतुल्ला के आँसुओं में पश्चात्ताप के भी, प्रायश्चित्त के भी।

ली। वैद्य दवा देकर चला गया था, और कह गया था कि घंटे-भर में निर्मला को कुछ होश हो जायगा। लेकिन घंटा बीता, दो घंटे बीते, अमर और इनायतुल्ला प्रतीक्षा करके निराश हो गए। अमर को रात-भर की थकावट थी, ब्रह्मवेला की शीतल वायु के झकोरे में वह ऊँघ कर सो गई। इनायतुल्ला की आँखें भी मन-ही-मन यह पश्चात्ताप करते हुए लग गई कि 'क्या मैं निर्मला बेटी से अपने अपराधों की क्षमा न माँग पाऊँगा? यदि वह मुझे उसी दिन गोली से उड़वा देती, तो मैं अपनी आँखों आज गुड़गाँव को कब्रिस्तान बनते और अपनी बेटियों-बहुओं की इस प्रकार इज्जत जाते तो न देखता। मैं ही इस सारे कुचक्र और खुरपेंच का प्रेरक कारण बन गया था, उफ़! मैंने गुड़गाँव को उजाड़कर अपने बदले की आग बुझाने की कोशिश की थी, लेकिन अब तो वही आग मुझे बड़ी उग्रता से जला रही है।" यही सब बेहोश निर्मला के पास बैठा-बैठा सोचता हुआ ऊँघने लगा था। निर्मला ने देखा कि वह झोपड़ी में पड़ी है, पास में अमर पड़ी है, और इनायतुल्ला भी कुछ दूरी पर लुढ़का पड़ा है। उसे प्यास मालूम हुई और उसने कराहते हुए आवाज दी—"पानी!"

दो-तीन बार आवाज देने पर इनायतुल्ला कुछ सजग हुआ, और वह उठ बैठा।

उसने अमर को जगाकर निर्मला को पानी पिलाने को कहा। अमर ने निर्मला को पानी पिलाया, और पूछा—"कैसी तबियत है निर्मला?"

इनायतुल्ला और अमर दोनों को प्रसन्नता हुई कि निर्मला की बेहोशी दूर हो गई। निर्मला ने उत्तर दिया—"अमर! देश की सेवा करने को अब मैं और जीती न रह सकूँगी। यदि तुम कभी देव भैया से मिल सको, तो उनसे कह देना कि उन्होंने तुमसे एक

दिन वह जो कहा था कि जब तक वे न लौटें, तब तक अपने प्रेम का दान मातृभूमि के उद्धार के लिये करो, मैंने भैया की वह बात पूरी कर दी है। मेरे वह अभी तक नहीं लौटे हैं, और मैं उन्हीं को खोजने यहाँ से जा रही हूँ। निर्मला की आँखें मुंद गईं, और उनसे अश्रु की धारा बह चली।

अमर और इनायतुल्ला फफक-फफककर रोने लगे। अमर ने कुछ क्षण में सँभलकर निर्मला के मुख पर आँचल डाल दिया। अमर के आँसुओं में अपने बिछोह और अपने मा-बाप के चिर-बिछोह के आँसू मिल गए, और इनायतुल्ला के आँसुओं में पश्चात्ताप के भी, प्रायश्चित्त के भी।

---

[१२]

डॉ० हेमलता की आकस्मिक हत्या से सारे शहर में सनसनी छा गई थी, और लोगों में तरह-तरह के अनुमान लगाए जाने लगे थे। यार लोगों में अनुमान यह था कि उनके कुछ आशिकों ने मौक़ा देखकर उन्हें उनके बँगले से उड़ा ले जाने के लिये उनके कमरे में रात को प्रवेश किया। उन्होंने बहाना बनाया कि एक शख़्स बहुत सख़्त बीमार है, चल कर देख लीजिए। डॉ० हेमलता बँगले से उनके साथ आधी रात को जाने को तैयार न हुईं। शिष्टता-वश वह उनके साथ उन्हें विदा करने के लिये बँगले के बाहर तक आईं। बदमाशों ने उनके साथ जबर्दस्ती करनी चाही। डॉ० हेमलता के चिल्लाने पर किसी एक ने उनको पिस्तौल मार दी, और उनकी लाश बग़ल के बँगले को जानेवाली सड़क पर डालकर सब भाग खड़े हुए।

कुछ लोग जो डॉ० हेमलता की देश-भक्ति और क्रांति-नीति से सहानुभूति रखते थे, उनके बीच में यह अफ़वाह बड़े ज़ोरों की थी कि डॉ० हेमलता के गुप्त कार्यों का रहस्य सरकार को मालूम हो गया था। कहते हैं, उन्होंने अपने पतिदेव शिशिर बाबू को जेल से भाग निकलने में बहुत मदद पहुँचाई थी। सरकार के हाथ पड़ने से डॉ० साहिबा ने प्राण दे देना ही ज़्यादा अच्छा समझा। मरते समय उनको यह तो संतोष हो ही गया कि मैं न रहूँगी, तो क्या हुआ, शिशिर बाबू की ज़िंदगी देश के लिये बेशक़ीमत है, और वह देश-सेवा कर सकने के लिये मुक्त हो गए।

निकट के रहनेवाले डॉ० साहिबा के चरित्र से अच्छी तरह परिचित थे, और उनका शक रूपकिशोर पर गया। रूपकिशोर के बँगले के

सामने ही लाश का पाया जाना उनके अनुमान की पुष्टि करता था। उनका यह कहना था कि रूपकिशोर बाबू और डॉ० हेमलता में शिशिर बाबू के जेल चले जाने के बाद बड़ी नोक-झोंक रहती थी। सभव है, किसी बात पर दोनो मे अनबन हो गई हो, और दोनो एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए हो, और मौका पाकर रूपकिशोर ने हेमलता के प्राण ले लिए हो। शायद तभी वह उस रात अपने बॅगले में नही पाए गए।

जितने मुँह, उतनी बातें इस रहस्यमय हत्या के बारे म सुनने मे आई। पुलिस डॉ० हेमलता के शव को पोस्ट मार्टम के लिये उठा ले गई, और इस सबध म उसने कई एक गिरफ्तारियाँ भी की। बॅगले के नौकर चाकर कपाउडर और सदेह में रूपकिशोर भी पकडे गए। रूपकिशोर के सबधियों-साथियो ने उनकी जमानत करनी चाही, परंतु वह मंजूर न हुई। पुलिस की समझ में यह सगीन मामला था, और इसमे बहुत से राजनीतिक आदोलन के रहस्य भी उसे मालूम हो सकने की आशा थी। गहरी रकम काटने को मिलेगी, इसकी आशा उसे अलग से थी।

पोस्ट मार्टम की रिपोर्ट आई। उससे एक बात पर और प्रकाश पड़ा कि डॉ० हेमलता को निद्रा-भ्रमण का रोग भी था। ऐसा मालूम पड़ता है कि डॉ० हेमलता नींद मे ही चलकर बगल के बॅगले की ओर जा रही थीं। उसी समय किसी ने अकस्मात् उन्हें रिवाल्वर का लक्ष्य बनाया, जिसमे उनकी नींद टूट गई। गोली कमर में लगी थी, और यदि नींद सहसा उचट जाने से उनका 'हार्ट फेल' न हो जाता, तो सभवत. उनकी गोली निकालकर प्राण रक्षा भी की जा सकती थी।

इस रिपोर्ट और नौकरों के बयान से पुलिस इस नतीजे पर पहुँची कि रूपकिशोर और डॉ० हेमलता, दोनो एक दूसरे मे प्यार करते थे।

शिशिर बाबू के रहते समय वे छिप-छिपकर एक दूसरे से मिला करते और मन की मुराद पूरी किया करते थे। शिशिर बाबू के जेल चले जाने और रूपकिशोर की धर्मपत्नी के घर पर न रहने से दोनों को एक-दूसरे के यहाँ आने-जाने और रहने की छूट मिल गई। रूपकिशोर के रिश्तेदारों के बयान से यह पता चलता है कि जिस ख़ूनी रात को यह घटना हुई, उस रात को रूपकिशोर का बच्चा बीमार हो गया था। और वह उस दिन साँझ को ही अपनी ससुराल चले आए थे। इस तरह वह बिलकुल निर्दोष मालूम होते हैं, परन्तु फिर डॉ० हेमलता की हत्या किसने की, और क्यों की?

पुलिस को यह भी सूचना मिल गई थी कि शिशिर बाबू एक और राजबंदी के साथ फ़रार हो चुके हैं। फ़रार होने की तिथि भी वही है कि जिस तिथि को डॉ० हेमलता का ख़ून हुआ है। तो क्या शिशिर बाबू ने ही अपनी पत्नी को नींद में उठकर दूसरे के यहाँ जाते देखकर उसका ख़ून कर डाला है? लेकिन क्या वह अपनी पत्नी के इस रोग के बारे में नहीं जानते थे? क्या उन्हे अपनी पत्नी के चरित्र पर संदेह था? नौकरों के बयान से उनके इस संदेह की पुष्टि नहीं होती। फिर भी यह तो स्पष्ट ही है कि बहुत दिनों तक कुमारी रही जानेवाली डॉ० हेमलता का चरित्र शुद्ध नहीं हो सकता था। मनुष्य का शक्की स्वभाव होता है। संभव है, शिशिर बाबू ने ही उत्तेजना में यह ख़ून कर डाला हो।

लेकिन सरदार सज्जनसिंह, जो उस हल्के के इंचार्ज और पुलिस इंस्पेक्टर थे, अपने हाथ से इस मामले को यों ही निकल जाने देना नहीं चाहते थे। रूपकिशोर-जैसी मोटी मुर्गी बड़े सौभाग्य से ही उनके हाथों लगी थी। दूसरे इस अवसर से सहज में मिलनेवाली नामवरी भी उन्हें चंचल बना रही थी। यद्यपि वह समझते थे कि रूपकिशोर निर्दोष हैं। लेकिन उनके लिये इस बात के प्रमाण भी

ढूँढ़ निकालने सहज न थे कि शिशिर बाबू ने ही डॉ० हेमलता का खून किया। अनुमान से ही मुकदमे को जीत सकना सम्भव न था। सरदार सज्जनसिंह ने निश्चय किया कि जब तक शिशिर बाबू का कुछ पता न चले, रूपकिशोर को छोड़ देना ठीक नहीं। एक तीर से दो शिकार खेलने ही होंगे।

सज्जनसिंह ने डरा-धमकाकर और पुलिस का साथ देने पर छोड़ देने का प्रलोभन देकर डॉ० हेमलता के नौकरों और कपाउडरों को रूपकिशोर के विरुद्ध पुलिस की ओर से गवाही देने के लिये तैयार कर लिया।

उधर फ़ौजी स्पेशल षड्यंत्र के सिलसिले में हुई गिरफ्तारियों से शिशिर बाबू का एक शिष्य बोधासिंह पुलिस के हाथ लग चुका था। पुलिस की धमकियों और मार-पीट से घबराकर उसने भी पुलिस का मुखबिर बनना स्वीकार कर लिया था। उसने पुलिस के सामने यह भी स्वीकार कर लिया कि इस षड्यन्त्र के अधिनायक शिशिर बाबू थे, और उन्हीं के आदेश से मैंने, देशभक्तजी और कृपालुसिंह ने डाइनामाइट से स्पेशल ट्रेन उड़ाई थी। उसने यह भी बतला दिया कि इन क्रांतिकारियों का प्रधान केंद्र कहाँ है? उसने यह भी बताया कि शिशिर बाबू पंजाब के गवर्नर की हत्या करने का कुचक्र रचने जा रहे हैं और उसने उसकी निश्चित तिथि भी बतला दी। परंतु सज्जनसिंह को यह पूछने पर कि क्या तुम्हें मालूम है कि शिशिर बाबू ने ही डॉ० हेमलता की भी हत्या की है, बोधासिंह केवल आश्चर्य प्रकट करके रह गया। उसे शिशिर बाबू की लगभग बहुत-सी योजनाएँ मालूम थीं, परंतु उसकी समझ में यह न आया कि उन्होंने अपनी पत्नी की हत्या क्यों की?

बहुत कुछ जिरह करने पर भी जब सज्जनसिंह बोधासिंह से अपने अनुमान की पुष्टि नहीं करा सके, तो झुँझला उठे, और बोले—"बोधासिंह! याद रक्खो कि समय पड़ने पर तुम्हें अदालत में यह भी

कहना होगा कि शिशिर बाबू ने ही डॉ० हेमलता का खून किया है। मैं उस समय घटना-स्थल पर मौजूद था। समझे ?"

बोधासिंह को क्या मालूम था कि मुखबिर बनने के मानी हैं अपनी आत्मा को सदा के लिये बेच देना और जायज नाजायज हर तरीके से पुलिस का दबाव मानना घुड़कियाँ सुनना और सत्य एवं न्याय के मंदिर में पहुँचकर पुलिस की प्रसन्नता और आत्म तुष्टि के लिये झूठी गवाही देना, दुनिया की आँखों में धूल झोंकना, ये सब बातें में करना होगा। यदि सज्जनसिंह बोधासिंह के उत्तर की उपेक्षा किए बिना ही आवेश में बाहर न चले जाते, तो बोधासिंह स्पष्टत उनसे कह देता कि मैं झूठी गवाही नहीं दूँगा। परंतु फिर दूसरे ही क्षण उसे ध्यान आया कि मैं पुलिस का मुखबिर हूँ। रंग-भरी दुनिया का उन्माद-भरा जीवन यों ही कैसे खोया जा सकेगा। फाँसी की कल्पना से ही वह काँप उठा।

× × ×

शिशिर बाबू को अपने गुप्तचर-शिष्यों द्वारा पुलिस की प्रत्येक गति-विधि की रिपोर्ट मिलती रहती थी। अपनी पत्नी की हत्या करने के बाद से वह कुछ अनमने-से और कुछ बुझे-दिल-से रहते थे, परंतु पुलिस की खोज से उनका संदेह पुष्ट हो चला था। उन्हें इस बात से जहाँ संतोष था कि मैंने एक चरित्र-हीन, धूर्त और विश्वासघातिनी पत्नी का स्वयं वध करके एक आदर्श प्रस्तुत किया है, और भारतीय नारी को कलंकित होने से बचाया है, वहाँ रह-रहकर उन्हें इस बात पर बड़ा क्रोध आ रहा था कि रूपकिशोर ने एक विवाहिता स्त्री को पथ से भ्रष्ट क्यों किया ? अगर हेम को पदच्युत होने का दंड मिला है—मौत, तो यही दंड रूपकिशोर को भी मिलना चाहिए। अच्छा है कि पुलिस ने यह मामला अपने हाथ में ले लिया है। लेकिन पुलिस को मुझ पर भी शक है। हूँ !!

नालायक चोबा। उसने तो और भी सारा गुड़ गोबर कर दिया है। वह खुले आम पुलिस का मुखबिर बन गया है। उसने हमारे सारे रहस्य, सारी गुप्त योजनाएँ पुलिस को बतला दी हैं। उसी के कारण हमें अपना प्रधान पार्वत्य केंद्र बदल देना पड़ा है। पुलिस बुरी तरह हमारी खोज में हमारे पीछे पड़ी है। जान पड़ता है कि गवर्नर की हत्या की योजना फिर स्थगित करनी पड़ेगी। अस्तु, पहले चोबा की खबर तो ले ली जाय।

इतने में शिशिर बाबू को स्मरण आया कि आज रात को ही देशभक्त से मिलने का वादा है। उसे मैं किसी के हाथ यहीं बुलवाए लेता हूँ। इधर चोबा के किस्से का खत्म करने के लिये भी किसी को नियुक्त किए देता हूँ।

× × ×

अमृतसर में भी सी० आई० डी० इंस्पेक्टर की हत्या से शहर-भर में बड़ी सनसनी फैल गई था। केशर की हत्या से उसके वृद्ध मा-बाप भी बड़े दुखी थे। केशर उनकी एक मात्र संतान थी, और उसके अब न रहने से उनके परिवार का, कुल का चिराग गुल हो गया था। मातमपुरसी के लिये अंजना और उसके घरवाले सभी जाते और बड़ी देर तक केशर के मा-बाप को सांत्वना देते। अंजना ही उसकी हत्या का कारण थी, परंतु फिर भी उसने केशर की मा के सामने केशर के मरने पर भी बड़ी सहानुभूति दिखलाई, और दिखावे के लिये दो-चार आँसू भी आँखों में भर लाई। पास-पड़ोस की औरतें केशर के मा-बाप के साथ सहानुभूति दिखलाने के लिये उसके हत्यारे को जी भरके कोसतीं। परंतु अंजना सब कुछ सुनकर भी स्तब्ध और स्थिर-चेतन रहती। वह दूसरों का विरोध करके स्वयं उनके लिये कोई झगड़ा मोल लेना नहीं चाहती थी। अगर बातों ही-बातों में कोई यह पूछतीं भी कि वह चले गए क्या, तो वह बनाकर यही उत्तर देती—

"जी हाँ। वह तो कई दिन पहले ही चले गए थे। अम्मा ने जबर्दस्ती रोक लिया था, तब दो-चार दिन ठहर गए थे।"

शहर की पुलिस और सी० आई० डी० ने केशरसिंह के हत्यारे की खोज में दिन रात एक कर दिया। शिवालय के चारों ओर भी सख्त पहरा बैठा दिया गया। संदेह में कई एक गिरफ्तारियाँ भी हुईं। पुलिस का अनुमान था कि ये सारे कुचक्र किसी एक व्यक्ति की कार्रवाई नहीं, बल्कि इनके पीछे किसी संगठित गुप्त दल का हाथ है, जिसे कांग्रेस की अहिंसा और सत्याग्रह की नीति में विश्वास नहीं। परंतु कांग्रेस को इन हत्याकांडों में बरी नहीं किया जा सकता। इस तोड़-फोड़ के सारे आंदोलन की योजना कांग्रेस के पास पहले से ही थी, और इस बार उसी के इशारे पर कांग्रेसियों ने हिंसा की नीति अपनाई है। बहुत संभव है कि कांग्रेस ने ही इस तरह के गुप्त दलों की जगह-जगह स्थापना कर रक्खी है। लेकिन इस बार कांग्रेस को ही हमेशा के लिये मिटा दिया जायगा। न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी। पुलिस के इस अनुमान की पुष्टि बोधासिंह द्वारा किए गए रहस्योद्घाटन में हो चुकी थी। लाहौर में उक्त रहस्य को पूरे पंजाब में प्रचारित कर दिया गया था।

देशभक्त यह जानते थे कि देवालय के पास जाकर शिशिर बाबू की प्रतीक्षा करना खतरे से खाली नहीं। लेकिन प्रश्न यह था कि यदि शिशिर बाबू को यहाँ की स्थिति का पता न हुआ, और वह पुलिस या सी० आई० डी० के जाल में फँस गए, तो हमारी क्रांति ही ठप्प हो जायगी। बहुत कुछ सोच-विचार के बाद देवकुमार ने यही निश्चय किया कि देश के उद्धार के लिये और क्रांति की अमर ज्वाला को सुलगाए रखने के लिये मुझे अपनी आहुति देनी ही होगी। कोई नया संदेश भी अभी तक नहीं मिला है। प्रधान केंद्र को वह पहले ही छोड़ चुके हैं। अन्यत्र उनसे मिल सकना भी संभव नहीं।

देवकुमार ने साँझ हो जाने के बाद साधु का वेश बनाया। गेरुए कपड़ों का उन्होंने पहले ही से प्रबन्ध कर रक्खा था। उन्होंने कंधे पर झोला डाला, और दण्ड-कमण्डलु लेकर कुछ रात गए शिवालय की ओर चल पड़े।

शिवालय के चबूतरे पर दो कांस्टेबिल संगीनें लिए बैठे थे। देवकुमार के सामने आ जाने पर दोनों ने उनका स्वागत किया। एक ने पूछा—"कहिए, स्वामीजी! किधर से आना हुआ?"

"बद्रीनाथजी की यात्रा करके आ रहा हूँ।"

"अमृतसर आप पहले कभी आए हैं?"

"नहीं भगवन्! बाबा लोग सुनसान स्थानों में ही विचरण किया करते हैं। हम आगे जा रहे थे, लेकिन रास्ते में ही अँधेरा हो जाने से यह शिव-मंदिर देखकर विचार हुआ कि रात-भर यहाँ ही डेरा डाला जाय।"

"लेकिन यहाँ किसी के भी आने जाने और ठहरने की मनाही है। कल रात को यहाँ एक खून हो गया।"

"शिव! शिव!! भगवान् शंकर सबका भला करें।" सन्यासी चलने को हुआ कि दूसरी ओर से एक सरकारी गुप्तचर आ पहुँचा। सन्यासी उसे देखकर कुछ चौंका।

गुप्तचर ने सन्यासी के मुँह पर आँखें गड़ाते हुए मुस्किराकर कहा—"नमो नारायण स्वामीजी! बहुत दिनों के बाद आपके दर्शन हो सके हैं।"

देवकुमार को ऐसा लगा कि इस कमबख्त को कहीं देखा ज़रूर है, लेकिन इस समय कुछ याद नहीं पड़ रहा है। अपना रहस्य छिपाते हुए बोले—"नमो नारायण बच्चा! हम लोग एकांत देश में विचरण किया करते हैं। इधर भूले-भटके ही बाबा लोग आ जाते हैं।"

"स्वामीजी! अब आपको और कहीं नहीं भटकना होगा। आपको

लाहौर के आलीशान किले का एकांत सुईवरा पुकार रहा है।"

देवकुमार को संदेह हुआ कि यह कोई सी० आई० डी० का आदमी है। उन्हें स्मरण आया कि यह वही पंजाबी इंस्पेक्टर है, जिसने उसे चलती ट्रेन में पकड़ा था। वह घबराया, परंतु पल-भर में ही सजग होकर ज्यों ही झोंक से उन्होंने अपना रिवाल्वर निकालकर इंस्पेक्टर को स्वर्गवास पहुँचाना चाहा कि पीछे से दोनो कान्स्टेबिलों ने उन्हें धर पकड़ा। इंस्पेक्टर ने उनके हाथ को मौका पाकर कस के पकड़ लिया, और इस प्रकार देवकुमार का फ़ायर खाली गया।

देवकुमार ने चाहा कि विदेशियों के इशारे से फाँसी पर चढ़ने से अच्छा कि अब मैं स्वयं आत्महत्या कर लूँ, परंतु दूसरे ही क्षण उनका रिवाल्वर भी छिन गया।

उसी रात को शिशिर बाबू का दूत भी संदेहास्पद अवस्था में देवकुमार की खोज करता हुआ पकड़ा गया।

दोनो लाहौर क़िले के लिये प्रात होते-होते स्पेशल सशस्त्र पुलिस के पहरे में भेज दिए गए।

दूसरे दिन जब शिशिर बाबू के दूत ने लौटकर उन्हें कोई जवाब न दिया, और उनका दूसरा दूत भी बोधासिंह को घायल करने के बाद जब पकड़ लिया गया, तो उन्हें यह अनुभव हुआ कि जैसे भारत के दिन उलटे आ गए हैं, और एक बार फिर हम अपनी आज़ादी की लड़ाई में हार गए। विश्वस्त रूप से जब उन्हें यह मालूम हो गया कि देवकुमार भी पकड़ा गया, तो उनके हाथ पैर ढीले हो गए।

निर्दोष पत्नी के खून, मृत सैनिकों की प्रेतात्माओं और कुचक्रों की असफलता से उत्पन्न पराजयवाद के भूत ने उन्हें अस्थिर कर दिया। उन्होंने अपने शेष साथियों से विदा ली, और भारत के अच्छे दिनों के लौटने की प्रतीक्षा करने के लिये वह भारत की सीमा से

बाहर—क्षितिज के उस पार—कहीं अन्यत्र, जहाँ उन्हें कोई नहीं जानता था, रवाना हो गए। साथियों ने उनसे बहुत आग्रह किया कि वह प्यारी जन्मभूमि को छोड़ अन्यत्र कहीं न जायँ, परन्तु शिशिर बाबू न माने। साथियों ने आश्वासन दिया कि मातृभूमि का अंचल इतना विशाल है कि आपको इस संकट-काल में आश्रय मिल सकता है, परंतु उन्होंने एक न सुनी। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि मैं भी सुभाष बोस के पग-चिह्नों का अनुसरण करूँगा और यदि हो सका, तो देश के उद्धार के लिये देश की सीमा से बाहर रहकर ही फिर से एक बार प्रचंड प्रयत्न करूँगा। उन्होंने अपना निश्चय साथियों को सुनाया, और साथी उनके तर्कों को न काट सके।

उन्होंने सजल नयन होकर अपने प्रिय नेता को बिदा दी इस आशा में कि एक दिन संभव है, इसी तरह मातृभूमि का उद्धार हो सके।

---

[१४]

अमर और इनायतुल्ला गृह-विहीन और आश्रय हीन-होकर गाँव-गाँव मारे-मारे फिरने लगे। इनायतुल्ला अमर को अपनी बेटी के समान मानता था, और यदि अमर कभी उदास हो जाती, तो उसे समझाता-बुझाता। उसने बहुतेरा उससे कहा कि वह अपनी ससुराल सर साहब और अपनी सास के पास चली जाय। उसने कहा कि चलो अमर बेटा। मैं तुम्हें लाहौर पहुँचा आऊँ। लेकिन वह न मानी। वह किसके लिये वहाँ जायगी ?

इधर गुडगाँव की हालत खराब सुनकर सर साहब घबराए। उन्होंने बहू के पिता को खत लिखा कि अपनी खैरियत लिखें, और वहाँ की स्थिति ठीक न हो, तो बहू को लाहौर भेज जायँ। परंतु उस खत का उन्हें कौन जवाब देता ? रायसाहब शहीद हो चुके थे। कोई उत्तर न मिलने पर अमर की सास ने एक आदमी अमर को ` के लिये भेजा। उस आदमी ने सर साहब को लौटकर यह खबर दी कि गुडगाँव मरघट बन चुका है। बहू रानी फ़ौज द्वारा गिरफ्तार कर ली गई है। सर साहब के यह समाचार सुनकर होश फाख्ता हो गए। शमशेर को वह एक प्रकार से हमेशा के लिये खो ही चुके थे, उसकी धरोहर और घर की कुललक्ष्मी भी नर-पिशाचों के हाथ पड़ गई। उनका अंतस्तल भी जीवन में पहली बार अँगरेजी राज्य के काले कारनामों पर घृणा से भर उठा। उन्होंने बड़ी दौड़-धूप की, और इस बात की जाँच के लिये काफ़ी लिखा-पढ़ी की, तब जाकर उन्हें यह पता चला कि 'अमर नाम की एक कांग्रेसी औरत

गिरफ्तार जरूर हुई थी, लेकिन वह गोरे कप्तान की हत्या करके कहीं फरार हो गई है। सरकार बुरी तरह से उसकी खोज में है। खुफ़िया-विभाग को जब इस बात का पता चला कि सर साहब ऐसी खूँख्वार औरत के ससुर हैं, तो उनकी और उनके बँगले की निगरानी होने लगी। चौबेजी गए थे छब्बे बनने, लेकिन रह गए बेचारे दुबे ही। सर साहब ने बड़ी मुश्किल से इस निगरानी से अपना पीछा छुड़ाया। उन्होंने गुप्त रूप से बहू रानी का पता लगाने के लिये कई आदमी तैनात कर दिए।

अमर को यह सब कुछ भी नहीं मालूम था कि उसके कारण उसके ससुरालवाले इतनी परेशानी में पड़ेंगे। नहीं तो वह स्वयं ही शायद फरार रहना न पसंद करती। संगी-साथी, माँ-बाप, घर-गृहस्थी, सब कुछ खोकर उसका चित्त अशांत हो चला था। तिस पर नित्य-भूखे चमड़े के थैला के भरने का प्रश्न और जगह-जगह की ठोकर; इन सबसे उसे एक प्रकार की विरक्ति, शून्यता और उदासीनता का-सा अनुभव होने लगा। उसने ज़ोर दिया कि "इनायत बाबा! तुम अपने गाँव चले जाओ। तुम मेरे साथ क्यों गली-राह की धूल फाँकते फिरते हो।"

लेकिन इनायतुल्ला उत्तर देता—"अमर बेटा! तुम्हें मैं अकेले नहीं छोड़ सकता। तुमने जब मातृभूमि के उद्धार के लिये अपना सब कुछ लुटा दिया है, तो यही अपराध मैं भी करने की हिम्मत कर रहा हूँ। तुम यदि यही चाहती हो कि मैं गाँव चला जाऊँ, तो तुम्हें भी फिर साथ चलना होगा। जब कुँअर साहब लड़ाई से लौटेंगे, तब मैं उन्हें क्या जवाब दूँगा? बोलो बेटा!"

इनायत की आँखें छलछला आईं। अमर का हृदय भी उनकी स्मृति में भरकर कचोट उठा। उनके लौटने की उसे अब कोई बहुत आशा नहीं रह गई है। युद्ध बंद ही नहीं हो रहा और उसका दुर्धर्ष

अचल पांचाली के चीर की भाँति बढ़ता ही चला जा रहा है। फिर भी वह जब तक न लौटेंगे, उनकी स्मृति के दीप सँजोकर प्रतीक्षा तो करनी ही होगी। बोली—"इनायत बाबा। आज मैं तुम्हारे हठ के आगे हार गई। चलो। तुम जैसा कहोगे, वैसा ही करूँगी।"

इनायत के मुख पर प्रसन्नता की लहर दौड़ गई, और उसकी धँसी हुई आँखें, काले ओठ और लंबी दाढ़ीवाले गाल मुस्करा उठे। "वाह री मेरी अच्छी बेटी। चलो। मैं तुम्हारा संदेशा लेकर सर साहब के पास पहुँचाऊँगा, और ..."

"तो फिर मैं तुम्हारे गाँव न चलूँगी।" अमर नाराज हो गई।

"नाराज हो गई बेटा। मुझसे कोई गलती हो गई क्या?"

"गलती नहीं हुई। तुम भी खूब कहते हो बाबा कि गलती हो गई। सर साहब को मेरे बारे में कुछ भी मालूम हो जायगा, तो मेरी वजह से उन्हें बहुत परेशानी उठानी पड़ेगी। हाँ, निर्मला का संदेशा देव भैया तक जरूर पहुँचाना है।" अमर ने निर्मला की याद कर एक लंबी उसाँस ली।

दोनो साँझ के झुटपुटे में आगे बढ़े चले जा रहे थे। एक सँकरी पगडंडी थी—अमर आगे हो गई थी, और इनायत पीछे। इनायत की आँखें भी निर्मला के नाम से सजल हो उठीं। गद्‌गद और भर्राए कंठ से बोला—"चलो, गाँव चलकर संदेशा लिख देना बेटा। मैं खुद संदेशा लेकर देव बाबू के पास जाऊँगा। उनका भी हाल-चाल इधर कुछ नहीं मिला है, वह भी लेता आऊँगा।"

इनायत ने मन-ही मन सोच लिया कि अमृतसर जाऊँगा ही, लाहौर भी होता आऊँगा।

अमर उत्तर में केवल 'हाँ' करके हो रह गई।

× × ×

दूसरे दिन सवेरे फरार क्रांतिकारी देशभक्त के पुनः गिरफ्तार हो

जाने की खबर बिजली की तरह अमृतसर और पंजाब के सभी बड़े-बड़े शहरों में विद्युत्-धारा की भाँति फैल गई। हृदयकांत ने भी यह अफ़वाह सुनी, और पहली बार अमृतसर का एक स्थानीय दैनिक खरीदकर उनकी गिरफ्तारी का नाटकीय और रोमांचकारी वर्णन एक साँस में पढ़ डाला। भीतर जाकर उन्होंने सबको यह खबर सुनाई। वह यह नहीं जानते थे कि उनके बहनोई का ही दूसरा नाम 'देशभक्त' है।

अंजना अपनी भावी संतान के लिये कोच पर बैठी हुई मोज़े बिन रही थी। उसे डेढ़ महीने का गर्भ था, जिसके कारण उसे कुछ खाना-पीना पचता न था। वह काफ़ी दुबल होने लगी थी। देशभक्तजी की गिरफ़्तारी की बात सुनते ही उसे ग़श आ गया।

अंजना की भाभी ने जब हृदयकांत को यह बताया कि ननदोईजी का ही दूसरा नाम देशभक्त है, तो सारे घर में कोहराम-सा छा गया। सभी लोग अंजना के ग़श का अर्थ समझकर उसकी परिचर्या में लग गए। अंजना को सान्त्वना देने के लिये सबने अपनी-अपनी आँखों में ही आँसुओं के घूँट पी लिए।

अंजना के होश में आने पर उसकी माँ ने उसे ढाढ़स बँधाते हुए कहा—"बेटी! हम लोग पूरी कोशिश करके कुँअर साहब को जमानत पर छुड़ा लेंगे। भगवान् ने चाहा, तो वह मुकदमे में भी बरी हो जायँगे। तुझे उन्हें यहाँ से जाने नहीं देना था। यहाँ कोई आता पुलिसवाला, हम लोग उसके दाँत तोड़ डालते। उसकी क्या जुर्रत थी कि वह कुँअर साहब के हाथ लगाता। कोई चोरी की थी या डाका डाला था?"

अंजना की माँ के समान, समझ में न आया था कि स्पेशल ट्रेन को पटरी से उड़ा देना और जेल से फ़रार हो जाना सरकार की निगाह में चोरी-डकैती से कहीं अधिक ख़तरनाक है। अंजना सब

कुछ समझती थी, और अभी तक अपने सुहाग की लाली की रक्षा के लिये जो-जो उसने कर्म किए थे, आज उन सब पर जैसे पानी फिर गया था। उसकी देव-उपासना, व्रत और दिन-रात की चिंता का कोई परिणाम न निकला। उसे ऐसा अनुभव हुआ कि जैसे उसका दम भीतर-ही-भीतर घुट रहा है।

अजना की एक-एक घड़ी बेचैनी, चिंता और घबराहट में कटने लगी। रात को भी उसे बहुत कम नींद आती। उधर प्रथम गर्भ की चढ़ती हुई अवस्था ने उसकी स्थिति और भी दयनीय बना दी।

जमानत के लिये की गई भाई-बाप की सारी कोशिशें बेकार गईं। देशभक्त सरकार के सबसे खतरनाक सुरक्षा बंदी थे, और उन्हें जमानत पर छोड़कर अँगरेजी राज्य खतरा मोल लेने को तैयार न था। सरकार ने उन्हें लाहौर-किले के भूगर्भस्थ तहखाने में डाल दिया, जहाँ चौबीसों घंटों और वर्ष भर की रात ही रहती थी, और भगवान् भुवन-भास्कर के प्रकाश-साम्राज्य में भी जहाँ हथेलियों के स्पर्श न हों तहखाने की संकुचित सीमाओं का अनुभव होता था। इस तहखाने में शीत और घने अंधकार में रहनेवाले सभी प्रकार के कीट-पतिंगों के स्वतंत्र विचरण पर कोई प्रतिबंध न था। पतिंगों के भ्रमण और मच्छड़ों के भयानक संगीत के बीच देशभक्तजी को नींद रात में आ भी जाती, तो इसलिये कि बीमार न होने की अवस्था में रात में नींद आना मानव-धर्म है। इस तहखाने के गोरे संगीनधारी प्रहरी बड़ा रहम करके चौबीस घंटे में देशभक्तजी को पीने को एक लोटा नमक का पानी और दोपहर-साँझ दो बार खाने को चार मोटे-मोटे रोट बड़ी घृणा के साथ दे देते थे।

जमानत की कोशिश असफल हो जाने पर देशभक्तजी से जेल में अजना के मिल सकने के लिये अनुमति-प्राप्ति की कोशिश की जाने लगी।

इसी बीच एक दिन इनायत अमर का संदेश लेकर देवकुमार की ससुराल पहुँचा। चंद्रकांत बाहर खड़ा था। इनायत ने उससे पूछा—"गुड़गाँव के प० देवकुमार जी शर्मा की ससुराल यही है? यह चिट्ठी उनके नाम है।"

चंद्रकांत ने चिट्ठी लेते हुए कहा—"हाँ, यही है।"

"देव भैया हैं क्या?"

"जीजाजी?"

"हाँ।"

"जीजाजी तो नहीं हैं।"

इनायत को अमृतसर पहुँचकर पूछ-ताछ करने पर यह पता चल चुका था कि देशभक्तजी गिरफ्तार हो चुके हैं। अब उसके संदेह की पुष्टि हो गई। वह काठमार-सा स्तब्ध खड़ा हो गया। ऊपर छज्जे पर अंजना खड़ी नीचे देख रही थी। अपने पति के बारे में नीचे चर्चा होती सुनकर उसने ज्यों ही ध्यान देकर देखा, तो वह इनायतुल्ला थानेदार को पहचान गई। परंतु उसे यह आश्चर्य हुआ कि बिना वर्दी में थानेदार साहब यहाँ कैसे आए हैं? क्या उन्हें गिरफ्तार करने? लेकिन वह तो पहले ही गिरफ्तार हो चुके हैं। दस हजार की रकम ने मालूम होता है कि इनकी भी मति फिरा दी है।

वह नीचे उतर आई।

चंद्रकांत ने अंजना को देखकर कहा—"जीजी! जीजाजी की चिट्ठी आई है।"

"चिट्ठी!" अंजना ने आश्चर्य, भय और आकुलता के साथ चिट्ठी हाथ में ली। बोली—"थानेदार साहब! यह चिट्ठी..."

"बहू रानी! यह चिट्ठी अमर बेटा ने भेजी है।" इनायत ने संदेह का निराकरण कर दिया।

"लेकिन चिट्ठी तो उनके नाम है।" अंजना ने मुँह नीचे झुका लिया।

"मुझे सब मालूम हो चुका है। भगवान् की लीला है यह।"

"भगवान् की लीला।"

"हाँ, बहू! तुम पढ़कर समझ लोगी कि गुड़गाँव मरघट हो गया है, और इधर देव भैया को भी जालिमों ने नहीं छोड़ा। यह भगवान् की लीला ही तो है।"

अंजना का दिल धक्-धक् करने लगा। सँभलकर उसने चन्द्रकांत को यह आदेश देकर कि वह थानेदार साहब के लिये बैठक खोल दे, और किसी आदमी को इनकी खातिरी के लिये छोड़ दे, ऊपर की ओर कदम बढ़ाया।

ऊपर चढ़ते-चढ़ते उसने पूछा—"आप दो-एक दिन तो ठहरेंगे न?"

"नहीं। मैं तो आज शाम को लाहौर जा रहा हूँ।"

"लाहौर? ऐसी क्या जल्दी है? दो-एक दिन तो ठहरिए ही।"

"नहीं बहू रानी! मेरा यहाँ ठहरना ठीक नहीं है। तुम चिट्ठी पढ़कर सब कुछ समझ लोगी। हो सके, तो इसका जवाब शाम तक लिखकर दे देना। और, मेरे लायक जो काम हो, मैं हर वक्त तुम लोगों के लिये तैयार हूँ।"

"अच्छा।" इतना कहकर अंजना ऊपर चली गई। इधर चन्द्र ने थानेदार साहब के लिये बैठक खुलवा दी, और एक आदमी इनाम को दे दिया। दोपहर का समय था, इन्द्रकांत और नीलकांत दफ्तर चले जा चुके थे।

अंजना जब तक सीढ़ी चढ़ती रही, उसके कानों में एक ही ध्वनि गूँजती रही—गुड़गाँव मरघट हो गया है! हे भगवान!!

अपनी ससुराल का उसे अभी तक कोई समाचार न मिला था।

अम्माजी और निर्मला के बारे में कुछ जानने और अपनी सहेलियों के बारे में कुछ सुनने को आज पहली बार इतनी उत्सुकता और साथ ही सवेरे से अब तक बराबर होनेवाले अपशकुनों से इतनी घबराहट और भय पैदा हुए। गुड़गाँव से चले आने के बाद मे जैसे कुछ अपने उन आत्मीयो के संबंध मे उसे कुछ स्मरण ही नहीं रह गया था। उसके विचार उसके 'अपने' के प्रति केंद्रीभूत हो गए थे। परंतु उस 'अपने' के दूर हो जाने पर पहली बार 'अपने' के अपनों के प्रति अंजना की ममता और स्नेह जाग पडा।

कमरे में पहुँचते ही उसने लिफाफा खोल डाला। पत्र निकाल-कर उसने उसे एक साँस मे खडे-खडे पढ डाला।

'दिन बुरे आते हैं, तो सब तरफ से आते हैं।" कहकर वह कोच पर जा बैठी। उसकी आँखें सजल हो गई थीं। वह आँख मूँद-कर गुड़गाँव के पहले के खाके को अपने मानस-पट पर अंकित करके आज के श्मशान शेष गुड़गाँव से उसका मिलान करने लगी। जिस गुडगाँव के स्वप्न-लीन घरों के आँगन मे रातें चाँदी की वर्षा करती थीं, सूर्य और चंद्र जिनके चारो ओर सोने और चाँदी के मिलमिलाते दीप लेकर प्रदक्षिणा किया करते थे, सुख, शांति और समृद्धि जहाँ पर अपना नीड़ बनाकर रहा करती थी, आज वही गुड़गाँव मर-घट की शांति लेकर सो रहा है। वह शांति, जिसके शीतल दाह मे अगणित नर-कंकाल, नारी के अमूल्य सतीत्व और पवित्रतम शृंगार, बस्ती और कलरव के मूक प्रतीक भग्नावशेष जल-जलकर खाक हो चुके हैं।

लेकिन शाबाश अमर रानी और निर्मला बीबी! तुम दोनो ने मिट-कर और अपना सब कुछ मिटाकर मातृभूमि के गौरव और भारतीय नारी की लाज की खूब रक्षा की। देवी तुल्य निर्मलाजी! मैंने आज तक तुम्हारे स्वरूप को नहीं पहचाना था। आज मैं किस मुँह से

तुम्हारा बुरा चेतते रहने के बाद तुमसे क्षमा माँगूँ ? वह तुम्हारे अमर बलिदान की गाथा सुनकर नाच उठेंगे। बेचारी अम्माजी! धन्य है उनकी कोख कि जिसने मातृभूमि को दो शेर-दिल सपूत दिए। परंतु पता नहीं कि उनकी क्या दशा हो? उनके बारे में अमर भाई ने कुछ नहीं लिखा! उफ्!!

अंजना ने गहरी उसाँस ली।

निर्मलाजी का संदेश तो उनके पास तक पहुँचाना ही होगा, लेकिन उनकी न तो जमानत ही मंजूर हुई, और न अभी तक उनसे जेल में मिल सकने की इजाजत ही मिली है। आखिर अब कैसे क्या किया जाय। निर्मलाजी नहीं रहीं। अब अम्माजी की कौन देख-भाल करेगा? अगर उनकी अनुमति मिल जाय, तो मैं अम्माजी को यहीं पर बुला लूँ। उनसे मिलना तो अब और भी जरूरी हो गया है। हाय रे राम!

इसी बीच अंजना की मा कमरे में आ गईं। अंजना ने झट से आँखें घुमाकर आँचल से अपने आँसू पोंछ डाले।

मा ने पूछा—"रो क्या रही है अंजो। बड़ी पगली है। भगवान् ने चाहा, तो दो-एक रोज में कुँअर साहब से मिलने की इजाजत जरूर मिल जायगी।"

"देखो।" अंजना ने एक उसाँस ली। उसके आँसू अब भी नहीं थमे थे।

मा पास आकर बैठ गईं। गोद में चिट्ठी पड़ी देखकर पूछा—"यह चिट्ठी कैसी है? चुप भी रहो।"

"गुड़गाँव की एक सहेली ने भेजी है।"

"यह बिना मोहर-टिकट का लिफाफा कैसे?"

"गुड़गाँव से एक आदमी आया है लेकर।"

"क्या लिखा है?"

"निर्मला बीबी अब न... रही।"

"कौन। कुँअर साहब की बहन।"

"हाँ।" और अजना अपनी मा के कंधे से लगकर ज़ोर-ज़ोर से [रोने] लगी। ज़ोर से रोना सुनकर अजना की भाभी, चंद्रलाल और [नौक]र-चाकर सभी दौड़ पड़े। अजना की भभा कुछ ही दिन पहले [ससु]राल आई थी।

सभी को अजो की ननद का निधन हुआ सुनकर बड़ा दुख [हुआ], और सभी एक-एक कर अजना को सांत्वना देने लगी।

× × ×

इनायत अजना का उत्तर लेकर लाहौर चला। रास्ते में सोचता [जाता] [थ]ा। अगर अमर बेटा कहीं नाराज हो गई, तो? लेकिन फूलों की [सेज] पर सोनेवाली शाहजादी बज्र देहात की झोपड़ी में कैसे रह [सके]गी। मैं उसे कष्ट पाते और रूखा-सूखा खाते नहीं देख सकता। [स]र साहब से प्रार्थना करूँगा कि कुँअर साहब को लाम पर [से] जल्दी-से-जल्दी लौट आने को लिख दें। लेकिन इतने में ही [इना]यत को याद पड़ा कि कुँवर साहब तो जापानियों की कैद में हैं। [इस]लिये तो वह ससुराल नहीं जाना चाहती कि वहाँ पर उनका [कम]रा, उनके रोजमर्रा के इस्तेमाल की चीजें देख-देखकर उनकी [या]द उसे रह-रहकर सताया करेगी। लेकिन गाँव में रहकर भी तो [क्या] उनकी याद न आएगी।

इनायत इससे आगे और कुछ न सोच सका। फिर भी अपने [नि]श्चय के अनुसार लाहौर पहुँच ही गया। सर साहब की कोठी का [चक्कर] लगाकर उनके सामने हाजिर हुआ। 'बंदे' सुनकर सर साहब [ने] मुस्किराकर उत्तर में सिर झुकाया, और पूछा—"तुम गुड़गाँव से [आ] रहे हो?"

"जी हाँ। जी नहीं।" इनायत घबरा गया कि वह क्या उत्तर दे।

"यहाँ कोई और नहीं है, भाई! घबराओ नहीं। बैठ जाओ।" सर साहब ने सामने पड़ी कुर्सी पर बैठने का संकेत किया।

काफी हिचकिचाहट के बाद विवश होकर इनायत को कुर्सी पर बैठना पड़ा।

"हाँ, अब यह बताओ" सर साहब ने अपना पूरा ध्यान इनायत की ओर केंद्रीभूत करके पूछा—"हमारी बहू रानी के बारे में तुम कुछ जानते हो? हम लोग उसकी खोज करके हार गए। हमारे सारे आदमी बिना किसी बात का पता पाए वापस लौट आए। शमशेर की मा ने तीन दिन से खाना-पीना छोड़ दिया है।" सर साहब के स्वर में कुछ विकलता, कुछ ममता और कुछ उत्सुकता या जिज्ञासा की भावनाएँ निहित थीं।

"तीन दिन से कुछ नहीं खाया! सर साहब! माताजी से कह दीजिए कि वह व्रत छोड़ दें। उनकी बहू रानी इस गरीब के दौलत-खाने पर सही-सलामती के साथ मौजूद हैं।"

"मौजूद हैं!" राय साहब के चेहरे पर खिलावट आ गई, और सहसा ही वह अपनी कुर्सी से उछल पड़े।

"शमशेर की मा! शमशेर की मा!" चिल्लाते हुए सर साहब पर्दा हटाकर भीतर गए, और कुछ ही क्षणों बाद अपनी पत्नी के साथ बाहर आए, जहाँ इनायत कुर्सी पर बैठा हुआ था।

शमशेर की मा के आते ही इनायत ने उठकर बंदे किया। मुस्किराकर उन्होंने पूछा—"बहू रानी मजे में तो है न!"

"जी हाँ। उनके लिये तो हम लोग हर वक्त जी-जान एक कर देने को तैयार हैं।"

"इसका तुम्हें हम गहरा पुरस्कार देंगे।"

"माताजी। आपकी बहू रानी मेरी बेटी के समान है। इनाम की कोई जरूरत नहीं है। मेरी आपसे यह गुजारिश है कि आप अपना व्रत तोड़ दीजिए।"

"मैं तुम्हारी बहुत शुक्रगुजार हूँ। घंटे-भर में ही हम लोग कार से तुम्हारे दौलतखाने चलेंगे। इतने में कुछ नाश्ता-पानी कर लो।"

"जी। नाश्ते-पानी की इच्छा नहीं है। आप जब चलिए, आप ही का घर है।"

"नहीं-नहीं। बिना नाश्ता किए यहाँ से नहीं जाने दिया जा सकता।"

शमशेर की मा ने उसे खुद अपने हाथ नाश्ता लाकर कराया। बाद में मतरे का रस लेकर उन्होंने अपना व्रत भंग कर दिया।

६ बजते-बजते शमशेर की मा और सर साहब इनायत को लेकर कार से उसके गाँव की ओर चल दिए।

[१५]

शिशिर बाबू के न मिलने से सज्जनसिंह बहुत परेशान थे। वह डॉ० हेमलता की हत्या को एक साधारण हत्याकांड न सिद्ध करके उसे राजनीतिक कुचक्र का एक अंग सिद्ध करना चाहते थे। उधर रूपकिशोर के ससुरालवाले पैसेवाले आदमी थे, और उनका शहर कोतवाल से अच्छा रसूक एवं व्यवहार था। बात-बात में गार्डन पार्टियाँ और लंबे-चौड़े नकद तोहफे कोतवाल साहब को दिए जाया करते थे। कोतवाल साहब के जरिए सज्जनसिंह पर दबाव डाला गया कि भई लाख पचास हजार की थैली से भी क्यों हाथ धो रहे हो? रूपकिशोर को अगर तुमने जमानत पर नहीं छूटने दिया, तो इतना कम-से-कम करो कि मुकदमा ही ऐसा बनाओ कि रूपकिशोर बाल-बाल बच जाय।

सज्जनसिंह जानते थे कि कोतवाल के मुँह में आदमी का खून लग चुका है, और वह इस लंबी रकम को यों ही हाथ से न जाने देगा। फिर उसमें से मेरा हिस्सा भी जरूर लगेगा। लेकिन क्या पता कि मुकदमा खत्म करवा देने पर पट्ठा खुद ही न सारी रकम डकार जाय। कोतवाल को भी ऐसे आड़े हाथों लेना होगा कि कम-से-कम आधा तो जरूर मुझे मिल जाय। सज्जनसिंह भी दो ही चीजें जानता है—नामवरी या फिर पैसा। वाह री डॉ० हेमलता! तुमने मरकर भी किसी का कुछ आदमी तो बना दिया।

आज पहली बार सरदार सज्जनसिंह का हृदय विचलित हो गया। उनकी दृढ़ता और स्थिरप्रज्ञता लोभ के बरसाती वेग में दो कूलों की भाँति कट गई।

सज्जनसिंह ने कोतवाल से स्पष्ट शब्दों में कह दिया— इसलिए

साहब ! आप हमारे अफ़सर हैं जरूर, लेकिन आपके कहने से ही सत्य और न्याय का गला नहीं घोटा जा सकता।"

कोतवाल को यह आशा थी कि सज्जनसिंह उसके मातहत है, उसका प्रस्ताव न ठुकराएगा। खासकर तब, जब कि वह यह जानता है कि मैं खुद इस मामले में दिलचस्पी रखता हूँ। अपनी आवेश-जन्य प्रतिक्रिया को छिपाने के लिये मुस्किराकर कोतवाल ने पूछा—"तुम्हारा अभिप्राय क्या है सज्जनसिंह ! तुमसे क्या छिपा है कि इस गोरी हुकूमत में पैसों से ही सत्य और न्याय खरीदे जा सकते हैं। पैसा ही सत्य और पैसा ही न्याय है।"

"ठीक है। हुजूर मेरा अभिप्राय नहीं समझ सके। इस पैसे से भी ऊपर एक और भी चीज है—उसका नाम है आत्मा। इस आत्मा की आवाज़ को दबाने के लिये कोई भारी-भरकम बोझ चाहिए, जिसके बिना..."

"मैं सब समझ गया सज्जनसिंह ! यह लो हजार-हजार के २५ बोझ जो तुम्हारे दिल की धड़कन बुझाने के लिये काफ़ी हैं।" कोतवाल ने हजार-हजार के २५ नोट अपने कोट की भीतरी जेब से निकालकर सज्जनसिंह के सामने फेंक दिए। "समझे ! यह मुक़दमा यहीं पर दबा देना होगा। मुक़दमा न चलाए जाने पर इतना ही तुम्हें और भी मिलेगा।"

नोट उठाकर अपनी जेब में सरकाते हुए सज्जनसिंह बोला—"हुज़ूर की आज्ञा के विरुद्ध भला मैं कभी जा सकता हूँ। लेकिन यदि हुक्म दें, तो एक बात आपके सामने अर्ज करूँ।"

"क्या ?"

"सरकार और जनता को यह दिखलाने के लिये कि डॉ० हेमलता की हत्या के संबंध में खोज-बीन जारी है। हमें ऊपरी दिखावा तो बनाए ही रखना होगा।"

"हाँ हाँ। यह तो फिर बहुत जरूरी है।"

"सुना है कि शिशिर बाबू के बारे में उनके एक दूसरे शिष्य देशभक्त से बहुत कुछ पता चल सकता है। देशभक्त इस समय किले की काल-कोठरी में तीन दिन से बंद हैं।"

'मालूम है। यह वही फरार है, जिसकी स्पेशल दुर्घटना के समय में बड़ी तलाश थी, और जिसके बारे में यह बताया जाता है कि जापान सरकार से भी उसका सीधा ताल्लुक है।'

"जी हाँ!"

"लेकिन गवर्नर साहब की हत्या की जो साजिश चल रही थी— वह तो फिर सब झूठ ही निकली। बोधासिंह कहीं गप्प तो नहीं मार रहा था?"

'मेरा तो यह खयाल है कि यह साजिश इसलिये असफल हो गई कि उसके पहले ही अमृतसर में सी० आई० डी० इन्स्पेक्टर की हत्या हो गई, और उसी सिलसिले में देशभक्त और उनका एक और साथी, दोनों पकड़ लिए गए। बोधासिंह को भी शिशिर बाबू के क्रांतिकारी दल का एक आदमी मारने के लिये भेजा गया था, लेकिन वह भी खुदा न-ख्वास्ता पकड़ लिया गया। इन सब गिरफ्तारियों और शिमला में पुलिस और सी० आई० डी० की चौकसी को देखकर मेरा यह खयाल है कि क्रांतिकारी भाग खड़े हुए हैं। उनकी कमर टूट चुकी है।"

"यह तुम्हारा खयाल-ही खयाल हो सकता है सज्जनसिंह। तुम्हारे इस खयाल के पीछे क्या प्रमाण हैं—क्या मैं जान सकता हूँ।"

"इस समय तो मैं कोई ठोस प्रमाण नहीं दे सकता। प्रमाण एकत्र करने के लिये मुझे कुछ मोहलत दीजिए।"

"सही। फिर मिलना। मैं भी इस समय बहुत व्यस्त हूँ। लेकिन क्रांतिकारियों की ओर से अभी बहुत सावधानी रखनी होगी। समझे।"

'जरूर।" और—

"आदाब अर्ज" करके सज्जनसिंह अपने हलके की ओर चल दिए।

× × ×

आततायी शासन की आधार-स्तंभ काल-कोठरी ने देशभक्त के स्वास्थ्य को ढीला कर दिया, परंतु उनके उत्साह को नहीं, अस्थियों को कमजोर कर दिया, परंतु उनके अदम्य साहस को नहीं।

परंतु इस उत्साह में कितनी आग शेष है, इस साहस में कितना अधिक देश के पीछे पागलपन है, इसकी परीक्षा होनी अभी शेष थी। इस परीक्षा के बाद उत्तीर्ण होने पर देशभक्ति के अक्षम्य अपराध के दंड-स्वरूप जो गहरा पुरस्कार मिलता है, उसके ग्रहण करने के लिये उपयुक्त अवसर का आगमन भी अभी शेष था। सभी को वह पुरस्कार नहीं मिलता, यही देशभक्त के स्वाभिमान की चीज थी।

देशभक्त की जब आँखें खुल जातीं, और गोरे प्रहरी के फ़ौजी बूट चरमर्र कर उठते, तो वह समझ लेता कि सवेरा हो गया। जब उसकी आँखों में नींद भर आती, मच्छर अपनी वीणा बजाने लगते, तिंगे फुदक-फुदककर डालने लगते और प्रहरी तहखाने के लौह-द्वार का विशालकाय ताला खटखटाकर चरमर्र करता हुआ कुछ दूर चला जाता, तो देशभक्त को मालूम हो जाता कि रात हो गई। रात और दिन में अंतर करने के उनके पास एक छोटे से गवाक्ष को छोड़कर केवल इतने ही साधन उपलब्ध थे।

रूखे-सूखे भोजन, अपर्याप्त और नमक मिले जल से उनका दूध-घी से बना हुआ हृष्ट-पुष्ट शरीर घुलने लगा। यहाँ कोई प्रेम-पूर्वक गरम-गरम रोटियाँ और पूड़ियाँ बना-बनाकर खिलानेवाला न था। पहले दिन उनसे जेल के वे मोटे-मोटे अधसिके रोट न खाए गए, लेकिन जब तक अंतिम घड़ी न आ जाय, उन्हें उसकी प्रतीक्षा में प्राण-धारण तो करना ही था। जितना कुछ खाते बनता, खा लेते;

"हाँ हाँ। यह तो फिर बहुत जरूरी है।"

"सुना है कि शिशिर बाबू के बारे में उनके एक दूसरे शिष्य देशभक्त से बहुत कुछ पता चल सकता है। देशभक्त इस समय किले की काल-कोठरी में तीन दिन से बंद हैं।"

'मालूम है। यह वही फरार है, जिसकी स्पेशल दुर्घटना के समय में बड़ी तलाश थी, और जिसके बारे में यह बताया जाता है कि जापान सरकार से भी उसका सीधा ताल्लुक है।'

'जी हाँ।'

"लेकिन गवर्नर साहब की हत्या की जो साजिश चल रही थी—वह तो फिर सब झूठ ही निकली। बोधासिंह कहा गया तो नहीं मार रहा था?'

'मेरा तो यह ख्याल है कि यह साजिश इसलिये असफल हो गई कि उसके पहले ही अमृतसर में सी० आई० डी० इंस्पेक्टर की हत्या हो गई, और उसी सिलसिले में देशभक्त और उनका एक और साथी, दोनों पकड़ लिए गए। बोधासिंह को भी शिशिर बाबू के क्रांतिकारी दल का एक आदमी मारने के लिये भेजा गया था, लेकिन वह भी खुदा न-ख्वास्ता पकड़ लिया गया। इन सब गिरफ्तारियों और शिमला में पुलिस और सी० आई० डी० की चौकसी को देखकर मेरा यह ख्याल है कि क्रांतिकारी भाग खड़े हुए हैं। उनकी कमर टूट चुकी है।"

'यह तुम्हारा ख्याल-ही ख्याल हो सकता है मिस्टर [illegible]। तुम्हारे इस ख्याल के पीछे क्या प्रमाण है—क्या मैं जान सकता हूँ।"

"इस समय तो मैं कोई ठोस प्रमाण नहीं दे सकता। [illegible] करने के लिये मुझे कुछ मोहलत दीजिए।"

"नहीं। [illegible] मिलना। [illegible] इस समय बहुत [illegible] है। और क्रांतिकारियों की ओर से अभी बहुत सावधानी बरतनी होगी। [illegible]'

"जरूर।" और—

"आदाब अर्ज" करके सज्जनसिंह अपने हलके की ओर चल दिए।

× × ×

आततायी शासन की आधार-स्तंभ काल-कोठरी ने देशभक्त के स्वास्थ्य को ढीला कर दिया, परंतु उनके उत्साह को नहीं, अस्थियों को कमजोर कर दिया, परंतु उनके अदम्य साहस को नहीं।

परंतु इस उत्साह में कितनी आग शेष है, इस साहस में कितना अधिक देश के पीछे पागलपन है, इसकी परीक्षा होनी अभी शेष थी। इस परीक्षा के बाद उत्तीर्ण होने पर देशभक्ति के अक्षम्य अपराध के दंड स्वरूप जो गहरा पुरस्कार मिलता है, उसके ग्रहण करने के लिये उपयुक्त अवसर का आगमन भी अभी शेष था। सभी को वह पुरस्कार नहीं मिलता, यही देशभक्त के स्वाभिमान की चीज़ थी।

देशभक्त की जब आँखें खुल जातीं, और गोरे प्रहरी के फ़ौजी बूट चरमर्र कर उठते, तो वह समझ लेता कि सवेरा हो गया। जब उसकी आँखों में नींद भर आती, मच्छर अपनी वीणा बजाने लगते, पतिंगे फुदक-फुदककर डालने लगते और प्रहरी तहखाने के लौह-द्वार का विशालकाय ताला खटखटाकर चरमर्र करता हुआ कुछ दूर चला जाता, तो देशभक्त को मालूम हो जाता कि रात हो गई। रात और दिन में अंतर करने के उनके पास एक छोटे से गवाक्ष को छोड़कर केवल इतने ही साधन उपलब्ध थे।

रूखे-सूखे भोजन, अपर्याप्त और नमक मिले जल से उनका दूध-घी से बना हुआ हृष्ट-पुष्ट शरीर घुलने लगा। यहाँ कोई प्रेम-पूर्वक गरम-गरम रोटियाँ और पूड़ियाँ बना-बनाकर खिलानेवाला न था। पहले दिन उनसे जेल के वे मोटे-मोटे अधसिंके रोट न खाए गए, लेकिन जब तक अंतिम घड़ी न आ जाय, उन्हें उसकी प्रतीक्षा में प्राण-धारण तो करना ही था। जितना कुछ खाते बनता, खा लेते,

बाकी एक कोने में डाल देते, जिसे उस भुइँहरे में ही मिलजुलकर रहनेवाली चुहियाँ, पतिंगे आदि मिलकर रात में ही सफा कर डालते थे। देशभक्त को अपनी माँ, सास, बहन और अपनी पत्नी के हाथ की बनाई हुई सोंधी रसोई की सुगंध आने लगती, परन्तु वह दिल मसोसकर रह जाते।

हवालात के बाहर की चहल-पहल देशभक्त के लिये स्वप्न बन गई थी। 'सफाई' के समय ही उन्हें सूर्य देवता के दर्शन होते। उस समय गंदे कपड़े, बढ़ी हुई मूँछ-दाढ़ी और न नहाने तथा आंतरिक अस्वास्थ्य के कारण एकत्र मैल को शरीर पर देखकर अपने आपसे ही उनके जी में घृणा भर जाती। सप्ताह दो सप्ताह में एक स्नान करने, एक पखवारे में एक बार कपड़ा धोने और महीने में एक बार मूँछ दाढ़ी बनवाने का उन्हें अवसर दिया जाता। यही उनके लिये जैसे कारावास का नियम था।

दिन में वह तहखाने के लौह-द्वार के पास खड़े हो जाते और उसके सामने से ऊपर की ओर गई हुई सीढ़ियों की ओर बड़ी देर तक देखते रहते। कभी वे सीढ़ियों की ईंटों को गिनते और यह अंदाज लगाते कि ऊपर तक गई सीढ़ियों में कुल कितनी ईंटें लगी हैं। कभी दो ईंटों की दरारों पर लगी हुई सीमेंट की पट्टियों की ओर मूक भाव और स्थिर दृष्टि से बड़ी देर तक देखा करते। जब वह भीतर की ओर घूमकर दृष्टि डालते, तो अंधकार में उनकी आँखों को कुछ न दीखता, और वह फिर घबराकर बाहर की ओर देखने लगते। खड़े रहने से थककर वह बैठ जाते, और बाहर, ऊपर की ओर [illegible] प्रहरी के बूटों की चरमर या उसके [illegible] चलनेवाली अंगरेजी की [illegible] ध्यान से सुनने लगते। इस पर भी मन न लगने पर वह [illegible]। पर लेटे [illegible] और भारत माता के मानचित्र की कल्पना करने लगते। एक बार

जो उन्हें बहुत प्रिय था, वह आम तौर पर गाते। उस गीत का भाव यह था—

"मा! मैं तेरी गोद में बार बार खेलने आऊँ।

"हिम किरीटिनी! तेरे धानी आँचल में बहनेवाली सिंधु, गंगा और यमुना का अमृत-सा निर्मल जल स्वर्ग के देवताओं को भी दुर्लभ है।

"स्वर्णभूमि! तेरी मिट्टी सोना उगलती है, और तुझमें ही रक्त-राव खाक होकर एकरूप हो जाते हैं। आदम का पुल, अजंता और इलोरा की चित्र-गुफाएँ, ताजमहल और दिल्ली का लालकिला, अशोक का लौह-स्तंभ तथा कुतुबमीनार तेरी ही मिट्टी की अश्रुतपूर्व कीर्तियाँ हैं।

"प्रकृति-सहचरि! निर्झरिणी का अमर संगीत, समुद्र-लहरी के जय-घोष, कोकिल के मनहर कूजन, वन-बालाओं और जल-परियों के मुग्ध नर्तन, कपोत और बलाका के द्वंद्व-उड़ान, सावन की रिमझिम, शरत् की राका और वसंत का उन्माद जो तुझे सुलभ है, वह तो नंदन-वन के लिये भी स्वप्न है।

"परंतु दुर्जेये! तेरे सूर्य और चंद्र पश्चिम से उगने लगे हैं, और आज तेरे ही घर में अंधकार छाया हुआ है। नक्षत्र भी तेरी दीवाली में शामिल नहीं होते। दासता, पारस्परिक रक्तपात, अकाल, अति-वृष्टि और महामारी—सभी एक साथ तेरा शोषण करने में जोंक की तरह संलग्न हैं। दुःशासन तेरे तन पर चीर तक नहीं छोड़ना चाहते।

"आशीर्वाद दो मा! कि मैं तेरे सम्मान और गौरव की रक्षा में इस नश्वर शरीर का विसर्जन कर दूँ। आशीर्वाद दो मा! कि मैं तेरी गोद में बार-बार खेलने आऊँ।"

देशभक्त की आँखें इस गीत को गाते हुए सजल हो उठतीं, उनकी मुट्ठियाँ बँध जातीं, और साँसें तेज चलने लगतीं। वह कंबल से उठकर अपनी कोठरी में ही चहलकदमी करने लगते।

गोरा प्रहरी अपने कैदी का गीत बड़े ध्यान से सुनता। उसे भारतीय स्वर-लहरी थोड़ी देर के लिये आत्मविभोर कर देती, और उसके हृदय की कठोरता घुलकर पानी हो जाती। वह उसका यदि अर्थ समझ पाता, तो शायद उसकी आँखें चढ़ जातीं, और वह अपने कैदी पर झुँझला उठता।

किसी तरह पहाड़ की तरह लम्बा दिन भी बीत जाता और रात हो जाती।

देशभक्त का अतीत एक सजीव चित्र-पट बनकर खड़ा हो जाता। मा, बहन और पत्नी, ये तीन ही उनके पारिवारिक थे, और वे तीनों उनको जैसे घेरकर बैठ जाते। परन्तु वे सब सोच रही होंगी कि मैं अब आता होऊँगा, अब आता होऊँगा। लेकिन उन्हें क्या मालूम कि मैं आज कहाँ हूँ? स्वप्न में भी उनकी कल्पना यहाँ तक न पहुँचेगी।.. लेकिन लम्बी और दुखद प्रतीक्षा के बाद उनके नन्हे-मुन्हे दिल आशंका और भय से भर उठेंगे। निर्मला बड़ी हो गई है। मा को उसके ब्याह की चिंता होगी। लेकिन उसने तो अपना साथी ढूँढ़ लिया है, मोहनलाल। वीर लड़की का पति भी मोहनलाल-जैसा वीर युवक ही होना चाहिए। मा कोई बाधा न डालेगी, लेकिन . पता नहीं कि श्रीमती ने इसका क्या विरोध किया था। लेकिन आज की श्रीमती और कल की श्रीमती में बहुत अंतर है। ननद के प्रति वह द्वेष और ईर्ष्या की भावना उसके दिल में अब न होगी।

फिर देशभक्त अंजना का स्वप्न देखता हुआ सो जाता। और झँपते ही गणेशवाहन किसी कोने से निकलकर एक दूसरे का पीछा करते हुए देशभक्त के मुँह पर से कुलांचें मारना शुरू कर देते कि देशभक्त की नींद उचट जाती और फिर बहुत प्रयत्न करने पर भी आँखें न लगतीं। चूहों की चूँ-चूँ और दौड़-धूप, मच्छरों ...

संगीत और पतिंगों की उछल-कूद दो बजे रात तक उन्हें पल-भर भी न सोने देती।

इधर दो-तीन दिन हवालात में बीत जाने पर रात को सरकारी जासूसों और पुलिस सब-इंस्पेक्टरों के रात में आने का तांता लग गया। वे एक तेज मशाल के साथ आते और देशभक्त से तरह-तरह के घटा प्रश्न पूछते—ऐसे प्रश्न कि जिनसे उनका कोई संबंध न था, और जिनका उत्तर देना भी उनकी सामर्थ्य के बाहर था। डाँट-फटकार, गाली-गलौज अलग सुनने को मिलती। उत्तर न देने पर तरह-तरह की धमकियाँ घाते में रहतीं। रोशनी रहने से मच्छड़ और पतिंगे रोशनी की ओर खिंच जाते, गणेशवाहन भी अपनी नटबाजी दिखाने के लिये अपने बिलों से बाहर न निकलते, लेकिन एक बला से छूटकर इस नई आफत ने देशभक्त के लिये एक अजीब परेशानी पैदा कर दी। रात को नींद, जो भूले-भटके ही उनकी पलकों में आ पाती थी, वह भी हराम हो गई।

औरों से काम चलता न देखकर सज्जनसिंह खुद गोरे इंचार्ज को साथ लेकर देशभक्त से मिलने गए। उस दिन विशेष रूप से देशभक्त को नहाने और कपड़े साफ करने का मौका दिया गया। बढ़ी दाढ़ी बनाने के लिये नाऊ भी आया। आज की इन विशेषताओं ने देशभक्त के मन में आशंका पैदा कर दी। लेकिन उनके भाग्य में नित्य नई मुसीबत ही शायद लिखी हुई थी। देश-प्रेम एक ऐसा अपराध है कि स्वयं ब्रह्मा भी उसके भाग्य-लेख को सीधी कलम से नहीं लिखता।

"वंदे!" कहकर देशभक्त ने दोनों का स्वागत किया। गोरे की भौंहें चढ़ गईं, लेकिन सज्जनसिंह सिर्फ मुस्किराकर रह गया। देशभक्त की समझ में आ गया कि आज उसकी पाहुन की तरह जो खातिरी हुई थी, उसका क्या अर्थ था।

इंचार्ज के आदमी दो कुर्सी और इस तहखाने को दिन में भी प्रकाश देने के लिये एक मशाल रखकर चले गए। तहखाने में रह गए दो अँगरेजी राज्य के स्तंभ और एक उन स्तंभों को अकेले ही खोद-खोदकर गिरानेवाला साहसिक।

"मेरा खयाल है कि इंचार्ज साहब की मेहमानदारी में रहकर तुम्हें कोई तकलीफ़ न हुई होगी, क्यों देशभक्तजी!" सज्जनसिंह ने व्यंग्य किया, और इंचार्ज ठठाकर हँस पड़ा।

"बैठा-बिठाया रोटी खाने को मिलटा है। यह आराम टो घर पर भी न होगा।" गोरे ने कहा।

"जी हाँ। इस देश में जब तक अँगरेजों का राज्य है, और जब तक काले कुत्ते उसकी चौकसी करेंगे, तब तक क्या जेल के भीतर और क्या जेल के बाहर हर हिंदोस्तानी के लिये एक-सा है।"

"चुप रहो। खूनी हमारे कार्यों की आलोचना नहीं कर सकते।"

"इंस्पेक्टर साहब! नाराज न हों। पेट बड़ा पापी है। आप जो कुछ कहते या करते हैं, पेट के लिये करते हैं। इसमें आपका कोई दोष नहीं। देश के लिये देश के अनगिनत भूखे बच्चों की पेट की ज्वाला को बुझाने के लिये आप अपने पेट को भूल जायँ, यह कैसे हो सकता है।"

"क्या बक-बक करटा है।" शिकारी कुत्ते-सा गोरा गुर्रा उठा। "ज्यादा बोलेगा, टो... " उसने अपना रिवाल्वर देशभक्त के सीने पर लगा दिया।

देशभक्त मुस्किराकर बोले—"आत्मा अमर है, इंचार्ज साहब! वह इस ईस्पात के रिवाल्वर से नहीं मर सकती। जिस दिन मैं आप लोगों के हाथ में पड़ा था, देश के लिये मैं उसी दिन मर चुका।"

"ठहरिए इंचार्ज साहब! जिस शख्स को क़ानून ने ही मार डालने

का निश्चय कर लिया हो, उसको आप मारकर कानून के कार्यों में बाधा न डालें।" सज्जनसिंह ने गोरे का हाथ देशभक्त की छाती से हटाते हुए कहा—"मुझे इस शख्स से बहुत से काम लेने हैं।"

"ठीक। बहुत ठीक।" गोरे ने मुस्किराकर अपना रिवाल्वर हटा लिया।

सज्जनसिंह ने आगे बढ़कर देशभक्त के कंधे पर हाथ रखकर पूछा—"देशभक्तजी। तुम जानते हो कि जिंदगी कितनी महँगी चीज है। वह यों ही लुटाई नहीं जाती।"

देशभक्त ठठाकर हँस पड़े—"आपके लिये ज़िंदगी जरूर महँगी है।"

"तुम्हारा मतलब?"

"आप चाहते हैं कि अपने प्राणों की रक्षा के लिये मैं पुलिस का मुखबिर बन जाऊँ इंस्पेक्टर साहब। याद रखिए कि हर हिंदोस्तानी बोधासिंह नहीं बन सकता।"

"हूँ। देशभक्तजी। मैं आपकी दृढ़ता और आपके साहस की तहेदिल से तारीफ़ करता हूँ. लेकिन मैं जो कुछ आपसे जानना चाहता हूँ, मेरा खयाल है, आपको उसे बताने में कोई आपत्ति न होनी चाहिए।"

"पूछिए।"

"आप खुद तो जानते ही हैं कि आप नजरबंद हैं।"

"जरूर।"

"आपके और भी कई साथी सींखचों के पीछे अपने भाग्य की अदृश्य लिपि पढ़ रहे हैं।"

"हो सकता है।"

"हो सकता है नहीं, यही सत्य है। मेरा ख्याल है कि शिशिर बाबू के दल की अब कमर टूट चुकी है।"

"कभी नहीं। जब तक देश के लिये कुर्बानी करनेवाले दीवाने मातृभूमि का उद्धार न कर लेंगे, तब तक क्रांति की कमर कभी न टूटेगी।"

"मैं आपके पुरजोश ख्याल की तारीफ़ करता हूँ, लेकिन क्या यह सही नहीं है कि शिशिर बाबू मैदान छोड़कर भाग खड़े हुए हैं।"

"इन्स्पेक्टर साहब!" देशभक्त जैसे कुछ चौंक-से उठे—"आप जब ऐसी बातें कहते हैं, तो दिल को चोट पहुँचती है। शिशिर बाबू क्रांति के प्रतीक हैं। क्रांति किसी को पीठ नहीं दिखलाती। और, वह शाश्वत है। अगर शिशिर बाबू आपके हाथ आ गए हैं, और अगर आप लोगों ने उनका अंत कर दिया है, लेकिन देश को धोखा देने के लिये आप यह प्रचार करना चाहते हैं कि शिशिर बाबू प्यारी भारत-भूमि को छोड़कर कहीं भाग गए, तो आप प्रचार भले ही कुछ कर लें, लेकिन आप क्रांति की ज्वाला को नहीं बुझा सकते। क्रांति कभी न मिटेगी, क्रांति को मिटानेवाले ही एक दिन खुद मिट जायँगे।"

सज्जनसिंह जोर से ठहाका मारकर हँस पड़ा। इन्चार्ज चकित सा होकर देशभक्त और सज्जनसिंह की ओर क्रम से देखने लगा।

× × ×

किशोरी को मालूम हो गया था कि रायसाहब, मोहनलाल, बसंत, नवधारा और नयनतारा आदि सभी प्रमुख स्त्री-पुरुष मारे गए, और बाक़ी को गोरी फ़ौज गिरफ़्तार करके ले गई। उसे यह भी मालूम हो चुका था कि निर्मला और अमर छूटकर कहीं भाग निकली, लेकिन छूट भागने के पहले ही निर्मला को अपनी सतीत्व-रक्षा के लिये छुरी कलेजे में रख लेनी पड़ी थी। तब से उसका क्या हुआ, वह कहाँ गई, है भी या नहीं इस दुनिया में—इसका किशोरी को अभी तक किसी ने भी पता नहीं दिया था। उसको बेटे-बहू का भी कोई संदेश अभी तक नहीं मिला था, परंतु इस कल्पना से उसे संतोष था कि

अगर देवकुमार गुड़गाँव ही मे रहता, तो जाने उसका क्या हुआ होता। ..चलो, ससुराल में वह आनद से तो होगा। परतु उसे क्या मालूम था कि देवकुमार जिस ससुराल मे पहुँच गया है, वहाँ से लौटकर इस मानवी चोले में ही वह वापस न आएगा।

गुड़गाँव के खँडहरो मे शहीदो की आत्माएँ स्वतत्र होकर विचरण करने लगी थीं, और मारे गए गोरों की आत्माएँ प्रेत बनकर। आजादी के इस सग्राम के बाद बची हुई स्त्रियों और बूढे-बच्चो का यह विश्वास बन गया था कि खँडहरो मे रात को अभी भी गोरो की प्रतात्माओ और शहीदो की देवतात्माओ मे युद्ध होता है, और आधी रात बाद गोली चलने की तथा तरह-तरह के राष्ट्रीय नारो की आवाजें सुनाई पड़ती हैं। दिन मे यात्री भी गुड़गाँव के पास मे होकर निकलने में भय खाने लगे थे। इस विश्वास के कारण ही शेष लोग पास-पड़ोस के गाँवों मे जाकर बस गए। लोगो ने किशोरी को भी समझाया, और बहुतेरा रोका कि तुम भी कहीं चली चलो, गुगगाँव न जाओ, लेकिन उसकी समझ में यह सब कुछ न आया।

फौज गुड़गाँव को श्मशान बनाकर लौट गई थी। किशोरी ने यही निश्चय किया कि मैं अकेले ही चलकर अपने मकान के खँडहर में रहूँगी। अगर देवकुमार, बहू और निर्मला यहाँ लौटकर आएँगे, तो मुझे न पाकर कहीं वे लौट गए, तो क्या होगा?... उसने जो कुछ निश्चय किया, उसे, जब उसके दूसरे सभी साथी अस्थायी डेरो को छोड़कर चले गए, तो उसने पूरा करने के लिये गुड़गाँव की ओर कूच बोल दिया।

उसे अकेले चोर-डाकुओ और हिंसक पशुओं का कोई भय न लगा। यत्र-तत्र बिखरी हुई हड्डियों और जली हुई झोपड़ियां, रक्त से भीगी हुई लाल भूमि और दीवालों, सुनसान गलियों को पार करके वह अपने मकान के सामने पहुँची। दालान का छाजन जल चुका

था, और केवल उनको सँभालनेवाले लकड़ी के खमे अवजले खड़े थे। दरवाजा टूटा हुआ था, किवाड़ जलकर राख हो चुके थे, भीतर घुसने पर उसने देखा, पीछे की दीवाल गिरी पड़ी थी, छत और दीवाल का मलबा बहुत कुछ आँगन में और शेष पीछे की तरफ टीला बनकर पड़ा हुआ था। साँय . साँय...साँय...चारो ओर कठोर स्तब्धता और शून्यता। जो कुछ भी वह यहाँ छोड़ गई थी, उसका कहीं कुछ नाम-निशान न था। इतनी जल्दी इतना भीषण परिवर्तन। किशोरी इसकी कल्पना न कर सकी। उसने गहरी उसाँस छोड़कर ज्यों ही एक खभे का सहारा लिया कि अरराकर सहारे से सधी हुई छत का शेष भाग उस पर टूटकर गिर पड़ा।

अपने बच्चा की चिरप्रतीक्षा करने के लिये किशोरी की आत्मा उस मलवे के नीचे नींद लेकर सो गई।

अजना ने अपनी सास का पता लगाकर ले आने के लिये जो आदमी भेजे, उन्हें मार्ग के गाँववालों ने गुड़गाँव पहुँचने के बहुत पूर्व ही से लौटा दिया—यह कहकर कि 'प्रेत-नगरी' में हम लोग तुम्हें नहीं जाने देंगे।

× × ×

उधर अमर को सर साहब लौटा ले गए, और उसके मा-बाप की स्टेट की देख-भाल और लगान-वसूली के लिये एक मैनेजर नियुक्त कर दिया गया।

[१६]

लगभग ४ महीने बाद जनरल मोहनसिंह ६ दिसंबर, १६४२ को गिरफ्तार कर लिए गए। आज से कई महीनों पहले, संभवतः जापान की 'नई व्यवस्था' में विश्वास न कर सकने के कारण तथा भारत पर भी जापानियो की आँख लगी देखकर राजा महेंद्रप्रताप ने जापान का साथ देने से इनकार कर दिया था। दूसरे प्रयत्न में, जापान ने रासविहारी घोस की मदद ली, जो जापान मे गत १६ २० वर्षों से रह रहे थे, और उन्हे पूर्वी एशिया के भारतीयों को, जिनकी सख्या लगभग २० लाख थी, सगठित करने का मौका दिया। सभवतः इसी के परिणाम-स्वरूप टोकियो और बेंकाक मे पूर्वी एशिया के भारतीय प्रतिनिधियों के दो महत्त्व-पूर्ण सम्मेलन हुए। बेंकाक-सम्मेलन के निश्चय के अनुसार ही मलाया में प्रथम आजाद हिंद फ़ौज का निर्माण हुआ था। जनरल मोहनसिंह उसके सर्वोच्च अधिकारी थे। सेना मे लगभग एक लाख सैनिक थे, जिसमे एक चौथियाई नागरिक भी शामिल हो गए थे। जापानियो ने आजाद हिंद फ़ौज के केवल १५,००० सैनिकों को ही हथियार दिए। कहते हैं, जापान ने २,००० आजाद हिंद फ़ौजी अपने कार्य के लिये मांगे थे। जनरल मोहनसिंह ने कोई इनकार नहीं किया। लेकिन जापानियों ने उनसे फ़ौजी कुलियों का काम लिया, और उनके साथ बड़ा ही कठोर व्यवहार किया।

जनरल मोहनसिंह को जब यह पता चला, तो वह टोकियो गए, और उन्होंने अपने २,००० भाइयों की स्थिति की जाँच करने की

माँग की। जापान के फौजी अधिकारियों ने आव देखा, न ताव, जनरल मोहनसिंह को नजरबंद कर दिया। उन्हीं के साथ कर्नल निरंजनसिंह गिल भी, जो उनके अनुज होते हैं, नजरबंद कर लिए गए।

मलाया-स्थित आजाद हिंद फौज को भंग कर दिया गया। लें० शमशेरसिंह, जो प्रथम आजाद हिंद फौज में कप्तान हो गया था, दूसरे अफसरों की गिरफ्तारी की सूचना पाते ही सदर मुकाम से भाग निकला। रजनी पोर्ट डिक्सन से आजाद हिंद फौज के डॉक्टरी दल की सदस्या होकर सदर मुकाम पर आ गई थी। वह पकड़ ली गई। शमशेर को जब यह मालूम हुआ, तो उसने जापानी प्रहरी को गोली मारकर उसे मुक्त कर लिया।

रातोंरात दोनों भागकर एक गाँव में पहुँचे। यहाँ पर कुछ भारतीयों की भी बस्ती थी। उन्होंने दोनों को आश्रय दिया।

रास्ते में थककर जब दोनों एक घने पेड़ के नीचे बैठे, तो शमशेर ने कहा—"देख लिया रजनी! आखिर मेरा ख्याल ठीक निकला। मालूम है कि आजाद हिंद फौज क्यों भंग हुई?"

"सुना है कि जापानियों की नीयत बदल गई है। लेकिन यह तो कभी नहीं हो सकता कि हमारी फौज से कुलीगिरी का काम लिया जाय। जापानियों ने हमारे साथ विश्वासघात किया है। शमशेर भैया!"

"इससे भी बढ़कर उन्होंने एक बात और भी की है। मेरा"

"क्या?"

"मेरा अनुमान गलत नहीं हो सकता कि जनरल मोहनसिंह टोकियो में नजरबंद कर लिए गए हैं।"

"नजरबंद कर लिए गए!" रजनी ने आश्चर्य प्रकट किया।

"नहीं तो आजाद हिंद फौज को भंग करने का क्या कारण है?

सकता था ? जानती हो, सभी हमारे भाई फिर जापानियों के कैदी हो गए। मुझे जापानियों के भयानक इरादों पर पहले से ही संदेह था। इसीलिये तो उन्होंने हमारे आदमियों को पूरे पूरे हथियार भी नहीं दिए। मामूली राइफलों, बिगड़ी हुई मशीनगनों और टामीगनों से आज का यन्त्र-युद्ध नहीं लड़ा जा सकता। हमारे पास हवाई जहाज़, बम और पैराशूट नहीं, हमें टैंक, फौजी लारियाँ, बख़्तरबंद, ट्रक, मोटर साइकिलें, कुछ भी नहीं दी गईं। सुरंगें, विमान वेधक तोपें और भारी-भारी तोपखाने, इनके तो दर्शन भी नहीं करने दिए गए। जो कुछ हथियार हमें मिले भी हैं, वे भी हमें हमारे पैसों से ही मिले हैं। दवा-दारू तो बहुत-सी अँगरेज ही पीछे छोड़ गए थे। इसमें क्या होगा, रजनी बीबी।" शमशेर ने गहरी साँस छोड़ी।

रजनी ने शमशेर के दिल की गहरी निराशा और पराजयवाद की भावना अपनी सतर्क आँखों से पढ़ लिया। बोली—"तो क्या ऐसा ही पोच दिल लेकर भारत जननी के बंधन खोलोगे ? शमशेर भैया! हमें तो दोतरफी लड़ाई लड़नी होगी। एक ओर अँगरेजी भेड़िए से और दूसरी ओर जापानी रीछ से। जापानी हमसे मिलकर चलें या विरोध करके—हमने अपने स्वार्थ के लिये ही उनसे सहयोग किया था। और अब हम अपने स्वार्थ के लिये ही उनसे मोर्चे भी लेंगे। परंतु एशियावासी अपने आपसी झगड़े से विदेशियों को बंदर-बाँट का मौका कभी न देंगे। जापानियों को अभी ब्रह्मा की उत्तरी-पश्चिमी सीमा तक पहुँचने दो, उन्हें अपने स्वार्थ के लिये हमसे फिर मेल करना होगा।" रजनी मुस्किरा पड़ी, जैसे वह दिव्य दृष्टि से आगामी भविष्य के उज्ज्वल पृष्ठों को पढ़कर प्रसन्न हो रही हो।

"रजनी! तुम्हारी भविष्यवाणी सही निकले, लेकिन दुर्भाग्य से ऐसा न हुआ, तो ?"

"ऐसे बोल मुँह से न निकालो भैया। मेरा विश्वास गलत न निकलेगा। मै जो कुछ कह रही हूँ, उसका साक्षी इतिहास है। जापान और भारत पड़ोसी हैं, और भगवान् बुद्ध ने दोनो को एक ही धर्म और एक ही संस्कृति के गठबंधन मे बाँध दिया था। अत. दोनो सहज मित्र भी हैं। जापान इतना कृतघ्न नहीं है कि वह भारत के आध्यात्मिक ऋण को आज मौका पड़ने पर चुकाने मे पैर पीछे हटाएगा। फिर भी शमशेर भैया। क्या तुम भूल गए कि जापान और भारत, दोनो का इस समय एक ही दुश्मन है—अँगरेज।"

"ठीक है रजनी। लेकिन चीन भी तो जापान का पड़ोसी था, चीन ही के बौद्ध भिक्षु-भिक्षुणियो ने जापान जाकर सूर्य के उपासको को करुणा, प्रेम, अहिंसा, सत्य और विश्व-मैत्री का संदेश सुनाया था, तब फिर जापान भूखे गीध की तरह चीन को हड़प जाने को क्या इतनी नृशमता और निर्ममता के साथ उससे घेरा आ रहा है? यदि जापान संपूर्ण एशिया मे 'नई व्यवस्था' के स्वप्न को चरितार्थ करना चाहता है, तो क्या वह घृणा, ईर्ष्या और रक्तपात के ज़रिए पूरा हो सकेगा? जापान ने भारत का संदेश भुला दिया है। रक्तपात, घृणा, स्वार्थपरता, आत्मप्रसार बौद्ध धर्म के नहीं, किंतो बम-जैसे धर्म के ही अंगभूत हो सकते हैं। क्या यह झूठ है कि जापान सारे विश्व पर सूर्य का झंडा फहराने का स्वप्न नहीं देख रहा है?"

रजनी ने मुस्किराते हुए उत्तर दिया—"स्वप्न स्वप्न ही रहेगा, शमशेर भैया। स्वप्न का ठोस राजनीति मे कोई स्थान नहीं। ''जिस तरह इस युद्ध मे ही रूस 'धुरी राष्ट्रो' से नाता तोड़कर 'मित्र राष्ट्रो' का मित्र बन गया—उसी प्रकार ब्रिटेन और अमरिका के जापान के विरुद्ध युद्ध-घोषणा कर देने पर यदि चीन भी जर्मनी और इटली

के विरुद्ध युद्ध-घोषणा न करके जापान से मैत्री कर लेता, तो क्या जापान चीन का हाथोहाथ स्वागत न करता ? क्या ब्रिटेन ने ही चीन का हांगकांग बंदरगाह नहीं दबोच रक्खा है ? राजनीति में स्वप्नों की भाँति काल्पनिक आदर्शों की रक्षा भी संभव नहीं।"

"चीन केवल अपने आदर्शों की रक्षा के लिये ही जापान से नहीं लड़ रहा है। चीन तो अपनी दार्शनिक महनिद्रा में मौन था। उस पर पहला वार जापान ने ही तो किया—किसलिये किया, जानती हो ? इसलिये कि जापान को अपनी बढ़ती हुई आबादी को बसाने और रोजी देने के लिये नई भूमि की, नए देशों की जरूरत है। क्या तुमने उनके प्रचार-पोस्टर नहीं देखे, जिनके द्वारा हर जापानी युवक-युवती को दूसरे देशों में जाने को और वहाँ जाकर अपना अरुण ध्वज फहराने को प्रोत्साहित किया जा रहा है ?"

"ठीक है। लेकिन क्या सोलहवीं-सत्रहवीं सदी में ब्रिटेन ने अपने आर्थिक विस्तार के लिये दूर-दूर के शांति-प्रिय देशों को अपना गुलाम नहीं बनाया था ? क्या अमेरिका अपने आर्थिक साम्राज्य-विस्तार का स्वप्न नहीं देख रहा है ? क्या लेनिन का रूस विश्व में साम्यवाद का प्रचार नहीं करना चाहता ? जर्मनी और रूस की अनबन का क्या यही मुख्य कारण नहीं रहा है ?"

"यह तो कूटनीति है, रजनी बीबी !"

"मान गए। तो इसी कूटनीतिक दाँव-पेंच द्वारा हमें भी भारत-जननी का उद्धार करना है। जब जापान फिर हमारी मैत्री के लिये हाथ बढ़ाएगा, तो हमें उससे मैत्री करनी ही होगी। हम भी उसके दुश्मन के दुश्मन हैं।"

"देखो। पहले तुम्हारा अनुमान भी तो सही निकले।" शमशेर मुस्किरा पड़ा, जैसे वह यह कहना चाहता हो कि तुम्हारा अनुमान अभी तो ठीक नहीं निकलता दीखता।

रजनी ने समझा, चलो, शमशेर मेरी बात मान गया।

दोनो अपने-अपने विचारो मे मग्न हो गए। थोड़ी देर बाद दोनो उक्त गाँव की ओर चल पडे, क्योंकि अधिक देर तक वहाँ ठहरना खतरे मे खाली न था।

× × ×

शमशेर और रजनी जिस भारतीय के घर मे ठहरे थे, वह एक धनी पजाबी मुसलमान था। उसकी एकमात्र किशोर लड़की का नाम सलीना था। सलीना दो-एक दिन मे ही शमशेर और रजनी मे घुल-मिल गई। सलीना ने एक दिन रजनी से पूछा शमशेर के बारे मे कि वह तुम्हारे कौन हैं? उसने समझा था कि दोनो मियाँ-बीबी होंगे। रजनी ने उत्तर दिया—"कुअर साहब को मैं शमशेर भैया कहती हूँ। वह बहुत बडे देशभक्त हैं, और अपने स्वर्गदेश भारत को जल्दी-से-जल्दी आजाद होते देखना चाहते हैं।"

"ओह! मैं भी बड़ी वह हूँ ..मैंने तो कुछ और ही सोचा था।" सलीना ने अपने गुलाबी ओठो पर एक उँगली रखकर कुछ मुस्किराहट और कुछ अपनी नासमझी पर हँसी, और लज्जा के साथ कहा।

"क्या सोचा था तुमने, सलीना? कि...मैं "

"हाँ!" एक क्षण मुस्किराकर सलीना गभीर हो गई। फिर जिज्ञासा-भाव से पूछा—"माफ़ करना रजनी बाजी! उनकी कोई बहू नहीं हैं, क्या?"

"था जरूर, लेकिन है कि नहीं, इस बात को तो आज तक मैं भी नहीं जान सकी। भाभी का नाम लेते ही शमशेर भैया बड़े दुखी हो जाते हैं। देखो, तुम भी कहीं उनसे भाभी के बारे मे कुछ न पूछ बैठना। समझी?"

लेकिन एक दिन सलीना से न रहा गया। शमशेर को अकेला पाकर पूछ ही बैठी—"कुँअर साहब! एक बात पूछूँ, बुरा तो न मानोगे?"

"पूछो। भला, तुमसे भी मैं कभी बुरा मानता हूँ।" और शमशेर ने मुस्किराकर उसके गाल पर एक फुलका-सा चपत लगा दिया।

"पूछूँ? तुम बुरा जरूर मान जाओगे?"

"नहीं-नहीं। मैं फ़ौजी आदमी हूँ, गलत नहीं कहता।"

"फ़ौजी! फ़ौजी आदमी तो बड़े बुरे होते हैं। इस गाँव में तो फ़ौजी आदमियों का कोई यकीन ही नहीं करता।"

"लेकिन तुम्हारे अब्बाजान ने तो हम लोगों का यक़ीन कर लिया।"

"हाँ, इसलिये कि तुम हमारे देश के हो, और अँगरेजों के खूनी पंजे से उसे आजाद करना चाहते हो। आजाद हिंद फ़ौजवालों के लिये अब्बाजान के दिल में बड़ी इज्जत है।"

"सलीना, हम लोग उनकी इस मेहमानदारी को कभी नहीं भूल सकते।"

सलीना ने अपनी बात आगे बढ़ाते हुए कहा—'जब अँगरेज लोग सिंगापुर छोड़कर रंगून की तरफ़ भागे, तो एक अँगरेजी पलटन ने हमारे गाँव के पास डेरा डाला। पहले दिन आते ही उन लोगों ने गाँववालों को खूब बिस्कुट, मक्खन, सिगरेट और मुरब्बे बाँटे, जिससे गाँववाले मौक़ा पड़ने पर हमारा साथ दें, और हम पर यकीन करने लगें। फ़रवरी का महीना था, सिंगापुर का पतन नजदीक देखकर दक्षिण-पूर्वी एशिया के हाई कमांड का हुक्म हुआ कि सारी अँगरेजी फौज रंगून चलकर जापानियों से दूसरा जबर्दस्त मोर्चा बनाने के लिये एकत्र हो। गोरी पलटन ने भी यह हुक्म पाकर दूसरे ही दिन यहाँ से कूच कर दिया। जब गोरे जाने लगे, तो वे गाँव में आए, और यहाँ की सुंदर-सुंदर बहू-बेटियों को छाँट छाँटकर जीप लारियों में भरकर ले गए। मेरी पड़ोसिन और सहेली एक चीनी लड़की भी उनमें थी, जो इतनी सुंदर थी कि पूरी मेम-सी लगती थी।"

सलीना का इसके बाद गला भर आया, और पलकें भीग उठीं। वह चुप हो गई। उसकी आँखों में था गोरों के प्रति बेहद क्रोध और अपनी बहनों तथा सहेली के लापता हो जाने का अपार दु:ख। परंतु उसने, आँसू न गिर पड़ें इसलिये, अपना मुँह घुमा लिया।

शमशेर को भी गोरों पर गुस्सा आ रहा था, लेकिन अभी वह चुप था। सँभलकर बोला—"ठीक कहती हो, सलीना! फ़ौजियों का यक़ीन नहीं किया जा सकता।"

सलीना की बात अभी पूरी नहीं हुई थी। उसके हृदय के दबे हुए गुबार फिर ज्वालामुखी के लावे की भाँति उसके ओठों से निकलने लगे—"शमशेर भैया! एक हफ़्ते तक यही क्रम चालू रहा। भागती हुई अँगरेज पलटनें आतीं, और जो कुछ भी उन्हें हमारे गाँव से मिल जाता—पैसा, भोजन या औरत—उसी को उठाकर चलता होता। जब हम लोगों ने सुना कि सिंगापुर पर जापानियों का कब्ज़ा हो गया, तो हम लोगों ने सोचा कि ऐसे ज़ुल्मियों और लुटेरों को यही सज़ा मिलनी चाहिए। ..लेकिन हमारी क़िस्मत में इससे भी ज्यादा तकलीफ़ें लिखीं थीं। हमारे गाँव में जापानियों ने बम गिराए। हम लोगों ने बड़ी मुश्किल से अपनी जान बचाई। मेरी अम्मीजान का पैर भारी होने की वजह से वह भागकर तहख़ाने में न छिप सकीं, और हमारे मकान का पिछला हिस्सा नीचे बैठ गया, जिसमें उनका वहीं इतक़ाल हो गया।..." सलीना के आँसू झरने लगे।

शमशेर ने सलीना के आँसू उसकी ओढ़नी से पोछते हुए अपनी संवेदना प्रकट की। बात बदलने के लिये उसने पूछा—"अच्छा सलीना, यह बताओ कि तुम मुझसे क्या बात पूछ रही थी। मैं तुम्हें यक़ीन दिलाता हूँ कि ज़रा भी बुरा न मानूँगा।"

इतने ही में रजनी आ गई।

रजनी को देखकर सलीना को उसकी कही हुई बात याद आ गई, और वह "कोई बात नहीं, सच !" कहकर भाग गई।

"क्या कह रही थी सलीना, शमशेर भैया ! बड़ी नटखटी है।" रजनी ने सोचा कि सलीना ने आज मौका पाकर शमशेर को भाभी की याद दिला दी होगी। अगर देश का हर नवजवान अपनी प्रेयसी, पत्नी या वर की ही याद में आत्मविस्मृत हो रहेगा, तो उसके उद्धार के लिये, जननी की गुलामी की बेड़ियाँ काटने के लिये कौन आगे आएगा ? यही मौका है, जब पुत्रों को अपनी मा से, पतियों को अपनी पत्नी से, भाइयो को अपनी बहन से अलग होकर बमों और तोपों की गड़गड़ाहट, लड़ाकू विमानों की हरहराहट और लपटों-भरे पवन की सनसनाहट का कठोर रण-क्षेत्र में सामना करना होगा। बोली—"तुम पुरुष होकर भी दिल के बड़े कच्चे हो।"

"नहीं, रजनी ! मुझे अँगरेजों और जापानियों से दोहरा मोर्चा लेना होगा। अँगरेज़ हमारे देश का विजेता है। और जापानी हमारे देश के लिये नया आक्रमणकारी। विजेता और आक्रमणकारी दोनों ही हमारे लिये एक-से हैं। लेकिन हमें एक के विरुद्ध एक का साथ देना होगा। तुम ठीक कहती हो। लेकिन हमें पग पग पर इस बात के लिये सतर्क भी रहना होगा कि कहीं आक्रमणकारी हमारी देशभक्ति की भावना से अनुचित लाभ तो नहीं उठा रहा है।"

"जरूर ! जरूर !! मालूम होता है कि अब भारत-लक्ष्मी को, जो सात 'समुद्र पार' विदेशियों की कारा में पड़ी रुदन कर रही है, जल्द ही हम दिल्ली वापस ला सकेंगे।"

रजनी की बात खतम ही हुई थी कि एक जापानी कार सामने आकर रुकी। रजनी और शमशेर एक नारियल के कुंज के पास खड़े थे, जो कि सलीना के घर से एक फ़र्लांग की दूरी पर सड़क के किनारे ही था। कार से दो जापानी उतरे।

शमशेर आजाद हिंद फ़ौज की वेश-भूषा में था। जापानी जासूस-विभाग के अधिकारी थे। उन्हें संदेह हो गया था कि यह कोई भगोड़ा है। उन्होंने दूर ही से रिवाल्वर दिखाकर शमशेर और रजनी को ऊपर हाथ उठाने का आदेश दिया। शमशेर के पास रिवाल्वर इस समय न था। रजनी ने आशा की दृष्टि से शमशेर की ओर देखा। लेकिन शमशेर को ऊपर हाथ उठाते देखकर उसने भी लाचार होकर हाथ ऊपर उठा दिए।

दोनों पकड़ लिए गए।

कार रवाना हो गई। थोड़ी ही देर बाद सलीना जब वापस आई, तो देखा कि शमशेर और रजनी ओझल थे। उसने रानी-सी आवाज बनाकर 'शमशेर भैया! रजनी बीबी!' कहकर बहुत आवाजें लगाईं, लेकिन उसकी पुकार प्रतिध्वनि बनकर क्षितिज में लीन होकर रह गई।

जब उसने अपने अब्बा को यह खबर सुनाई, तो वह भी सुनकर सन्न रह गए। बूढ़ा व्यापारी मुँह ही-मुँह में भुनभुनाया—"फ़ौजी किसी के नहीं होते।"

सलीना को इस बात का दुःख रहा कि मैंने अपनी कहानी कहकर शमशेर भैया को दुःख पहुँचाया। शायद इसीलिये वह चले गए।

× × ×

२१ अक्टोबर, १९४३ ने भारतीय इतिहास की एक स्मरणीय घटना को जन्म दिया। उस दिन पहली बार लगभग २ शताब्दियों के बाद प्रवासी भारतीयों ने अपनी मातृभूमि की सीमा के बाहर गुलामी की तोड़ फेंककर आजादी का अनुभव किया। शोनान (सिंगापुर) ने दाइतोआ गेकिजो में २१ अक्टोबर को [illegible] एक महती जन-सभा हुई। मंच [illegible] [illegible] सजा [illegible] था। पीछे पृष्ठ-भूमि के कपड़े पर तिरंगा [illegible]

मानचित्र अंकित था, जिसके मध्य में चरखा-सुशोभित तिरंगा लहरा रहा था।

मानचित्र में भारत की सीमाओं के भीतर केसरिया रंग से लिखा था—"१८५७।" मंच के एक ओर एक ऊँची बल्ली पर रेशमी तिरंगा मारुत लहरियों में इठलाकर बातें कर रहा था।

स्याम, हिंदचीन, जावा, जापान, फिलिपाइन, मलाया और ब्रह्मा के भारतीय प्रतिनिधि इस सम्मेलन में आए थे। कम-से-कम ५,००० श्रोता वहाँ उपस्थित थे। उनमें एक दृढ़ निश्चय था, आजादी की अमर प्यास थी, और था लक्ष्य की प्राप्ति में एक अमिट विश्वास। कौन जानता था कि आजादी के आगमन का संदेश सुनकर ये निहत्थे, अस्थि-शेष दुर्बल नर-कंकाल रण-क्षेत्र में अजेय जैक-जापानी सेना के भी दाँत खट्टे कर देंगे।

मंच पर सर्वप्रथम भारत के चिरनिर्वासित क्रांतिकारी रासबिहारी घोष आए। करतल-ध्वनि के स्वागत के साथ ही सन्नाटा छा गया। आज के विशेष वक्ता और पूर्वी एशिया के भावी नेता श्रीसुभाषचंद्र बोस का परिचय देते हुए रासबिहारी ने कहा—'भारत-सरकार के गुप्तचर-विभाग और स्कॉटलैंड यार्ड को चकमा देकर एकाएक जन्म-भूमि से ओझल हो जानेवाले दुर्धर्ष साहसी और मनस्वी योद्धा सुभाषचंद्र बोस आज यहाँ हैं। पेशावर से काबुल, काबुल से बर्लिन और बर्लिन से होकर टाकिया और टोकिया से अब आज हमारे बीच मसीहा बनकर सुभाष आजादी का अमर पैगाम सुनाने आए हैं। मैं ३० साल से जन्मभूमि की गोद से दूर हूँ, लेकिन इतने अरसे में मैं जो कुछ नहीं कर सका, उसे चंद महीनों में ही हमारे नेताजी ने, मुझसे आयु में बहुत तरुण होते हुए भी, कर दिखाया। मैंने आजाद हिंद लीग का सारा भार इन तरुण और विशाल कंधों पर रख दिया है। नेताजी ने दूसरी आजाद हिंद फौज के निर्माण और संगठन का

दायित्व भी सँभाल लिया है। उन्हें पश्चिम के इस येरोपीय युद्ध की मोर्चेबंदी और युद्ध-कला का जैसा अच्छा अनुभव करने का अवसर मिला है, उसका उपयोग कर हमारी आजाद हिंद फौज का वह इस प्रकार सचालन करेंगे कि हमारी विजय मे हमे कोई सदेह नहीं।

"हम पूर्वी एशिया के २० लाख प्रवासी भारतीयो की ओर से नेताजी का स्वागत करते हैं।" [हर्ष-ध्वनि]

तदनतर कर्नल चटर्जी ने पूर्वी एशिया मे आजादी के आदोलन की रिपोर्ट पढी।

अत मे सुभाष बाबू मच पर आए।

माइक अपने महत्तम प्रवक्ता की आवाज को मैदान के चारो कोनो मे फैला देने के लिये सतर्क हो गया। अभिनदन के स्वर आसमान को चूमने लगे, परतु दूसरे ही क्षण प्रभुत्व देश की निस्तब्धता छा गई, जैसे शात ज्वालामुखी भीतर-ही-भीतर एक भीषण और उग्र विस्फोट की तैयारी कर रहा हो।

नेताजी के ओठ हिले—

स्वतत्र भारत की बहनो और भाइयो!

'आज हम दो सदियो की गुलामी के बाद पहली बार आजादी का त्योहार मनाने के लिये एकत्र हुए हैं। मृत्यु की काली रात बीत रही है, और हम जीवन को स्पदित करनेवाले प्रभात का स्वागत करने के लिये आए हुए हैं। भारत के भीतर एक तूफान आया, कितने ही अनमोल प्राण पत्ती बनकर झड गए, और वह तूफान आगे निकल गया। मातृभूमि की सीमाओ के बाहर भी एक प्रयत्न हुआ, लेकिन दुर्भाग्य से पूर्ण होने के बहुत पूर्व ही असफल हो गया। आजादी की बलि-वेदी पर शहीद हो जानेवाले उन सभी अपरिचित पुष्पो को मैं जाग्रत् भारत की श्रद्धाजलि अर्पित करता हूँ, जिनको हम, आप और हमारी आनेवाली पीढियाँ कभी न भूल सकेंगी"

एक क्षण के लिये नेताजी की आँखें सजल हो गईं। उन्होंने फिर दृढ़ता से कहना शुरू किया—

"हमें अभी और भी बलिदान करना है।

"लेकिन हमें आजाद होना है। आजादी के लिये हम कोई भी मूल्य चुकाने को तैयार हैं। रुपय-पैसा, प्राण और शरीर हमें अब अपनी माया में न उलझा सकेंगे, तूफान और बिजली हमारे कदम को पीछे न मोड़ सकेंगे, पराजय और क्षति से हमारी आशा न टूटेगी, हमारा साहस न उखड़ेगा। हम जननी के नाम की पवित्र कसम लेकर दिल्ली चलेंगे। रंगून में सोए हुए बूढ़े बहादुरशाह का मकबरा हमें पुकार रहा है—'तुम दिल्ली चलो।' दिल्ली का लालकिला ललकार-कर हमें बुला रहा है—'तुम दिल्ली चलो।' सन् सत्तावन की याद हमें आज सता रही है—'तुम दिल्ली चलो।"

जोश और उन्माद से पागल होकर श्रोताओं ने करतल-ध्वनि की। किसी ने बीच में ही आवाहन दिया—"इंकिलाब।"

भीड़ ने उत्तर दिया—"ज़िंदाबाद।"

नेताजी आगे बढ़े—

"दिल्ली बहुत दूर नहीं है।

"इन हरे-भरे चावल के खेतों के उस पार, बलखाती हुई नदियों और ऊँची-ऊँची पर्वत-श्रेणियों की ओट में, क्षितिज के पीछे, हमारी जन्मभूमि की ही भव्य झाँकी हमें देखने को मिलेगी। हमारी जन्म-भूमि विदेशी गोरों के बूट के नीचे पड़ी हुई छटपटाए और हम खड़े देखते रहें, यह अब नहीं हो सकता। दुःशासन भारत-जननी का आँचल बेशरमी के साथ खींचे और हम आँखें मूँद लें, यह भी नहीं हो सकता। हम जिएँगे, तो पूरी मान मर्यादा के साथ, नहीं तो हमेशा के लिये मिट जाना इससे अच्छा है। इसमें मुझे कोई संदेह नहीं कि इन बर्फ़ीली पहाड़ियों को पार करके जब हम अपने वतन

पहुँचेंगे, तो एक बार फिर क्रांति होगी और दूर गया हुआ तूफ़ान फिर लौट आएगा। इस तूफ़ान में अँगरेज़ी हुकूमत तार-तार होकर उड़ जायगी।"

नेताजी के चेहरे पर एक अटल विश्वास, अजेय तेज और दृढ़ निश्चय था।

उन्होंने शपथ ली—

"भगवान् को साक्षी कर मैं यह पवित्र शपथ लेता हूँ कि मैं सुभाषचन्द्र बोस हिंदोस्ताँ की आज़ादी के लिये अंतिम साँस तक एक सिपाही की तरह लड़ता रहूँगा। मैं हमेशा भारत का सेवक रहूँगा, और मेरे जीवन का एक ही लक्ष्य रहेगा—देश की आज़ादी और आज़ाद होकर उस आज़ादी की रक्षा। ज़रूरत पड़ी, तो मैं अपने खून की आख़िरी बूँद भी जननी के चरणों पर चढ़ा दूँगा।"

ऐसा अटल निश्चय सुनकर दसों दिशाओं के कान खड़े हो गए, पृथ्वी काँप उठी, और सागर में ज्वार आ गया।

'नेताजी ज़िंदाबाद!' और 'इंकिलाब', 'ज़िंदाबाद' के गगन-भेदी नारे गूँज उठे।

इसके बाद आज़ाद हिंद-सरकार के प्रत्येक अधिकारी ने आगे बढ़कर नेताजी के प्रति वफ़ादारी और देश की आज़ादी के लिए अपना बलिदान कर देने की शपथ ली। इसके बाद आज़ाद हिंद-सरकार का घोषणा-पत्र पढ़ा गया, जिसमें सिराजुद्दौला, हैदरअली, टीपू सुल्तान, अवध की बेगमों, झाँसी की रानी, तात्या टोपे और नाना साहब आदि शहीदों के नामों का उल्लेख करके अपील की गई कि तिरंगे झंडे के नीचे एकत्र होकर हम अपनी आज़ादी की अंतिम लड़ाई छेड़ दें, और तब तक लड़ें, जब तक अँगरेज़ भारत को छोड़कर चले न जायँ। घोषणा-पत्र में यह भी कहा गया था कि "

हिंद-सरकार हरएक हिंदोस्तानी के प्रति वफादार है, और हरएक हिंदोस्तानी को उसके प्रति वफादार होना चाहिए।

इसके बाद सबने मिलकर "जन-गण-मन-अधिनायक, जय हे भारत-भाग्य-विधाता।" गीत गाया और उसके स्वर आकाश में गूँज उठे।

जिस समय सिंगापुर में आजाद हिंद-सरकार की स्थापना की घोषणा हुई, ठीक उसी समय यहाँ से कहीं बहुत दूर शमशेर और रजनी कुछ अभागे चीनी और बर्मी कैदियों के साथ एक नजरबंद शिविर में अमानुषिक यंत्रणा से बेसुध हो रहे थे। उनके गुप्त स्थान से जल चढ़ा दिया गया था, जिससे एक-एक इंच ऊँची नसें फूल आई थीं, और प्रत्यक्ष यम-यातना की अनुभूति सहन न कर सकने के कारण वे अचेत हो गए थे।

× × ×

पूर्वी एशिया-सम्मेलन में जापान के प्रधान मंत्री जनरल तोजो ने अंडमन और नीकोबार द्वीप-समूहों को आजाद हिंद-सरकार को दे देने की घोषणा की, और ३० दिसंबर, ४३ को नेताजी ने वहाँ जाकर प्रथम बार तिरंगा झंडा लहराया। कर्नल लोकनाथन् वहाँ के प्रथम भारतीय गवर्नर नियुक्त हुए।

शमशेर और रजनी दोनों अंडमन के एक छोटे-से द्वीप में जन-पक्षी कलरव से बहुत दूर एक नजरबंद शिविर में अपने जीवन की अंतिम घड़ियाँ काट रहे थे। विजेता हो या आक्रामक, दोनों के विरुद्ध विद्रोह करने का एक ही दंड है—मौत या जीवित रहकर प्रतिपल मौत से भयानक यातनाएँ। जैसे देशभक्ति, आत्मरक्षा और स्वतंत्र विचारों की अभिव्यक्ति कोई नारकीय अपराध है, और अपराध भी ऐसा कि जिसके लिये कोई क्षमा नहीं मिलती। दोनों आजादी के दीवानों को यह आशा नहीं थी कि वे अपनी कष्ट-गाथा कहने के

लिये जीवित रहेंगे। उन्होंने जिस जल-यातना का केवल एक बार अभी तक अनुभव किया था, उस जल-यातना से जूझनेवाली गोरी औरतों, बर्मियों और गुरखों को नित्य ही छटपटा-छटपटाकर काल भैरव का सामना करना पड़ता था। कई नजरबंद भूख में तड़पा-तड़पाकर मार डाले गए थे। कइयों की देह में बार-बार बिजली छुआकर यन्त्रणा दी जाती थी।

नेताजी को जब इस नजरबंद शिविर में बंद भारतीयों की दुर्दशा के बारे में पता चला, तो उन्होंने शिविर के जापानी नायक को आदेश दिया—'हिंदोस्तानी कैदी तुरंत छोड़ दिए जायँ।"

शमशेर और रजनी, दोनों छूट गए। इन्हें सताने के अपराध में जापानी नायक ने गिड़गिड़ाकर नेताजी से क्षमा माँगी।

दोनों [illegible] आए।

सामर्थ्य-नुसार का शमशेर दूसरी आज़ाद हिंद फौज में शामिल हो गया, और नेहरू ब्रिगेड की छापामार रेजिमेंट नं० ४ में एक बटालियन का कमांडिंग अफसर बना दिया गया। कप्तान से अब वह मेजर हो गया। रजनी 'झाँसी की रानी' रेजिमेंट की एक सैनिका हो गई। उसने राइफल, टामीगन, मशीनगन, रिवाल्वर आदि चलाना, [illegible] कुछ सीख लिया। लेकिन मोर्चे पर जाने के लिये सैनिकाओं [illegible], नर्सों और परिचारिकाओं के रूप में ही 'झाँसी की रानी' रेजिमेंट की सदस्याएँ भाग ले सकती थीं। आम तौर पर उन्हें मोर्चे के पीछे, जहाँ फौज के चलते-फिरते अस्पताल रहते थे, वहीं रहना पड़ता था।

अराकान और उत्तरी ब्रह्मा की पहाड़ियों ने अँगरेजों के पैर उखड़ चुके थे। उन्होंने भारत की सीमा के भीतर भागकर शरण ली, और मणिपुर-क्षेत्र में जापानियों और आजाद हिंद फ़ौज से लड़ने के लिये जबर्दस्त मोर्चेबंदी की। इम्फाल को उन्होंने भारत का स्टालिन-ग्राड बना दिया।

तीन जापानी डिवीजनों के साथ आजाद हिंद फ़ौज के भी एक डिवीज़न ने २२ मार्च, १९४४ में मणिपुर-क्षेत्र में पहली बार कदम रक्खे। शमशेर ने भी अपनी बटालियन के साथ, जो इसी डिवीजन में था, आज लगभग दो वर्ष बाद अपनी मातृभूमि के पुनः दर्शन किए। आज उसे कोई गुलाम या दूसरों का टुकड़खोर नहीं कह सकता था, अब वह आजाद हिंद सरकार की एक स्वतंत्र प्रजा और मातृभूमि की आजादी की शपथ लेकर उसके उद्धार के लिये आगे बढ़नेवाला एक दीवाना सिपाही था। जापानी बममारों ने मणिपुर की पहाड़ियों पर बेदर्दी के साथ बम-वर्षा की। पहाड़ियों में दरारें पड़ गईं, गाँव और खेत की भूमि जलकर खाक हो गई, अँगरेजी और गुलाम भारतीय सेना अपने गुलाम पिट्ठुओं और नागरिकों को लेकर पीछे की ओर भाग खड़ी हुई। नागा और दूसरी जंगली जातियों ने सफ़ेद झंडे दिखलाए, बममारी बंद हो गई। पीछे से जापानी और आजाद हिंद सेनाएँ आगे बढ़ीं। उन्होंने गाँवों के बाद गाँवों पर कब्जा करना शुरू कर दिया। 'दिल्ली चलो, का स्वप्न साकार हो चला।

एक गाँव पर शमशेर के बटालियन ने भी कब्जा किया। गाँव-वालों ने अपने भारतीय साथियों का दिल खोलकर स्वागत किया। जंगली मदिरा, जंगली फल, अन्न और दवाएँ (जंगली जड़ी-बूटियाँ) उन्होंने उपहार में शमशेर को दीं। शमशेर ने भी मित्रता और आजादी का संदेश सुनाकर अपनी प्रजा को अभयदान दिया। गाँव के मुखिया ने भी बदले में उसे हर तरह की सुख सुविधा और

लिये जीवित रहेंगे। उन्होंने जिस जल यातना का केवल एक बार अभी तक अनुभव किया था, उस जल-यातना से चीखनेवाली चीनी औरतों, बर्मियों और गुरखों को नित्य ही छटपटा-छटपटाकर काल भैरव का सामना करना पड़ता था। कई नजरबंद भूख में तड़पा-तड़पाकर मार डाले गए थे। कइयों को देह में बार-बार बिजली छुआकर यन्त्रणा दी जाती थी।

नेताजी को जब इस नज़रबंद शिविर में बंद भारतीयों की दुर्दशा के बारे में पता चला, तो उन्होंने शिविर के जापानी नायक को आदेश दिया—"हिंदोस्तानी कैदी तुरत छोड़ दिए जायँ।"

शमशेर और रजनी, दोनों छूट गए। इन्हें सताने के अपराध में जापानी नायक ने लिखकर नेताजी से क्षमा माँगी।

दोनों रंगून आए।

स्वास्थ्य-सुधार कर शमशेर दूसरी आजाद हिंद फौज में शामिल हो गया, और नेहरू ब्रिगेड की छापामार रेजिमेंट नं० ४ में एक बटालियन का कमांडिंग अफ़सर बना दिया गया। कप्तान से अब वह मेजर हो गया। रजनी 'झाँसी की रानी' रेजिमेंट की एक सैनिका हो गई। उसने राइफल, टामीगन, मशीनगन, रिवाल्वर आदि चलाना, सभी कुछ सीख लिया। लेकिन मोर्चे पर जाने के लिये सैनिकाओं के रूप में नहीं, नर्सों और परिचारिकाओं के रूप में ही 'झाँसी की रानी' रेजिमेंट की सदस्याएँ भाग ले सकती थीं। आम तौर पर उन्हें मोर्चे के पीछे, जहाँ फौज के चलते फिरते अस्पताल रहते थे, वहीं रहना पड़ता था।

मोर्चे पर जाकर अँगरेजों के दाँत खट्टे करने की लालसा रजनी के मन में ही रह गई। वह क्या करती, मोर्चे पर जाने की आज्ञा ही नेताजी ने न दी।

× × ×

अराकान और उत्तरी ब्रह्मा की पहाड़ियों ने अँगरेजों के पैर उखड़ चुके थे। उन्होंने भारत की सीमा के भीतर भागकर शरण ली, और मणिपुर-क्षेत्र में जापानियों और आजाद हिंद फ़ौज से लड़ने के लिये जबर्दस्त मोर्चेबंदी की। इम्फाल को उन्होंने भारत का स्टालिनग्राड बना दिया।

तीन जापानी डिवीजनों के साथ आजाद हिंद फ़ौज के भी एक डिवीजन ने २२ मार्च, १९४४ में मणिपुर-क्षेत्र में पहली बार क़दम रक्खे। शमशेर ने भी अपनी बटालियन के साथ, जो इसी डिवीजन में था, आज लगभग दो वर्ष बाद अपनी मातृभूमि के पुनः दर्शन किए। आज उसे कोई गुलाम या दूसरों का टुकड़खोर नहीं कह सकता था, अब वह आज़ाद हिंद सरकार की एक स्वतंत्र प्रजा और मातृभूमि की आजादी की शपथ लेकर उसके उद्धार के लिये आगे बढ़नेवाला एक दीवाना सिपाही था। जापानी बममारों ने मणिपुर की पहाड़ियों पर बेदर्दी के साथ बम-वर्षा की। पहाड़ियों में दरारें पड़ गईं, गाँव और खेत की भूमि जलकर खाक हो गई, अँगरेजी और गुलाम भारतीय सेना अपने गुलाम पिट्ठुओं और नागरिकों को लेकर पीछे की ओर भाग खड़ी हुई। नागों और दूसरी जंगली जातियों ने सफ़ेद झंडे दिखलाए, बममारी बंद हो गई। पीछे से जापानी और आजाद हिंद सेनाएँ आगे बढ़ीं। उन्होंने गाँवों के बाद गाँवों पर कब्जा करना शुरू कर दिया। 'दिल्ली चलो, का स्वप्न साकार हो चला।

एक गाँव पर शमशेर के बटालियन ने भी कब्ज़ा किया। गाँव-वालों ने अपने भारतीय साथियों का दिल खोलकर स्वागत किया। जंगली मदिरा, जंगली फल, अन्न और दवाएँ (जंगली जड़ी-बूटियाँ) उन्होंने उपहार में शमशेर को दीं। शमशेर ने भी मित्रता और आजादी का संदेश सुनाकर अपनी प्रजा को अभयदान दिया। गाँव के मुखिया ने भी बदले में उसे हर तरह की सुख सुविधा और

सहायता देने का वचन दिया। जिन गरीबों का बम-वर्षा में कुछ नुकसान हुआ, उनके साथ शमशेर ने पूरी सहानुभूति प्रकट की, और कहा—"देश की आजादी के लिये हम अभी तो इससे भी बड़े बलिदान करने होंगे। हम जापानियों के साथ विभीषण बनकर नहीं आए हैं। अगर हमको उन्होंने भी धोखा दिया, तो हम उनसे भी लड़ेंगे। आप सब लोग आजाद हिंद-सरकार की स्वतंत्र प्रजा हैं, और आप लोगों को उसकी छत्रच्छाया में रहकर पूरे नागरिक अधिकार प्राप्त होंगे। हम जीते गए भू-भाग में शांति स्थापना करने और आप सब लोगों की सुरक्षा का भार लेने के लिये नेताजी के सामने वचनबद्ध हैं। हमारे रहते कोई भी आपका बाल बाँका न कर सकेगा। आप निर्भय होकर घूमिए, और अपने काम काज कीजिए।"

इस गाँव में रहकर शमशेर और उसके देशभक्त बहादुर साथियों ने अपने चारों ओर की भौगोलिक स्थिति की जानकारी प्राप्त कर ली। इस गाँव के पश्चिम की ओर कुछ दूर चलकर एक ऊँची पहाड़ी थी। बम-वर्षा से उसमें दरारें पड़ गई थीं। ऊपर जंगल था, जो बहुत कुछ झुलस गया था। पूर्व की ओर भी एक छोटा-सा जंगल था। कुछ खेती-बारी की जमीन और आस-पास चारों ओर नदी-नाला, झाड़ियाँ आदि की बहुतायत थी। उत्तर की ओर एक पहाड़ी रास्ता था, जो इम्फाल की ओर जाता था।

वायु-वेग से जापानी और आजाद हिंद सेनाएँ आगे बढ़ीं। कुछ ही हफ्तों में इम्फाल अँगरेजों के हाथ से निकल गया।

सारे जीते गए प्रदेश के शासन का भार कर्नल मल्लिक ने आजाद हिंद-दल की सहायता से सँभाल लिया। इम्फाल पर तिरंगा और जापानी झंडा, दोनों साथ-साथ लहरा दिए गए। शमशेर भी अपने बटालियन के साथ इम्फाल पहुँचा, और उसने भी विजयोत्सव में भाग लिया।

सारे इम्फाल मे आजाद हिंद फौज ने अपने बेंड के साथ प्रदर्शन किया, और उसी दिन एक विशाल पैरेड के समय यह घोषणा की गई कि इम्फाल अब आजाद हो गया, और उस पर अब से आजाद हिंद-सरकार की ओर से कर्नल मल्लिक शासन करेंगे।

इम्फाल उस समय पूरा-का-पूरा श्मशान हो चुका था। नागरिकों ने इसे दो महीने पहले ही खाली कर दिया था। यत्र-तत्र सड़कों पर भागते हुए नागरिकों, गोरों और उनके टुकडखोर भारतीय सिपाहियों की मांसपेशियाँ, शव और हड्डियाँ बिखरी पड़ी थीं। चारों ओर फैले हुए मलबे और खँडहरों को देखकर यह मालूम होता था कि कोई २,००० वर्ष पुराना नगर अपने भग्नावशेष पर आँसू बहा रहा हो।

इस सर्वनाश के दृश्य मे शमशेर का दिल क्लांत और आँखें सजल हो गईं। लेकिन आजादी के लिये अपनी मातृभूमि की यह बरबादी भी आँखों मे उसे देखनी ही होगी। उसे आंतरिक ठेस लगी—दिल पर और गहरी। उसके सभी साथी विजयोत्सव मनाकर आगे बढ़े। वह वहीं ठहर गया। उसे कुछ बुखार-सा आ गया था। मलेरिया धीरे-धीरे फैलने लगा था, और एक-एक कर कई दूसरे सिपाही भी ज्वर मे पड़ रहे। अँगरेज पीछे भागते समय मलेरिया के कीटाणु आस-पास के नदी नालों और तालाबों मे छोड़ गए थे।

कोहिमा का मोर्चा शुरू हो गया।

मई से ही मूसलाधार वर्षा शुरू हो गई थी। पहाड़ी नाले और नदियाँ उमड़ आईं। एक जगह से ठीक सामने के स्थान पर पहुँचने के लिये या तो फौजियों को घूमकर आगे बढ़ना होता या फिर बटे-बटे रस्सों के सहारे या अस्थायी पुल बनाकर नदी-नालों को पार करना पड़ता। चप्पे-चप्पे के लिये आजादी के दीवानों और जापानियों को अँगरेजों से लड़ना पड़ता। बरसात, उमड़े हुए नदी-नालों, मच्छड़ों की बाढ़, मलेरिया के प्रकोप और अनजान पहाड़ियों

और खूँखार जगली जानवरों ने उनकी तीव्र गति में शिथिलता पैदा कर दी। इधर रसद पहुँचने में भी दिक्कत होने लगी। जापानी हाई कमाड ने हुक्म दिया कि जब तक मौसम हमारे प्रतिकूल है, हम आक्रमणात्मक युद्ध न करके रक्षात्मक युद्ध ही लड़ेंगे। फौज ने शिविर डाल दिए।

× × ×

सलीना और उसका बूढ़ा बाप, दोनो हज करने जा रहे हैं। जहाज पर सवार होकर मक्का-मदीना को नहीं, बैलगाड़ी पर सवार होकर आरजी हुकूमत-ए हिंद की राजधानी रगून को। बूढे ने आखिरी वक्त जानकर अपनी बेटी से यह इच्छा प्रकट की थी कि मै मसीहा बनकर आए हुए नेताजी के दर्शन करना चाहता हूँ, और यह चाहता हूँ कि इस कारूँ के खजाने को उनके कदमों पर डाल दूँ, जिससे मै तो नहीं, तू और तेरे दूसरे करोड़ो भाई-बहन आजादी का महताब हिंदोस्तान के ऊपर रोशन होता देख सकें।

यह कहते हुए बूढे सौदागर की आँखें चमक उठी थीं, और चेहरे पर आशा और उल्लास के रग दौड़ पडे थे। सलीना भी नेताजी के दर्शन करने को बहुत उत्सुक थी। उसे अपने अब्बाजान के इस इरादे को सुनकर बेहद खुशी हुई। बोली—"जरूर, अब्बाजान। हिंदोस्तान को छोडे मुद्दतें बात गईं, लेकिन वह अपना ही तो मुल्क है। जिस दिन कप्तान हडसन ने दिल्ली के आखिरी शहशाह बहादुरशाह के मासूम बेटा का बेदर्दी के साथ कत्ल किया, तभी से तो हम लोग दर-दर की ठोकरें खाते हुए अपने मुल्क मे इतनी दूर आ पहुँचे हैं। परवरदिगार आजाद हिंदोस्तान के दर्शन आपको भी बख्शेगा, अब्बाजान। नेताजी के साथ हम लोग भी दिल्ली चलेंगे।"

"क्या सचमुच, सलीना बेटा।" जैसे कि नजदीक आती हुई मौत बूढे सौदागर को तब तक की मोहलत और देने जा रही है, जब तक

कि दिल्ली फिर नजदीक नहीं आ जाती। बूढे ने कई बार मुस्कराते हुए दोहराया—"क्या सचमुच, सलोना बेटा!" और उसके हाथ इस बीच अपनी बेटी के दोनों कंधों पर थे।

सलोना सोच न पाई कि मैं क्या उत्तर दूँ, लेकिन उसके मुँह से निकल ही पड़ा—"सचमुच, अब्बाजान।"

"तो फिर तुरत चलो रंगून। कल सवेरे ही चलेंगे।"

और दोनों रंगून को चल पड़े थे। दो बैलगाड़ियों पर सोना, हीरे-जवाहरात और मोती लदवाकर तथा अगली पर स्वयं बैठकर। हर एक बैलगाड़ी पर दो-दो सशस्त्र रक्षक भी थे।

कई दिन, कई रात चलने के बाद भी रंगून अभी कोई ५० मील रह गया था। रास्ते में छोटे-मोटे कई संघर्ष भी करने पड़े, लेकिन कोई ख़ास दुर्घटना नहीं हुई थी। सलोना का कारवाँ बढ़ता ही रहा। दुर्भाग्य से समुद्र से निकलकर नदी में जहाज डूबने की कहावत सिद्ध हुई। कुछ बर्मी डाकुओं ने एक झाड़ी से निकलकर इस क़ाफ़िले पर हमला कर दिया। काफिला रुक गया। रक्षकों और डाकुओं में जमकर लड़ाई हुई। बूढे सौदागर ने भी संघर्ष में भाग लिया, और उसने अपने रिवाल्वर से कई डाकुओं को मार गिराया। लेकिन इतने ही में एक गोली उसके सीने में लगी, और वह वहीं ढेर हो गया, उसकी आँखें नेताजी के दर्शन के लिये खुली ही रह गईं।

थोड़ी ही देर में डाकुओं ने सारी दौलत और सलोना पर कब्जा कर लिया। सलोना के हाथ पैर बाँध दिए गए।

डाकुओं के सरदार को जब यह मालूम हुआ कि वह दौलत पड़ोसी हिंदोस्तान के लिये आज़ादी की लड़ाई लड़ने को नेताजी को भेंट करने के लिये ले जाई जा रही थी, तो उसे इस घटना से बड़ा दुःख हुआ। उसने तुरत सलोना के बंधन खुलवा दिए। सरदार

नेताजी के प्रति अटूट श्रद्धा रखता था। उसने सलीना से माफ़ी माँगी, और उसके वालिद के मारे जाने पर शोक प्रकट किया। उसने अपने दो आदमी देकर तथा अपनी ओर से एक तलवार नेताजी के लिये भेंट में देकर सलीना को रंगून के लिये विदा कर दिया।

× × ×

शमशेर अब अच्छा हो गया है।

वह अभी अस्पताल ही में है, और उसी अस्पताल में, जहाँ अब से लगभग तीन महीने पहले अँगरेजी फौज के घायलों की चिकित्सा हुआ करती थी। अंतर केवल इतना ही था कि अब वह अस्पताल आजाद हिंद फौज के कब्जे में था, और उसकी चोटी पर यूनियन जैक की जगह तिरंगा लहराया करता था। अस्पताल के डॉक्टर और नर्स भी आजाद हिंद फौज की ही थीं। रजनी भी डॉक्टरी दल के साथ मोर्चे पर आई थी, और उसकी नियुक्ति इम्फाल के इसी अस्पताल में हो गई थी। रजनी की तीमारदारी और लगन से शमशेर फिर उठ खड़ा हुआ।

कोहिमा के मोर्चे पर अँगरेजों की जीत हुई। अमेरिकन सेना उसकी मदद के लिये आ पहुँची थी। जापानी और आजाद हिंद फौजी पीछे हटने लगे। मेजर जनरल शाहनवाजखाँ का आदेश था कि सारी आजाद हिंद फौज इम्फाल में इकट्ठी हो। वहाँ से फिर आक्रमणात्मक रुख ग्रहण किया जायगा।

शमशेर को जब इस प्रत्यावर्तन का पता चला, तो उसका मन खौल उठा।

"रजनी! यह बहुत बुरी खबर है। कोहिमा की हार ने हमारे पैर उखाड़ दिए हैं। 'दिल्ली चलो' की पुण्य शपथ लेकर आगे बढ़नेवाली अजेय आजाद हिंद फौज ने आज दिल्ली की ओर से अपना मुँह मोड़ लिया है। यह प्रत्यावर्तन रोकना होगा, रजनी!"

"जरूर, शमशेर भैया।"

"नेताजी ने कहा है—"हमें दिल्ली जाना है। हमें उनका स्वप्न पूरा करना होगा।"

"बेशक। दिल्ली अब दूर नहीं है। मैं यहाँ से देख रही हूँ—वह क्षितिज पर लालकिले के ऊँचे कगूरे दिखाई पड़ रहे हैं, उस पर अभी यूनियन जैक लहरा रहा है, लेकिन हमें उस पर तिरंगा फहराना होगा। गंगा और यमुना की हरी-भरी घाटी हमें अपनी गोद में बुला रही है। संसार का सबसे ऊँचा शिखर गौरीशंकर हमारे अभिनंदन के लिये युगों से हमारी राह देख रहा है। शमशेर भैया।"

"रजनी।" एक क्षण चुप रहकर शमशेर फिर बोला—"मैं भरपूर कोशिश करूँगा कि पीछे लौटनेवाले हमारे पैर यहीं पर जम जायँ। कौन होते हैं ये विदेशी अँगरेज और अमेरिकावाले हमें हमारे ही मुल्क से पीछे हटानेवाले। रजनी! मैं नेताजी के नाम से दिल्ली जाने को प्रस्तुत हूँ। जीते जी मेरे कदम इम्फाल से पीछे न हटेंगे।"

"भारत-भाग्य श्री की जय हो। मातृभूमि को तुम पर गर्व है शमशेर भैय!" रजनी शमशेर को मंगल आशीर्वाद देती हुई चली गई।

शमशेर ने फिर से अपने बटालियन का चार्ज ले लिया। कोहिमा क्षेत्र से सारी आजाद हिंद फौज और जापानी डिवीज़न लौट आए थे। जापानी हाई कमान का इरादा था कि इम्फाल में शत्रु-प्रतिरोध के लिये थोड़ी-सी सेना छोड़ दी जाय, और बाकी लोग और भी पीछे हटकर वर्षा बीत जाने पर फिर इम्फाल पर आक्रमण करें। बरसात के कारण रसद और गोला-बारूद तथा अस्त्र-शस्त्र ठीक समय पर नहीं पहुँच पा रहे हैं।

डिवीजन कमांडर मेजर जनरल शाहनवाजखां भी जापानी हाई

कमान के निर्णय के विरुद्ध काम नहीं करना चाहते थे, लेकिन उन्हें भारत से वापस लौटने में हार्दिक ग्लानि हो रही थी। उनका ख्याल था कि सारी विघ्न-बाधाओं के होते हुए भी हमें आक्रमणात्मक युद्ध जारी ही रखना चाहिए। फिर अँगरेजों का प्रतिरोध तो कम-से-कम बहुत ही जबर्दस्त होना चाहिए। जापानी हमारे साहस और उत्साह को ढीला न करें।

शमशेर ने मेजर जनरल साहब से मिलकर शत्रु-प्रतिरोध और मौका पाकर शत्रु पर आक्रमण करने की भी अनुमति प्राप्त कर ली।

शमशेर जिस छापामार रेजिमेंट में था। वह पूरा-का पूरा मोर्चे पर भेज दिया गया। शमशेर के बटालियन ने सबमें अगले मोर्चे को सँभाला।

× × ×

इम्फाल नगर से १० मील उत्तर—एक पहाड़ी नाले के पास शमशेर का बटालियन छिपा हुआ है। प्रकृति ने ही पहले से उसके लिये जैसे खंदकें और खोहें तैयार कर ली थीं। सभी सिपाहियों के हैट, पीठ और पेट पर पेड़ों की टहनियाँ और पत्तियाँ बँधी हुई हैं, और यदि वे बिना हिले डुले कहीं भी बैठ जायँ, या पड़ रहें तो शत्रु के नीचे उड़नेवाले विमान भी उन चलती-फिरती झाड़ियों को पहचानने में गलती कर जाते थे।

नाले के उस पार की पहाड़ी की ओर अँगरेजी सेना के बढ़ने की सूचना एक नागा जासूस द्वारा शमशेर को मिल चुकी है।

प्रतिरोध का प्रथम श्रीगणेश यहीं से होनेवाला है।

शमशेर अपनी जान की परवा किए बिना एक पहाड़ी की चोटी पर चढ़ गया। वह अस्त्र-शस्त्र से अच्छी तरह लैस है। उसने अपनी दूरबीन से सामने की ओर देखा। शत्रु की सेना कोई तीन मील की दूरी पर पड़ाव डाले पड़ी थी। उसने देखा कि कुछ शत्रु बममार

इस नाले की ओर आ रहे हैं। मालूम होता है, ज सूमी करके पैसा कमानेवाले नागो ने हमारे पड़ाव के यहाँ होने की खबर दुश्मनो तक पहुँचा दी है।

बटालियन इस समय अपने खाने-पीने की तैयारी कर रहा था, और हरी लकड़ियों के जलने से धुआँ काफी उठ रहा था। शमशेर इस खतरे को देखकर सन्न रह गया। लेकिन तुरत उसने बेतार के तार के ट्रासमिटर मे बटालियन को आदेश दिया—'आग बुझा दो। धुँआ न उठने पावे। दुश्मन के जहाज आ पहुँचे हैं। सब लोग छिप जायँ।"

बटालियन सावधान हो गया। दूर से ही घर्र-घर्र की आवाज सुन-कर जंगली जानवर पेड़ो और झाडियो के नीचे दुबककर खडे हो गए। जहाज आ पहुँचे। कुल छ थे। शमशेर कुछ आड लेकर इस प्रकार लेट गया था कि वह तो विमानों के अँगरेज चालकों और अन्य सैनिकों को देख सकता था, परतु उसे विमानवाले कोई भी नहीं।

शत्रु के जहाजो ने नाले के ऊपर काफ़ी नीचे उड़कर चक्कर लगाने शुरू कर दिए। धुआँ पूरी तरह शात न हुआ था। दुश्मनों को शक हो गया कि या तो यहाँ जापानी सेना है या फिर कोई आजाद हिंद फ़ौज की टुकड़ी। हवाई जहाज से बम बरसने लगे। पहला हवाई जहाज ज्यों ही चक्कर दोहराने के लिये शमशेर के टीले के पास से निकला कि उसने अपनी मशीनगन सँभाली। जहाज मार को रेंज मे था, चालक और उसका साथी, दोनो पहले ही फ़ायर मे न्ति हो गए। चालक-हीन विमान नाले मे जा गिरा। बमों के फटने से नाले का पानी बड़ी ऊँचाई तक उछला, और पानी की सतह पर आग लग गई। शमशेर को समझते देर न लगी कि जहाज मे पेट्रोल और सोडियम बम भी थे, जिनके कारण पानी मे भी आग लग गई थी।

एक साथी जहाज के गिरने के साथ दूसरा और और तीसरा जहाज

भी शमशेर की अचूक मार के शिकार हो गए। मशीनगन का जवाब मशीनगनों से मिलने मे कई गोलियाँ उसकी ओर आईं, लेकिन सब बेकार गईं। उसका बाल भी बाँका न हुआ।

दूसरे हवाई जहाज भाग खड़े हुए।

शमशेर ने रेडियो ट्रांसमीटर फिर सँभाला, और उसने सूचना दी कि खतरा दूर हो गया। साथ ही यह भी आदेश दिया कि बटालियन शीघ्र ही शत्रु-सेना का मुक़ाबला करने के लिये भोजन करके तैयार हो जाय।

शमशेर नीचे उतरा, तो उसके साथियो ने 'मेजर साहब! जिंदाबाद!!' और 'आजाद हिंद जिंदाबाद!!' के नारो से उसका जोरों के साथ अभिनंदन किया। रेजिमेंट-कमांडर ने उसे अपनी गोद मे उठा लिया।

तीसरा पहर होते-होते सब लोग भोजन करके तैयार हो गए, और उन्होने अपना मुक़ाम बदल दिया। शमशेर ने चलते वक्त वहाँ की झाड़ियो मे जान-बूझकर आग लगवा दी, जिसमे दुश्मन धोखे मे आ जाय। थोड़ी देर बाद एक दर्जन बममार और लड़ाकू जहाज उसी जगह पहुँचे, और इस बार खूब अधाधुंध बम-वर्षा की।

पीछे से एक टैंक-कंपनी आ पहुँची झाड़ियों को पीसती, पेड़ों को उखाड़ती और चारों ओर तेजी से दौड़-दौड़कर गोले फेंकती हुई। लक्ष्य हाथ से निकल चुका था। लेकिन नाले की प्राकृतिक खंदकें फट गईं, और चारो ओर दावानल-सा फैल गया। अमेरिकन कर्नल ने समझा कि उसके हाथ बहुत बड़ी विजय लगी। दुश्मन का एक मुकाम साफ़ हो गया।

टैंक-कंपनी आगे बढ़ी। थोड़ी दूर पर एक सुरक्षित स्थान देखकर साँझ को उसने पड़ाव डाल दिया।

शमशेर ने तत्काल सदर मुक़ाम को ट्रांसमीटर द्वारा सूचना भेज

दी कि शत्रु-सेना बहुत बड़े परिमाण में पूरी तैयारी के साथ आगे बढ़ रही है। मालूम होता है कि अमेरिकन सेना भारी तादाद में अँगरेजों की मदद के लिये आ पहुँची है। हम लोग उसके मार्ग में जितनी भी बाधाएँ हो सकेंगी, डालेंगे। प्रत्यावर्तन न करके शत्रु का सामना किया जाय। हमारे गुरिल्ले अभी अंतिम साँस तक उन्हें क्षति पहुँचाने में कोई कोर-कसर न उठा रक्खेंगे।

शमशेर ने निश्चय किया कि इस टैंक-कंपनी की रसद को लूट-कर उसे पंगु बना दिया जाय। उसने अपने बटालियन के गुरिल्लों को उन सभी संभव मार्गों पर तैनात कर दिया, जिनसे कि रसद ले जानेवाले ट्रक जा सकते थे। ज्यों ही फौजी ट्रक रसद या शस्त्रास्त्र लेकर उधर से निकलते कि गुरिल्ले उनके पहियों के टायरों पर फ़ायर करके ट्यूबों को बर्स्ट कर देते और ट्रकों के आगे न बढ़ सकने पर उन्हें लूटकर नौ दो ग्यारह हो जाते और जंगलों में छिप रहते। काले रक्षकों से जब तक छोटा-मोटा संघर्ष भी करना पड़ता, विजय गुरिल्लों की ही होती। गुरिल्ला के साथी भी प्रायः मारे जाते, और इस प्रकार उनकी संख्या लगातार लड़ते रहने से धीरे-धीरे घटने लगी।

दो दिन बीत जाने पर शमशेर को सूचना मिली कि शत्रुओं की एक भारी सेना ने आस-पास के सारे क्षेत्रों पर कब्ज़ा कर लिया है। उसे इस बात से निराशा हो रही थी कि हाई कमान का रेडियो पर यह आदेश आ गया था कि रेजिमेंट इम्फाल वापस आ जाय। आजाद हिंद फौज डिवीज़न शीघ्र बर्मा लौट रहा है। नेताजी का लिखित आज्ञा-पत्र आया है कि हम लोग इस समय वापस लौट चलें।

इस आदेश को सुनकर शमशेर की आँखें छलछला उठीं। सारे रेजिमेंट को अपने निश्चय में परिवर्तन करने को बाध्य होने में

बहुत दु:ख हुआ। लेकिन नेताजी का हुक्म था, जिसकी उपेक्षा किसी से भी संभव न था। सुप्रीम कमांडर जिस वेग में आगे बढ़ने का आदेश देता है, उसी प्रकार वह अपनी सेना को समय पड़ने पर युद्ध-श्री को अपने अनुकूल बनाने के लिये कुछ पीछे हटकर पुनस्संगठित होने का भी आदेश देता है। युद्ध कला और रण-नीति केवल सिद्धांतों और आदर्शों का निर्जीव अनुकरण नहीं, जीवन और मरण की कठोर व्यावहारिकता में वे परिचालित होती हैं। आगे बढ़ना और पीछे हटना—पीछे हटकर पहले की अपेक्षा और भी आगे बढ़ जाना इसमें हमारी पराजय नहीं। फिर आगे न बढ़ने के उद्देश्य से पीछे हटना कायरता है, भीरुता है। शमशेर को इससे संतोष हुआ कि हम तो पीछे हटकर सिर्फ अपने सर्वोच्च कमांडर की आज्ञा का पालन-मात्र करेंगे। हम सैनिक हैं। अनुशासन मानना हमारा धर्म है।

शमशेर और अवशिष्ट रेजिमेंट ने सजल नेत्रों से बंदी भारत माता को—जन्मभूमि को—प्रणाम किया, और अपना कदम पीछे मोड़ दिया। उन्होंने भारी दिल से 'कदम कदम बढ़ाए जा' का कूच-गीत गाया, परंतु उनके स्वर अस्पष्ट होकर लड़खड़ा रहे थे। उनके कदम पीछे हटते हुए काँप रहे थे। उनका मन धीरे-धीरे घोर अवसाद और थकावट से बैठता-सा जा रहा था। परंतु नेताजी का आदेश था—उन्हें पीछे हटना ही था। आजादी के भूखे मौत की घाटी में भी घुसने से नहीं डरते थे। लेकिन मौत उनके तेज, शौर्य और अदम्य साहस से काँपती थी। वह निकट आने का साहस न कर सकती थी। वह उनके साथियों को मार सकती थी, उनके शरीर को छीन सकती थी—लेकिन वह आजाद हिंद फौज का और उसके अमर सैनिकों का नाम पृथ्वी के आंचल से नहीं मिटा सकती थी।

लेकिन पीछे लौट पड़ने में ही संभावित विपत्तियों के बादल नहीं टल जाते।

दो दिन मजे में बीत गए।

वे लोग रात को ही चलते थे, और दिन में किसी नाले या जंगल में छिप रहते थे। सामान और अस्त्र-शस्त्र उनके पास बहुत कम रह गए थे; रसद सिर्फ एक दिन का और रह गया था। उनकी राइफलें, टामीगनें और ब्रेनगनें बिना मरम्मत के अधिकांश बेकार हो गई थीं। लूटी हुई सामग्री में गोली-बारूद, सुरंगों आदि की ही अधिकता थी, जो उनके अधिक काम की न थी। बिना हथियारों के उनका क्या उपयोग। तोपखाने, टैंक या बड़े-बड़े ट्रेंचमार्टर तो उनके पास थे नहीं। सवारी के लिये ट्रक, बख्तरबंद, गाड़ियाँ, कारें या मोटर साइकिलें भी उनके पास न थीं। उन्हें पैदल ही लौटना था, और जो कुछ सामान या हथियार उनके पास थे, उन्हें पीठ पर लादकर। कुछ पहाड़ी खच्चर और घोड़े उनके पास जरूर थे, जो उनके बड़े काम आते थे। इम्फाल अभी दो-तीन मंज़िल बाकी था—और झाड़-झंखाड़, ऊँची-नीची पहाड़ी भूमि, बरसाती नदी-नाले, और जंगली पशु उनके सामने थे। मुख्य पगडंडियों और मार्गों से उनके लिये लौटना खतरे से खाली न था। शत्रु के विमान बहुत नीची उड़ान भरते थे, और अब तक इम्फाल पहुँचकर कई बार बमबारी कर आए थे—

तीसरे दिन एक पेड़ पर काली सेना की ओर से एक तख्ती लटकी दिखाई पड़ी। उस पर लिखा था—

"तुम जापान की गुलामी क्यों करते हो? तुम मुल्क के विभीषण क्यों बनते हो? तुम नमकहरामी न करो।

"तुम्हें हम अच्छे कपड़े, बिस्कुट, रोटी, घी, कबाब और आमलेट देंगे। तुम हमारा साथ दो।"

शमशेर की नजर उस पर सबसे पहले पड़ी। पढ़कर वह गुस्से के मारे आगबबूला हो गया। वह पेड़ पर चढ़ गया, और उसे उतार-कर उसने उसकी उलटी ओर लिख दिया—

"मेरे भूले हुए भाइयो।

"तुम इतने गुलाम हो चुके हो कि तुम आजादी का महत्त्व नहीं समझ सकते। गुलाम की आँखों को दुनिया ही गुलाम दीखती है। तुम खुद गुलाम हो, और तुम चाहते हो कि तुम्हारे दूसरे भाई भी गुलाम हो जायँ।

"हम घास-पात खाएँगे, लेकिन हमें गुलामी के बिस्कुट नहीं मंजूर।"

उसने तख्ती पेड़ पर उसी स्थान पर टाँग दी, और अपने साथियों से आ मिला। साथी बहुत परेशान हो रहे थे कि शमशेर किधर गया।

शमशेर ने उस तख्ती की बात बतलाकर कहा कि यहाँ 'ठहरना ठीक नहीं। जल्दी ही हमें कूच कर देना चाहिए। पास ही में कहीं काली फौज का पड़ाव है। हमें इम्फाल तक बहुत जल्द पहुँच जाना चाहिए। बीच में शत्रुओं से मोर्चा भी बचाने की जरूरत है।"

राय उचित थी। बिना विश्राम किए रेजिमेंट ने गुप्त मार्गों में फिर कूच बोल दिया।

परंतु किसी तरह भी दुर्भाग्य ने उसका पीछा न छोड़ा था। मलेरिया ने फिर जोर पकड़ा। एक के बाद एक बीमार पड़ने लगा। दवा-दारू भी बहुत अल्प और नाम-मात्र का ही रह गई थी। मौत का सामना करके भी रेजिमेंट की गति को शिथिल न करने के लिये बहादुर सैनिक उनका साथ छोड़कर इधर-उधर रुक जाते या किसी पास-पड़ोस की बस्ती में शरण लेने चल देते। शमशेर को भी एका-जाड़ा लगा। पानी जोरों का बरसने लगा था। सब लोग तितर-

भितर हो गए। मौका पाकर शमशेर भी विना किसी से कुछ कहे बीच ही में रुक गया, और एक पहाडी बस्ती में जा पहुँचा।

दो दिन बाद उसे पता चला कि मैं अँगरेजों की कैद में हूँ। किसी ने प्रलोभन-वश उसके वहाँ होने की सूचना अँगरेजी फौज को दे दी थी।

इम्फाल पहुँचने पर रेजीमेंट कमांडर को पता चला कि वीर शमशेर कहीं छूट गया है, और वह अभी तक इम्फाल नहीं पहुँचा।

इम्फाल में गणना से पता चला कि दस हज़ार के आज़ाद हिंद फ़ौज के डिवीजन में से आधे सिपाही वीर गति को प्राप्त हो चुके। अधिकांश लड़ते हुए रण-क्षेत्र में मरे, और बाकी महामारियों या भूख-प्यास के शिकार हो गए।

डिवीजन जुलाई के पहले हफ्ते में इम्फाल से बर्मा के लिये रवाना हो गया। जितने भी सिपाही शेष बचे थे, सभी लौटे। यदि कोई नहीं लौटा, तो मुक्ति का भूखा शमशेर और उसके-से ही कुछ दूसरे बीमार पड़ जानेवाले साथी, जिनके प्राणों में दिल्ली को दूर होते देखकर आग जल उठी थी, आँखों में दुश्मनों का खून देखने के लिये खून उतर आया था, और बाँहों में चुटकियों से काले विभीषणों को मसल देने के लिये ऐंठन समा गई थी।

डिवीजन लौटा, और एक फौजी नारा देकर—"खून, खून, खून!" इस नारे के पीछे एक दृढ़ और अटल निश्चय, पवित्र, किंतु भीषण शपथ, उग्र, किंतु अद्भुत लगन छिपी हुई थी। वह निश्चय, वह शपथ और वह लगन आज भी इम्फाल-क्षेत्र की पहाड़ियों में उसी वेग, उसी शक्ति और उसी गति से गूँज रही है।

× × ×

सलीना 'झाँसी की रानी' रेजिमेंट की एक सैनिका बन चुकी थी, और आजाद हिंद फौज के मेम्यो-स्थित अस्पताल में नर्स का काम

करने लगी थी। उसे शमशेर और रजनी से मिलकर यह पूछने की बड़ी उत्सुकता थी कि वे मुझसे नाराज तो नहीं हो गए। वे चले क्यों गए हम लोगों से कुछ भी कहे बिना? अगर वे जाना ही चाहते थे, तो मैं कोई उन्हें रोक थोड़े न लेती।

उसे मेम्यो आकर यह तो पता चल गया कि शमशेर और रजनी दोनों इम्फाल गए हैं। घायल या बीमार होकर बीच ही में लौटने वाले सैनिकों से वह उनकी कुशल-क्षेम पूछती और लड़ाई के खत्म होने की बड़ी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा करती। उसे जब यह मालूम हुआ कि आजाद हिंद फौज को जापानियों के साथ पीछे हटना पड़ा, और सब लोग वापस लौटनेवाले हैं, तो उसे जहाँ इस बात का घोर दुःख हुआ कि एक बार फिर भारत के भाग्य ने धोखा खाया, लेकिन उसे खुशी भी हुई कि चलो, अब शमशेर और रजनी से मिलने का फिर मौका मिलेगा। बूढे अब्बाजान के देहत्याग के बाद से उसने अपने सारे विचार, सारी कल्पना और सारा स्नेह उन दो अपरिचित आगतुकों की ओर केंद्रीभूत कर दिया था, जो आज से लगभग साल-डेढ साल पूर्व उसके यहाँ अतिथि होकर ठहरे थे।

सलीना छुट्टी लेकर माडले पहुँची।

वापस आनेवाली फौजों को माडले से ही गुजरना था। गाड़ियों के ऊपर गाड़ियाँ घायलों और बीमारों को लेकर आनी शुरू हो गई थीं। अभी तक कहीं भी न रजनी दिखाई पड़ी और न शमशेर।

आखिर एक गाड़ी रजनी को ले आई। यह भी बीमारों-घायलों की ट्रेन थी। रजनी प्लेटफॉर्म पर उतरी। सलीना ने उसे पहचान लिया। 'रजनी बीबी।' 'रजनीबीबी।' की आवाज देती हुई सलीना रजनी की ओर दौड़ पड़ी। एक क्षण रजनी विस्मित होकर रह गई कि यहाँ मुझे यह कौन पुकार रही है? दूसरे ही क्षण उसे उसकी ओर दौड़ती हुई सलीना दिखाई पड़ी।

"सलीना !" रजनी भी आगे बढ़ी।

दोनों एक दूसरे से चिपट गईं। दोनों उदास थीं—कुछ-न-कुछ खोकर। एक अपने पिता को और दूसरी शमशेर-जैसे होनहार धर्म के भाई को। दोनों के मन में हुआ कि रो पड़ें। लेकिन फौजी लोग नहीं रोते—मृत्यु, हत्या, पीड़ा, आह और आँसू देखकर भी उनकी आँखों में आँसू नहीं आते। सलीना और रजनी भी न रो सकीं।

मन का उद्वेग जब कुछ शांत हुआ, तो दोनों एक-दूसरे के आलिंगन में मुक्त हुईं, और उन्होंने एक दूसरे की कुशल-क्षेम पूछी।

बाद में दोनों को, जो कुछ भी दोनों जानना चाहती थीं, मालूम हुआ। रजनी को मालूम हुआ कि सलीना किस प्रकार पितृहीना होकर अनाथ हो गई है, और किस प्रकार वह अपना तन-मन-धन, सब कुछ देकर आजाद हिंद फ़ौज की सेवा कर रही है। और, सलीना को यह मालूम हुआ कि रजनी अकेले ही मोर्चे से लौटी है, शमशेर अभी तक नहीं लौटा।

अप्रत्याशित बात सुनकर सलीना का कंठ अवरुद्ध हो गया। उसे इस बात से बहुत वेदना हुई कि काश मैंने अपनी बात कहकर शमशेर भैया को नाराज न किया होता! अब मैं उन्हें कहाँ पा सकूँगी।

रजनी को भी कई दिनों तक कुछ अच्छा न लगा। सलीना अक्सर एकांत में रोती।

---

[१७]

"अजना रानी !"

काल कोठरी के जैसे दरवाजे खुले कि देवकुमार ने अपनी पत्नी को पहचान लिया, लेकिन उसकी देह में खून की कमी से कुछ पीलापन छा रहा था। वह चिंताओं और दुराशाओं के कारण दुबली जरूर हो रही थी, लेकिन चढ़ते हुए महीनों से उसका अंग-प्रत्यंग गदराकर निखार पा रहा था। अजना को कुछ क्षण तो उस घटाटोप अंधकार में कुछ न दीखा, लेकिन उसने आवाज पहचान ली थी। यह उसके जीवन-देवता की ही आवाज थी।

"प्राणनाथ !" ओठों पर मुस्किराहट की आरती सँजोकर वह आगे बढ़ी।

देवकुमार और अजना दो क्षण के लिये आलिंगनपाश में बंध गए। यदि प्रकाश होता, तो अजना देखती कि उनकी दाढ़ी बुरी तरह बढ़ रही है, कपड़े सीड़ से गॅदले और बदबूदार हो गए हैं चेहरे की कांति नष्ट हो गई है, गाल पिचक रहे हैं, आँखें भीतर धँसना शुरू हो गई हैं, और उनकी देह में खुजली-सी पैदा हो गई है। परंतु वहाँ अंधकार था, कुछ न देख सकी। देखा, तो सिर्फ इतना ही कि और कोई नहीं, जिसने उसे बाहों में बाँध लिया था, वह उसके जीवन-देवता ही थे।

जेल-अधिकारियों से उसे देवकुमार को फाँसी पर चढ़ने के कुछ समय पूर्व सिर्फ ५ मिनट मिलने का समय मिला है। इतने अल्प ...। में उनसे वह क्या कहे, और क्या सुने। उसकी जबान को

काठ मार गया है। इतनी देर में मिलकर वह हँसे कि उनके चिर-बिछोह के लिये रोए। हँसे, तो उससे हँसा न गया; रोए तो उससे रोया न गया। अपनी निर्मला की, अम्माजी की और अपने गुड़गाँव की, देश की बहुत कुछ बातें उसे कहनी थीं—और बदले में वह जो कुछ कहते, उसका उत्तर देना था। वह ५ मिनट में क्या करे।

अजना को चुप देख देवकुमार को मौन भग करना पड़ा। आखिर वह इतना तो समझते ही थे कि यह आखिरी भेंट होगी, और जेल के कानून इस बात को बर्दाश्त नहीं कर सकते कि नजरबंद और तिस पर फाँसी-प्राप्त बंदी से उसका कोई संबंधी, चाहे वह उसके कितने ही निकट क्यों न हो, अपर्याप्त अवधि से एक भी क्षण अधिक बात कर सके। बोले—"रानी। हमें-तुम्हें जो कुछ भी कहना-सुनना है, उसके लिये दोनों को फिर से नया जन्म लेना होगा! मुझे दुःख मिटने का नहीं है—तुम लोग भी इसका दुःख न करना। मालूम होता है कि मातृभूमि आज भी वैसे ही पराधीन है, नहीं तो क्रांति के नाम से काँप उठनेवाली चार चिड़ियाँ शेर को कठघरे में बंद करके चुपके से उसकी मौत का फैसला न करतीं। लेकिन नवजवानों की लाश पर ही नए भारत का नवनिर्माण होगा।"

"प्राणनाथ!" अजना की आँखों ने दो आँसू टपकाकर देवकुमार के पैरों पर जा गिरे। अजना कुछ कुछ जैसे हाँफ रही थी। "आपको शक्तिशाली अंगरेजी राज्य जबर्दस्ती मुझसे नहीं छीन सकता। अगर उसे किसी के खून की ही जरूरत है, तो बदले में मैं आपकी जगह फाँसी पर चढ़ूँगी।"

देवकुमार मुस्किरा पड़े।

"पगली! . तुम्हारे पास तो राष्ट्र की एक धरोहर है!"

अजना अपने पति का संकेत समझ गई। उसे यह जानकर

प्रसन्नता हुई कि मै जो सूचना उन्हे देना चाहती थी वह उनसे छिपी नहीं रही। लेकिन वह आत्यन्त तो लजा ही गई।

"लेकिन आपको खोकर तो जन्मभूमि की गोद सूनी हो जायगी।"

"उस स्थान की फिर से पूर्ति करने की तुममे सामर्थ्य है, उसे तुम पूरा कर देना।"

"मैं अपना कर्तव्य पूरा करूँगी...लेकिन .."

"लेकिन क्या ?" मेरा ख्याल छोड़ दो। तुम मुझे भूल जाओ, और जाओ—अपनी बूढी अम्माजी की देख-भाल करना, निर्मला का ब्याह उसकी इच्छा के अनुसार ही होना चाहिए, और उसके बाद तुम्हे राष्ट्र की बेश कीमत धरोहर राष्ट्र को ही सँभालकर सौंपना होगा। इतना याद रहे कि क्रांति की चिनगारी, जो जल चुकी है, अब बुझने न पाए।"

जो बात कहने से वह अभी तक हिचक रही थी, लेकिन चाहती थी कि किसी तरह कह दे, अब उसी का उत्तर पूछे जाने पर उसे कुछ तो कहना ही था। बोली— बीबीजी का ब्याह तो भगवान् ने अपने यहाँ रचाया है—अम्माजी का कुछ पता नहीं चला.. गुड़गाँव मरघट बन गया है अमर रानी और बीबीजी ने गुड़गाँव की नाक रख ली ..."

इतना सब अजना बड़ी तेजी से एक ही साँस मे कह गई।

इतने ही मे गोरे सतरी ने चिल्लाकर कहा—'टाइम खतम हो गया।"

अजना ने बात भी पूरी न की कि अपने जीवन-देवता से हमेशा के लिये बिदाई लेने को वह उनके चरणों मे बैठकर झुक गई। गरम-गरम आँसुओं ने देवता के पैर पखार दिए।

'चलो, बाहर चलो।" सतरी फिर गरजा, और वह फाटक पर खड़ा हुआ।

देवकुमार ने अजना को कंधे पकड़कर ऊपर उठाकर चाहा कि छाती से अंतिम वार लगा लूँ। लेकिन..

संतरी भीतर आ गया।

अजना करुण दृष्टि में आंसू भरकर अपने पति की ओर देखती हुई पीछे घूमी। चलते-चलते अपनी बात पूरी करती गई।

"जो बातें आपने अमर रानी से एक दिन कही थीं, वे बीबीजी ने पूरी कर दीं। बीबीजी ने आखिरी वक्त यह आपसे कहलवाया है।"

अजना चली गई।

कैदी मरने के भय में कहीं भाग न खड़ा हो, इसलिये लोहे के फाटक फिर बंद हो गए।

× × ×

सहसा ही स्वप्न में इतना बड़ा धक्का लगा कि अजना की आँखें आधी रात बीते खुल गईं। यह बड़ा भयानक स्वप्न था, और उसने अजना के नन्हे-मुन्ने मन में भय और आशंका का संचार कर दिया था। मा होने के पहले ही चूड़ियों के फोड़े जाने, सुहाग के चिह्नों के उतारे जाने और सिंदूर के पोंछे जाने की कल्पना में ही उसका मन काँप उठा। तो क्या एक दिन जो आशंका उसने पहले कभी की थी, उसी की पूर्ति की ओर यह स्वप्न संकेत कर रहा है! हे भगवान्! लोग मुझे क्या-क्या कहेंगे। किसी की जबान मैं कैसे पकड़ूँगी।

लेकिन यह सोचकर उसने अपना जी हलका किया कि अरे! यह तो स्वप्न था, सत्य नहीं। सभी स्वप्न कोई सच्चे थोड़े न होते हैं। या ही वह मुझे नहीं छोड़ जायेंगे। मुन्ने को देखने के लिये वह जरूर आएँगे। पेरोल पर उनके छूटने की कोशिश करवाऊँगी। मुन्ने को देखकर वे कितने खुश होंगे। सरकार कोई भी हो, आखिर उसके भी तो दिल और आँखें हैं।

प्रसन्नता हुई कि मैं जो सूचना उन्हें देना चाहती थी ।" उनने किसी नहीं कही ; लेकिन वह तबियत तो लजा ही गई ।

"लेकिन आपको खोकर तो जन्मभूमि की गोद सूनी हो जायगी ।"

"उस स्थान की फिर से पूर्ति करने की तुममें सामर्थ्य है, उसे तुम पूरा कर देना ।"

"मैं अपना कर्तव्य पूरा करूँगी ..लेकिन .."

"लेकिन क्या ?" मेरा खयाल छोड़ दो । तुम मुझे भूल जाओ, और जाओ—अपनी बूढ़ी अम्माजी की देख-भाल करना, निर्मला का ब्याह उसकी इच्छा के अनुसार ही होना चाहिए, और उसके बाद तुम्हें राष्ट्र की बेश कीमत धरोहर राष्ट्र को ही सँभालकर सौंपना होगा । इतना याद रहे कि क्रांति की चिनगारी, जो जल चुकी है, अब बुझने न पाए ।"

जो बात कहने में वह अभी तक झिझक रही थी, लेकिन चाहती थी कि किसी तरह कह दे, अब उसी का उत्तर पूछे जाने पर उसे कुछ तो कहना ही था । बोली— "बीबीजी का ब्याह तो भगवान ने अपने यहाँ रचाया है—अम्माजी का कुछ पता नहीं चला, गुड़गाँव मरघट बन गया है । अमर रानी और बीबीजी ने गुड़गाँव की नाक रख ली ..."

इतना सब अरुणा बड़ी तेजी से एक ही साँस में कह गई ।

इतने ही में बाहर सन्तरी ने चिल्लाकर कहा— "टाइम खतम हो गया ।"

अरुणा ने बात भी पूरी न की कि अपने जीवन-देवता से हमेशा के लिए विदाई लेने को वह उनके चरणों में बैठकर झुक गई । गरम गरम आँसुओं ने उनके पैर पखार दिए ।

"चलो, बाहर चलो ।" सन्तरी फिर बोला, और [illegible] फाटक [illegible] बन्द हुआ ।

देवकुमार ने अंजना को कंधे पकड़कर ऊपर उठाकर चाहा कि छाती से अंतिम बार लगा लूँ। लेकिन .

संतरी भीतर आ गया।

अंजना करुण दृष्टि से आँसू भरकर अपने पति की ओर देखती हुई पीछे घूमी। चलते-चलते अपनी बात पूरी करती गई।

"जो बातें आपने अमर रानी से एक दिन कही थीं, वे बीबीजी ने पूरी कर दीं। बीबीजी ने आखिरी वक्त यह आपसे कहलवाया है।"

अंजना चली गई।

क़ैदी मरने के भय से कहीं भाग न खड़ा हो, इसलिये लोहे के फाटक फिर बंद हो गए।

× × ×

सहसा ही स्वप्न में इतना बड़ा धक्का लगा कि अंजना की आँखें आधी रात बीते खुल गईं। यह बड़ा भयानक स्वप्न था, और उसने अंजना के नन्हे-मुन्ने मन में भय और आशंका का संचार कर दिया था। मा होने के पहले ही चूड़ियों के फोड़े जाने, सुहाग के चिह्नों के उतारे जाने और सिंदूर के पोछे जाने की कल्पना से ही उसका मन काँप उठा। तो क्या एक दिन जो आशंका उसने पहले कभी की थी, उसी की पूर्ति की ओर यह स्वप्न संकेत कर रहा है। हे भगवान्! लोग मुझे क्या-क्या कहेंगे। किसी की जबान में कैसे पकड़ूँगी।

लेकिन यह सोचकर उसने अपना जी हलका किया कि अरे! यह तो स्वप्न था, सत्य नहीं! सभी स्वप्न कोई सच्चे थोड़े न होते हैं! यों ही वह मुझे नहीं छोड़ जायँगे। मुन्ने को देखने के लिये वह जरूर आएँगे। पेरोल पर उनके छूटने की कोशिश करवाऊँगी। मुन्ने को देखकर वे कितने खुश होंगे। सरकार कोई भी हो, आखिर उसके भी तो दिल और आँखें हैं!

लेकिन अंजना को क्या पता था कि सरकार के न तो दिल होता है, और न आँखें। इस समय उसके देश में जो सरकार है, उसे गद्दी-वालों से कोई संवेदना नहीं। प्रजा के दुख-सुख उसके सुख-दुख नहीं। वह इसीलिये रहा है कि वह जोंक होकर भारत माता का रक्त चूस ले, और फिर दावानल बनकर उसके अस्थि-शेष कंकाल को एक ही स्पर्श से राख कर दे। सरकार इसीलिये सरकार है कि वह प्रजा की भूख प्यास का अनुभव नहीं करती, उसके सुख-दुख को नहीं देखती, और उसकी पुकार और फरियाद उसके कानों तक नहीं पहुँचती।

अंजना को यह सब कौन बतलाता। सरकार की नस-नस का पहचाननेवाला शेर तो प्रकाश-हीन पिंजड़े में बंद था। अंजना के घर-वाले सिर पटककर रह गए, लेकिन छ महीने के बाद भी उन्हें कोई सफलता न मिली कि वे अंजना को उसके पति से भेंट करा सकें।

अंजना की आशा इसी पर अटकी थी कि शायद मुन्ना उसके परिवार में आकर उसके भाग्य में कोई ऐसा परिवर्तन कर दे कि उसके दिन फिर जायँ, और वह पेरोल पर छूट जायँ।

अंजना को उस रात बड़ी देर तक नींद न आई। वह कभी होने-वाले मुन्ने के रोने, हाथ-पैर चलाने, कुछ बड़े होकर उसके 'गूँ-गाँ' करने, मुस्कराने और घुटनों के बल आँगन में दौड़ने की बातों में अपना मन लगाती, कभी मुन्ने के बाबूजी के बारे में सोचती कि वह मुन्ने को खिलाएँगे, और फिर मुझे और मुन्ने को कभी भी छोड़कर कहीं न जायँगे। लेकिन घूम फिरकर उसका ध्यान उसी [illegible] की बात पर चला जाता, और वह काँप उठती सिर से पैर तक। उसका मन उदासीनता के सागर में [illegible] लगता। [illegible] और [illegible] और [illegible] कभी [illegible] कभी [illegible] पर

चोधासिंह हथकड़ियों में अदालत लाए गए, और कठघरे में खड़े कर दिए गए।

पाँच गवाहियाँ गुजरीं।

तीन गवाहों ने, जिनमें दो बँगले के माली और कहार थे, और एक कंपाउंडर था, सरदार सज्जनसिंह के इशारे पर इस बात का समर्थन किया कि लाला रूपकिशोर डॉ० साहबा के यहाँ बहुत आते-जाते थे, लेकिन जिस रात को यह खून हुआ, उस रात को हम लोगों ने लाला साहब को बँगले आते नहीं देखा। जब एकाएक धड़ाके और डॉ० साहबा की चीख की आवाज सुनी, तो हम लोग चौंककर उठे, और घटना-स्थल पर जब पहुँचे, तो देखा कि मालकिन का किसी ने खून कर दिया है। लेकिन खून करनेवाले का कोई पता नहीं है। शिशिर बाबू के संबंध में उन्होंने अनभिज्ञता प्रकट की।

दर्शकों ने सोचा कि ये बयान सब गलत हैं, और पुलिस ने इन्हें डरा-धमकाकर सिखा-पढ़ा रक्खा है। लेकिन डॉ० साहबा के बूढ़े और विश्वासपात्र नौकर गयादीन के बयान को सुनकर सबके चेहरे खिल उठे।

गयादीन ने थाने में जो रिपोर्ट लिखाई थी, उसे बदलवाना भी पुलिस के लिये हितकर न था। गयादीन को शिशिर बाबू के एकाएक उस रात को चुपके से आने, फिर मालकिन के कमरे से निकलकर कुछ बर्राते हुए रूपकिशोर के बँगले की ओर जाने तथा शिशिर बाबू द्वारा उनका पीछा किए जाने की बातें मालूम थीं। वह यह भी जानता था कि मालकिन को कुछ दिनों से निद्रा-भ्रमण रोग हो गया है, और वह दो-एक बार पहले भी कमरे के बाहर निकलकर लॉन में घूमने लगने पर उन्हें धीरे से जगाकर फिर वापस कमरे में सुला भी आया था। लेकिन उसे रूपकिशोर के साथ उनका पति के होते हुए भी उनकी गैर-हाजिरी में मेल-बैठना और नाक-

लेकिन अजना को क्या पता था कि सरकार के न तो दिल होता है, और न आँखें। इस समय उसके देश में जो सरकार है, उसे वहाँ-वालों से कोई संवेदना नहीं। प्रजा के दुःख-सुख उसके सुख-दुःख नहीं। वह इसीलिये यहाँ है कि वह जोंक होकर भारत माता का रक्त चूस ले, और फिर दावानल बनकर उसके अस्थि-शेष कंकाल को एक ही स्पर्श से राख कर दे। सरकार इसीलिये सरकार है कि वह प्रजा की भूख-प्यास का अनुभव नहीं करती, उसके सुख-दुःख को नहीं देखती, और उसकी पुकार और फरियाद उसके कानों तक नहीं पहुँचती।

अजना को यह सब कौन बतलाता। सरकार की नस-नस को पहचाननेवाला शेर तो प्रकाश-हीन पिंजड़े में बंद था। अजना के घर-वाले सिर पटककर रह गए, लेकिन ६ महीने के बाद भी उन्हें कोई सफलता न मिली कि वे अजना की उसके पति से भेंट करा सकें।

अजना की आशा इसी पर अटकी थी कि शायद मुन्ना उसके परिवार में आकर उसके भाग्य में कोई ऐसा परिवर्तन कर दे कि उसके दिन फिर जायँ, और वह पेरोल पर छूट जायँ।

अजना को उस रात बड़ी देर तक नींद न आई। वह कभी होने-वाले मुन्ने के रोने, हाथ-पैर चलाने, कुछ बड़े होकर उसके 'गूँ-गूँ' करने, मुस्किराने और घुटनों के बल आँगन में दौड़ने की बातों में अपना मन लगाती, कभी मुन्ने के बाबूजी के बारे में सोचती कि वह मुन्ने को खिलाएँगे, और फिर मुझे और मुन्ने को कभी भी छोड़कर कहीं न जायँगे। लेकिन घूम-फिरकर उसका ध्यान उसी स्वप्न-वाली बात पर चला जाता, और वह काँप उठती सिर से पैर तक। उसका मन उदासीनता के सागर में डूबने-उतराने लगता। वह अँधेरे में आँखें खोलकर चारों ओर निगाह डालती, कभी खिड़की से झाँकनेवाले तारों पर, और कभी छत की काली बल्लियों पर

चोधासिंह हथकड़ियों मे अदालत लाए गए, और कटघरे में खड़े कर दिए गए।

पाँच गवाहियाँ गुजरीं।

तीन गवाहों ने, जिनमे दो बँगले के माली और कहार थे, और एक कम्पाउडर था, सरदार सज्जनसिंह के इशारे पर इस बात का समर्थन किया कि लाला रूपकिशोर डॉ० साहबा के यहाँ बहुत आते-जाते थे, लेकिन जिस रात को यह खून हुआ, उस रात को हम लोगों ने लाला साहब को बँगले आते नहीं देखा। जब एकाएक धड़ाके और डॉ० साहबा की चीख की आवाज सुनी, तो हम लोग चोंककर उठे, और घटना-स्थल पर जब पहुँचे, तो देखा कि मालकिन का किसी ने खून कर दिया है। लेकिन खून करनेवाले का कोई पता नहीं है। शिशिर बाबू के संबंध मे उन्होंने अनभिज्ञता प्रकट की।

दर्शकों ने सोचा कि ये बयान सब गलत हैं, और पुलिस ने इन्हें डरा-धमकाकर सिखा-पढ़ा रक्खा है। लेकिन डॉ० साहबा के बूढ़े और विश्वासपात्र नौकर गयादीन के बयान को सुनकर सबके चेहरे खिल उठे।

गयादीन ने थाने में जो रिपोर्ट लिखाई थी, उसे बदलवाना भी पुलिस के लिये हितकर न था। गयादीन को शिशिर बाबू के एकाएक उस रात को चुपके से आने, फिर मालकिन के कमरे से निकलकर कुछ बर्राते हुए रूपकिशोर के बँगले की ओर जाने तथा शिशिर बाबू द्वारा उनका पीछा किए जाने की बातें मालूम थीं। वह यह भी जानता था कि मालकिन को कुछ दिनों से निद्रा-भ्रमण रोग हो गया है, और वह दो-एक बार पहले भी कमरे के बाहर निकलकर लॉन में घूमने लगने पर उन्हें धीरे से जगाकर फिर वापस कमरे में सुला भी आया था। लेकिन उसे रूपकिशोर के साथ उनका पति के होते हुए भी उनकी ग़ैर-हाज़िरी में मेल-बैठना और नोक-

झांक अच्छी नहीं लगती थी। उस रात को जब उसने एकाएक रिवाल्वर की आवाज और मालकिन की करुण चीख सुनी, तो उसके प्राण सूख गए कि यह तो बुरा हुआ। लेकिन स्वामिभक्ति, देश-प्रेम और प्रत्युत्पन्नमतित्व ने वस्तुस्थिति को उलझने और शिशिर बाबू को पकड़े जाने से बचा लिया। उसने शिशिर बाबू को मौक़ा दिया कि वह फरार हो जायँ—और यह समझते हुए कि उनको अपनी पत्नी का खून करते किसी ने नहीं देखा। जब चारो ओर जागरण पड गया, और शोर गुल मच गया, तो वह भी आँखें मलता हुआ उसी मे शामिल हो गया।

थाने मे जो रिपोर्ट उसने लिखाई, उसमे रूपकिशोर को पर-पत्नी पर कुदृष्टि डालने और उसकी मर्यादा को भग करने के निकृष्टतम अपराध का दड दिलाने के लिये उन्हीं पर अपना सदेह प्रकट किया। तर्क यह रक्खा कि आधी रात को मालकिन को अपने बँगले ले जाकर लालाजी ने जबर्दस्ती करनी चाही होगी, मालकिन ने इतना आगे बढ करके भी ऐसा करने से इनकार किया, तो क्रोध मे लालाजी ने उन्हे गोली मार दी, और नौ दो ग्यारह होकर ससुराल में शरण ली।

गवाही के समय गयादीन ने अपनी लिखाई गई रिपोर्ट से एक इच भी हटने से इनकार करते हुए कहा कि पुलिस की मार और धमकियों में आकर मै यह नहीं कह सकता की रोज की तरह उस रात को लालाजी नहीं आए, और कोई आया होगा। पुलिस कहती है कि उसी रात को मालिक फ़रार हुए, लेकिन मै यह कैसे कह दूँ कि मैने उन्हे फ़रार होते या बँगले में आते देखा। मैंने तो जेल जाने के बाद से मालिक को अभी तक नहीं देखा। मुझे तो यह भी नहीं मालूम कि मालिक फरार भी हुए या अभी जेल ही में हैं।

इतना स्पष्ट बयान दे चुकने पर मुझे भय है कि पुलिस मेरे ऊपर

अत्याचार करेगी, इसलिये यदि मुझे हिरासत में रखना अधिकारियों की निगाह में जरूरी ही समझा जाता है, तो मुझे पुलिस के संरक्षण से तो अलग ही रक्खा जाय।"

मैजिस्ट्रेट ने आश्वासन दिया कि पुलिस तुम्हारे ऊपर कोई आतंक नहीं जमा सकेगी।

गयादीन ने जमीन तक झुककर कृतज्ञता प्रकट करते हुए अभिवादन किया।

इस बयान से सरदार सज्जनसिंह के दाँत किटकिटा उठे। रूपकिशोर का इस झूठे बयान से चेहरा उतर गया, लेकिन उसने हत्या नहीं की थी, इसलिये उसकी आत्मा मजबूत थी। परंतु अपने दुश्चरित्र के जनता के बीच खुल जाने पर वह काफी लज्जित था। उसे गयादीन के शब्द ऐसे मालूम पड़ रहे थे, जैसे उसके चेहरे पर भीगे जूते पड़ रहे हों। दर्शक मंडली ने गयादीन के साहस और सत्यवादिता की प्रशंसा की और की, रूपकिशोर के चरित्र की कटुतम आलोचना।

अंतिम गवाही बोधासिंह की हुई।

बोधासिंह अभी तक दृढनिश्चय और आत्मबल के अभाव में यही सोच करके चला था कि क्या करूँ, आखिर जो पुलिस कहेगी, वह तो कहना ही होगा। मैं पुलिस का मुखबिर जो हूँ। लेकिन गयादीन के साहस और स्पष्टवादिता ने उसकी आत्मदुर्बलता दूर कर दी, और उसकी आँखें खुल गई। उसे दुःख हुआ कि नमक खानेवाले एक नौकर ने जिस वफ़ादारी का परिचय दिया, उतना भी मैं न कर सका। मैंने क्रांति की शपथ खाकर भी अपने साथियों और गुरुदेव को धोखा दिया। उनका जीवन खतरे में डाल दिया। लेकिन इस देश-द्रोह और विश्वासघात के बदले ही मैं तो मुझे स्वयं को मेरे प्राणों की भीख मिल रही है। प्राणों के मोह ही ने तो मैंने दल के सारे भेद बताए। हे भगवान्!

सत्य बोलने की शपथ खाते ही उसके प्राण काँप उठे। वह कहना चाहता था वही, जो कुछ उसके प्राणदाताओं ने उसे कहने को बाध्य किया था, लेकिन मुख खुलते ही सत्य की मरदानी बोल उठी—

"मैं पुलिस का आदमी हो गया हूँ। दुनिया मुझसे घृणा करती है, तो उसे हक है, वह ऐसा करे। गिरफ्तार होकर जिस सत्य की रक्षा के लिये मैंने दुनिया की नजरों में अपने साथियों और श्रद्धेय गुरुदेव के साथ विश्वासघात किया, उसी सत्य को रक्षा के लिये मैं आज पुलिस के साथ भी विश्वासघात करने को बाध्य हूँ।"

सरदार सज्जनसिंह को पूरा विश्वास था कि मुखबिर होकर बोधा पुलिस के विरुद्ध कभी न जायगा, लेकिन इतना सुनते ही वह सन्न रह गया।

बोधा ने आगे कहा—"गुरुदेव ने जो क्रांतिकारी कार्य किए हैं, उन्हें स्वीकार करके मैं अपनी जबान नहीं बदलूँगा, लेकिन मैंने उन्हें डॉ० साहबा की हत्या करते नहीं देखा। मैं तो यह कल्पना भी नहीं कर पाता कि उन्होंने अपनी पत्नी की हत्या क्यों की? डॉ० साहबा की हत्या किसने की, यह भी मैं नहीं जानता। उनके चरित्र के बारे में भी मुझे कुछ नहीं मालूम। मैं तो एक अरसे से उनके दर्शन ही नहीं कर सका था।"

सज्जनसिंह मन-ही-मन में जल उठा। दर्शकों को यह जानकर संतोष हुआ कि मुखबिर होकर भी बोधा ने सही बात कहकर शिशिर बाबू के विरुद्ध मुकदमे को नहीं जाने दिया।

मैजिस्ट्रेट ने अपना निर्णय देते हुए कहा कि "लाला रूपकिशोर निर्दोष मालूम होते हैं। उनका डॉ० हेमलता से कुछ अनैतिक सम्बन्ध अवश्य था, लेकिन लालाजी ने डॉ० साहबा की हत्या नहीं की। अनैतिक सम्बन्ध के ही आधार पर बिना पर्याप्त प्रमाण मिले किसी व्यक्ति को अभियुक्त मानकर उस पर हत्या का मुकदमा नहीं

चलाया जा सकता। पुलिस को जिस दूसरे व्यक्ति पर सन्देह है, उसके लिये भी न तो स्पष्ट और 'पर्याप्त' प्रमाण है, और न वह 'अभियुक्त' ही पुलिस की हिरासत में है, ऐसी हालत में मुक़दमा आगे नहीं बढ़ाया जा सकता।

लाला रूपकिशोर और बोधासिंह को छोड़कर, जो कि दूसरे मामलों से भी सम्बन्धित हैं, सभी गवाह, जो पुलिस की हिरासत में हैं, तुरत छोड़ दिए जायँ।"

रूपकिशोर, गयादीन और उसके साथी छूट गए। जनता यह आलोचना करती हुई लौट गई— 'पुलिस ने जरूर करारी घूस खाई है।"

× × ×

सुंदरी अमर जब से ससुराल आई है, उसे कुछ अच्छा ही नहीं लगता है। यहाँ आ जाने और आंदोलन के बिलकुल शिथिल पड़ जाने से उसके राजनीतिक और सामाजिक जीवन का अंत हो गया है। उसने सोचा था कि थोड़ा-बहुत चरखा चलाकर या घर के काम-काज करके मैं मन बहला लूँगी—लेकिन, उसे यह सब कुछ भी अच्छा न लगता। अभी तक उसे अपने मा-बाप की मृत्यु से किसी अभाव का अनुभव नहीं हो रहा था, लेकिन एकांत और अवकाश पाकर मन बार-बार उनको फिर से देखने के लिये विकलता पैदा करने लगा। स्त्री अपना सब कुछ खोकर भी यदि अपने प्रियतम के नैकट्य और स्निग्ध प्यार की अनुभूति करती रहे, तो भी यह बहुत कुछ अपना आपा और दूसरे अपनों को भूली रहती है—लेकिन, अभी तक उसके जीवन-देवता उससे इतनी दूर हैं कि जहाँ से कोई संदेश भी उसके पास तक नहीं आ सकता।

वह दिन-भर उदास रहती है, और बहुत कम हँसती-बोलती है। वह एकांत में बैठना और जी घबराने पर खुलकर रोना पसंद करती है। उसकी सास को अपनी बहू की इस दशा को देखकर बहुत

चिंता रहती है कि मैं कैसे अपनी बहू रानी को खुश रक्खूँ। उसके और भी बहुएँ हैं, लेकिन सबसे ज्यादा ध्यान वह अमर की ओर ही देती है। वह उसे देखकर अपने गमगेर को भूली रहती है।

लेकिन अमर किसे देखकर अपने गमगेर को भूल रहे।

अमर की सास उसे सदा अपने पास रखना चाहती है। उसके लिये नई-नई जरी की कामदार साड़ियाँ मँगाती है, लेकिन अमर कह देती है—"अम्माजी, मुझे तो खद्दर की ही मोटी साड़ियाँ चाहिए। लाखा-करोड़ों देश की बहनों को तो मोटा खद्दर भी तन पर नसीब नहीं होता।" उसकी सास उसके लिये नई-नई डिजाइनों के गहने, सेंट, क्रीम, पाउडर और सेंडिलें मँगाकर देती है, लेकिन अमर न तो सुहाग-चिह्न को छोड़कर और कोई गहने पहनती है, न और किसी प्रदर्शनात्मक चीजों का व्यवहार करती है। पैरों में एक चप्पल की पुरानी जोड़ी ही वह पर्याप्त समझती है।

आखिर उसकी सास कहाँ तक और किस प्रकार अपनी विरहिणी बहू को खुश रखने की कोशिश करे? अमर की उदासीनता देखकर धीरे-धीरे उसकी सास का आग्रह भी कम हो चला। विश्व का कैसा कठोर नियम है कि जो व्यक्ति अपने से ही उदासीन और तटस्थ हो जाता है, उससे दूसरे भी वैसी ही तटस्थता बरतने लगते हैं। बहू के रुख को देखकर सर साहब भी उससे कोई ऐसी बात का आग्रह नहीं करते कि उनकी बहू को दुःख पहुँचे।

उसकी दूसरी जेठानियाँ भी उससे दूर-दूर रहने लगीं। वे अमर के पीछे अपना सुख, अपना उल्लास और अपने विनोद क्या बरबाद करें।

अमर अब अकेली-सी ही हो गई—बिलकुल अकेली। पहले ही अपने कमरे से बाहर नहीं निकलती थी, फिर भी सास के आग्रह से बहुत वह लॉन में टहल-फिर लेती थी, या ताश या केरम के

खेतों के पास बैठ-उठ जाती थी। लेकिन अब उससे कोई कुछ न कहता। उसे अब रह-रहकर भयानक एकाकीपन का अनुभव होता। उस एकाकीपन से उसका दम घुटने लगता, साँसें चलते-चलते जहाँ की तहाँ रुक जातीं, सिर घूम उठता, जी मिचलाने लगता, दृष्टि में शून्यता छा जाती। वह कभी-कभी सोचती कि ऐसे सारी जिंदगी सामने पड़ी है, कैसे कटेगी। लेकिन वह विवश थी। दुनिया की चहल-पहल उसमें दुनिया के प्रति कोई चाह या आकर्षण नहीं पैदा कर पा रही थी। उसके ओठों की हँसी जैसे किसी ने बरबस छीन ली थी, उसके मन की शांति जैसे रूठ चुकी थी, और जिंदगी का संतुलन जैसे नष्ट हो चुका था।

अब वह थी, और उसके चारों ओर था ईंट और चूने से बना एक विराटकाय, भावना-शून्य और स्पंदन-हीन मूक कमरा। दिन में उसकी खिड़की से सूर्य की किरणें झाँकतीं, और रात को अगणित तारे या कभी-कभी हँसता हुआ चाँद उसकी ओर देखते और मुस्किरा पड़ते। झरोखों से आनेवाली बनैली वायु उसकी चुन्नी और खुले हुए केशपाश झकझोर कर चली जाती। कमरे के भीतर था शृंगारदान का गोल बड़ा शीशा, उसकी मेज पर रक्खी थी तारीखों-वाली डायरी और उसमें लगी हुई पेंसिल, कांच के दो फूलदान, फाउंटेन पेन की स्याही, फाउंटेन पेन, कंघे और रोएँदार तौलिया; उसकी दराजों में भरी थीं एक अर्से से रेशमी साड़ियाँ, रेशमी सूट, चुन्नियाँ, गरम दुशाले, सेंट, क्रीम, पाउडर, लिपस्टिक, शेविंग का सामान, ताश आदि अनेकों रोजमर्रा के काम की बेशकीमती चीजें। शृंगारदान के सामने दो कुर्सियाँ पड़ी रहतीं। शेष कमरे में था एक ऊँचा पलंग मच्छरदानीदार, एक सोफ़ा-सेट, दो शीशे की अलमारियाँ, ऊपर छत में लटके थे बिजली के हंडे और बिजली का पंखा। दरवाजों पर पड़ी रहती चिकें। कई-कई महीनों के गुजर जाने के बाद भी सब कुछ

जैसे-का-तैसा ही बना हुआ था। जब से यह कमरा फिर खुला, तब से अब परत पर परत जमनेवाली धूल चीजों पर नहीं रहनी चाहिए थी, लेकिन अमर में यह सब कुछ न होता। स्वतंत्र गुड़गाँव की स्थापना करनेवाली अमर आज इतनी दुर्बल, इतनी अकर्मठ हो गई थी।

इस तरह एक वर्ष बीत गया। समय क्षण, मिनट, घंटों, दिनों, हफ़्तों और महीनों करके बीतता चला जा रहा था, लेकिन अमर को उसकी कोई सुधि न थी। जब उसे यह मालूम हुआ है कि रंगून से आजाद हिंद रेडियो-स्टेशन सुभाष बाबू, आजाद हिंद सेना और आजाद हिंद-सरकार के बारे में ब्राडकास्ट करता है, तब से प्रायः वह रेडियो सेट पर बैठी उस समय की प्रतीक्षा किया करती है, जब वह आजाद-हिंद-रेडियो-स्टेशन बोलता है। उसे यह आशा रहती है कि संभव है, कभी 'उनके' बारे में भी उसे कोई संदेश मिले।

आखिर एक दिन ऐसा भी आया, जब उसकी आंतरिक इच्छा उसके मन का विश्वास बन गई, और उसे यह अनुभव होने लगा कि आज या कल में ही वह अपने कुशल-क्षेम का संदेश जरूर ब्राड-कास्ट करेंगे।

शीत काल तेजी से भारत-भूमि के आँचल से दूर खिसका जा रहा था, परंतु सुबह-शाम का गुलाबी जाड़ा अभी भी अमर की हृदय-बेलि को झकझोरने की सामर्थ्य रखता था। उसके अंतस्तल की गरमी उसके तन पर उभर आती, और उसे फरवरी में भी सिर पर लटकने-वाला पंखा थोड़ी देर के लिये उस गरमी का, उस ताप को शांत करने के लिये खोल देना पड़ता था। प्रत्येक ऊषा उसके लिये आशा और विश्वास के सपने लाती, लेकिन प्रत्येक संध्या उसके अकेले जीवन-प्रांगण में उतरकर उसे अंधकार, क्षोभ और व्याकुलता भर जाती। उसे अपना कमरा अच्छा न लगता, परंतु साँझ की

वासती हवा में लॉन में घूमना या कुछ खेलना भी उसे न सुहाता। लाचार होकर वह आँखें मूँद लेती कि संभवत: इस प्रकार विश्व के आमोद-प्रमोद और रंगीन चित्र उनके जी को न दुखा सकेंगे। लेकिन आँखें मूँदते ही एक क्षण के लिये उसे अपने प्रियतम की क्षीणोन्मुख रूप-रेखा याद आती, और वह प्रतिपल क्षीण होते-होते अस्पष्टता और अंधकार के समुद्र में डूब जाती। उसे आश्चर्य होता कि देखो, कल की ही बातें उसके मानस-पटल पर पूर्णत: जैसे अंकित ही होना नहीं चाहतीं। विरह-स्मृति के कटीले चाँद से उसके हृदय-सागर में प्रेम और वासना का जो दुर्दम ज्वार उठता था, उसे वह प्रयत्न करके भी नहीं सँभाल पाती थी। उसे स्वयं अपनी मनोदशा पर तरस आता, लेकिन उसके इस चिर-एकाकीपन ने उसके धैर्य, साहस और दृढ़ता के तार ढीले कर दिए थे। झक मारकर उसे अपनी आँखें खोल देनी पड़ता।

एक रात को 'वह' रेडियो पर बोले। यह उन्हीं की आवाज थी। अमर ने उसे लहर ब्रस के ब्रिटिश प्रयत्नों के बावजूद अच्छी तरह पहचान और समझ लिया था। उन्होंने सर साहब के नाम संदेश ब्राडकास्ट करते हुए कहा था—

"पूज्य पिताजी।

"मैं आपका कनिष्ठ पुत्र मे० शमशेर आजाद हिंद-रेडियो में बोल रहा हूँ। मैं मातृभूमि के उद्धार के लिये आजाद हिंद फौज में शामिल हो गया हूँ, और सकुशल हूँ। स्वतंत्र हिंदोस्तान में मैं आपके और पूज्यनीया माताजी के चरणों के फिर दर्शन करूँगा। मुझे आशीर्वाद दीजिए कि मैं आपका नाम न लज्जित करूँ। आप सब लोगों को मेरी ओर से चरण-स्पर्श।

"जय हिंद।"

अमर ने रेडियो बंद कर दिया। इस संदेश ने उसके तन-मन में

बिजली भर दी। उसका विश्वास पूरा उतर गया था। वह उठी, और अम्माजी को आवाज देती हुई उनके कमरे की ओर दौड़े-दौड़े दौड़ी। उसकी सास कमरे से बाहर निकल रही थी। अमर करुण मुस्किराहट के साथ उससे लिपट गई, और दूसरे ही क्षण उसकी आँखें भीग उठी।

सास अमर के इस आकस्मिक कार्य से आश्चर्य-चकित हो रही थी। पूछा—"क्या है बहू! शमशेर बेटा की कोई चिट्ठी आई है?"

अमर कुछ न बोली। वह क्या जवाब दे, कोई चिट्ठी तो नहीं आई थी, परंतु चिट्ठी से भी बढ़कर उसे बेतार के तार के जरिए उसे अपने प्रियतम से वाणी सान्निध्य प्राप्त हो चुका था। परंतु उस सान्निध्य ने उसकी बुझी हुई प्यास जगा दी थी, उसके मिटे हुए दाग उकसा दिए थे, और उसकी मन-वीणा के टूटे हुए तार झनझना उठे थे। वह उस अभूतपूर्व आनंद की, उल्लास की नश्वर वाणी द्वारा अभिव्यक्ति नहीं कर सकती थी। उसकी आँखों ने आँसुओं की भाषा में उसे आनंद-उल्लास का अविकल करुण अनुवाद कर दिया। सास का आँचल भीग उठा था। सास का दिल अपनी बहू को एकाएक रोते देख धक् करके रह गया।

"रो क्यों रही है बहू?" सास ने आशंकित नेत्रों से प्रश्न किया।

अमर अब फूटकर रो पड़ी।

मन का वेग शांत होने पर उसने अपनी सास को सारी बातें बताईं। सास ने विश्वास दिलाया कि "बेटा! तू घबरा मत। आज मैं सचमुच बड़ी सौभाग्यशालिनी हूँ कि मेरा एक बेटा इस बंदिनी भारत माता के उद्धार का महाव्रत ले चुका है। यह महाव्रत जरूर होगा। मेरा आशीर्वाद ढाल-कवच बनकर सर्वत्र उसकी रक्षा ...। मेरा शमशेर एक दिन आजादी का झंडा लेकर स्वदेश

लौटेगा बेटा। जा, उस दिन के उसके अभिनंदन के लिये अभी से तैयारी कर।"

सास ने अमर का माथा चूम लिया। "देख, कहीं ऐसा न हो कि शमशेर आ जाय, और तू कोई तैयारी ही न कर पावे। भारत के दिन फिरनेवाले हैं ..आजादी के दीवानों के लिये दिल्ली दूर नहीं है।"

अमर विदेशिया की अनुकंपा को ही जीवन का पुण्य-फल माननेवाली सास के ये वचन सुनकर दंग रह गई। उसका खोया हुआ साहस, उत्साह फिर जाग उठा, उसकी सोई हुई देशभक्ति और आजादी की लगन फिर से उसके मन में उमंगें भरने लगी, और उसे ऐसा अनुभव होने लगा कि वह अपनी अब तक की अकर्मण्यता, अधीरता और पराजयवादिता पर शर्मिंदा हो गई है।

कुछ दिनों तक इस नव-प्रेरणा से उसके जीवन के रहने-सहने का ढंग बदला रहा, लेकिन फिर कई दिनों, कई सप्ताहों तक उसे उनका कोई संदेश नहीं मिला। फिर एकाकीपन ने उसके यौवनोल्लास, साहस और दृढ़ता को ढीला करना शुरू कर दिया। दिन-पर-दिन उसके मन का अंधकार बढ़ता गया, उसकी आत्मा निर्बल पड़ने लगी, और उसका स्वास्थ्य धीरे-धीरे जवाब देने लगा।

उसे अखबारों के जरिए यह पता चल चुका था कि जापानी इम्फाल की ओर बढे, और उनके साथ संभवत आज़ाद हिंद फौज भी बढ़ी, लेकिन भारत के दुर्भाग्य ने अभी उसका पल्ला नहीं छोड़ा था। उन्हे पीछे हटना पड़ा। और, आजाद हिंद फौज की पराजय के साथ-साथ उसका मन बैठने लगा था।

अमर बीमार पड़ गई।

× × ×

एक साल और बीत गया।

अमर अब दिन-रात चारपाई पर ही पड़ी रहती है। उसका

गुलाबी यौवन राग और विरह के ताप में जलकर पीला पड़ गया। उसका गठा हुआ शरीर केवल कंकाल-मात्र रह गया। औषध - दारू से कोई लाभ न होने से उस और उसके घरवालों का उसके जीने की कोई आशा नहीं रह गई थी। अमर के प्राण केवल इसीलिये अभी तक अटक रहे थे कि उसे अपने प्रियतम के दर्शनों की आशा थी। उसे फिर ऐसा कुछ विश्वास हो चला था कि वह मुझे जब तक न देख लेंगे, और मैं जब तक उन्हें न देख लूँगी, यमराज भी मेरे प्राण मेरी देह से नहीं अलग कर सकते।

परंतु उसे यह न पता था कि जापान की लड़ाई खत्म हो चुकी है। जिस तेजी से वह देश-पर-देशों को अपने पैरों के नीचे रौंदता हुआ आगे बढ़ा था, लगभग उसी वेग के साथ मित्रराष्ट्रों ने खदेड़कर जापानियों को उनके अपने ही देश में बंदी बना दिया था। आजाद हिंद फौज के सुप्रीम कमांडर हिज एक्सेलेंसी नेताजी सुभाषचंद्र बोस एप्रिल, ४५ में ही अपने बहादुर सेनानियों एवं साथियों से अंतिम विदाई लेकर रंगून छोड़ चुके थे। मे० ज० शाहनवाजखाँ, कर्नल प्रेमकुमार सहगल, कर्नल गुरुबख्शसिंह ढिल्लन तथा दूसरे आजाद हिंद फौज के कर्णधारों ने आत्मसमर्पण कर दिया था। मेजर शमशेर-सिंह इम्फाल - क्षेत्र के प्रथम मोर्चे पर ही अँगरेजों की कैद में पड़ चुके थे।

अखबारों को सेंशर की कतर-ब्योंत के बाद प्राप्त समाचारों के द्वारा देश को और उसके साथ दूसरे गुलाम देशों को इतना ही ज्ञात हो सका था कि जापान ने अमेरिका के आगे घुटने टेक दिए हैं, लेकिन अमर का विश्वास था कि धुरी राष्ट्र नहीं हारेंगे। आजाद हिंद फौज अँगरेज के सामने आत्मसमर्पण नहीं करेगी। उसके सास-[illegible]र और उसकी जेठानियाँ उसे जापान की हार की बात सुनाकर [illegible]के विश्वास को भंग करने का साहस नहीं कर सकती थीं। वह

यह कल्पना ही नहीं कर सकती थी कि धर्म का पक्ष कभी पराजित हो सकता है। महाभारतकार व्यास का कथन उसके सामने था—"यतो धर्मस्ततो जयः।"

परंतु अमर क्या जानती थी कि आज का बर्बर राक्षसी युद्ध 'धर्म-युद्ध' नहीं। अगर वह इतना समझती भी थी, तो वह समझकर भी जैसे इस तथ्य से अनजान ही रहना चाहती थी। वह बार-बार यह कल्पना करके कि 'वह' विजयी होकर लालकिले की ओर आ रहे होंगे और दिल्ली पहुँचकर वाइसराय-भवन पर तिरंगा फहराएँगे, कुछ अपनी दुर्बल आत्मा को धैर्य बँधाती। वह कभी-कभी अब से लगभग दो वर्ष पूर्व के जीवन पर भी अपनी विचार-धारा स्थिर करती और उसने जिस शौर्य, साहसिकता, प्रत्युत्पन्नमतित्व, नेतृत्व एवं स्थिरप्रज्ञता का परिचय दिया था, उसी की कल्पना में वह तन्मय हो जाती। तभी उसे अपनी सहेली निर्मला, रायसाहब, अपनी मा वसंत, नवधारा, नयनतारा, मोहनलाल और इनायतुल्ला आदि की याद आ जाती, और मन-ही-मन इन शहीदों को श्रद्धांजलि देती। उसे इस बात से ईर्ष्या होती कि देखो, मैं तो इतना भी न कर सकी। उसे इस आंदोलन के प्रेरक देशभक्तजी की भी याद आती। लेकिन उसे इनायत काका ने यह बतलाया था कि वह लाहौर-किले में नज़रबंद हैं। उसने चाहा कि मैं उनसे मिलूँ, लेकिन एक तो सरकार की अनुमति मिलना मुश्किल था, दूसरे ससुराल आकर अपने पति की अनुपस्थिति में उसका एक पर-पुरुष से जेल में मिलने जाना सामाजिक चर्चा का विषय बने बिना न रहता। वह मन मारकर, जी मसोसकर रह गई। फिर अब तो वह बीमार पड़ गई थी। उठना-बैठना ही उसके लिये दूभर था।

इधर देश की परिस्थिति बहुत कुछ बदल चुकी थी। जापानी आक्रमण का खतरा न रह जाने तथा असंतुष्ट भारत की माँग पूरी

करके उसे अपना मित्र बनाने के लिये चोटी के कांग्रेस-नेता छोड़े जा चुके थे, और धीरे-धीरे करके दलों में कांग्रेस-जन छूटने लगे थे। उसने सोचा, संभव है कि देशभक्तजी भी उन्हीं के साथ छूट जायँ, और तब कभी शीघ्र उनके दर्शन का मौका मिल सके।

युग बदल रहा था। समय आगे बढ़ा। परिस्थितियों ने चल-चित्र की भाँति अपना स्वरूप परिवर्तन प्रारंभ कर दिया। आजाद हिंद फ़ौज, जो एक दिन तिरंगे की छाया में एकत्र होकर मातृभूमि के उद्धार के लिये इम्फाल और कोहिमा तक लड़ने आ चुकी थी, अब तक दैवदुर्विपाक से अँगरेजों की क़ैद में रंगून से कलकत्ता और कलकत्ते से नीलगंज, झींकरगाछा, बहादुरगढ़, दिल्ली-छावनी, लाल-क़िला और मुलतान के नजरबंद शिविरों को भेजे जा चुके थे। शमशेर भी भारत लाया गया, और उसे दिल्ली के निकट स्थित बहादुरगढ़-शिविर में नजरबंद कर दिया गया था।

शमशेर को जापानी नजरबंद-शिविर का कटु अनुभव प्राप्त हो चुका था, परंतु उसे अपने देश में ही विदेशी सरकार के हाथों इतने कड़ुए अपमान, कष्ट और यन्त्रणा के घूँट पीने होंगे, इसका उसे कोई अनुमान न था। वह युद्धबंदी था—परंतु उसके और उसके हजारों साथियों के साथ जो बर्बर और घृणित सलूक रंगून से भारत लाए जाने के मार्ग में हुआ, और जो कुछ उसके साथ अब नजरबंद-शिविर में हो रहा था, वैसा सलूक, वैसा व्यवहार तो चोरों और लुटेरों, हत्या-व्यवसायियों और युद्धापराधियों के साथ भी कोई सभ्य देश नहीं कर सकता। परंतु इतना सब बलिदान और उत्सर्ग करने के बाद भी जब देश के भीतर और बाहर के सभी सशस्त्र और निरस्त्र प्रयत्न असफल हो चुके थे, तो गुलाम देश और उसके पुत्रों को ये दिन भी देखने ही थे।

शमशेर और उसके साथियों पर परस्पर 'जय हिंद' कहकर अभि-

वादन करने पर प्रतिबंध लगा दिए गए। उन्हें राष्ट्रीय गीत नहीं गाने दिया जाता। उन्हें सम्मिलित रूप से खाने-पीने और उठने-बैठने नहीं दिया जाता। जिस सांप्रदायिक एवं धार्मिक भेद-भाव को आजाद हिंद फौज के वीर और निःस्पृह सैनिकों ने खुशी-खुशी तिलांजलि दे दी थी, उसी भेद-भाव का विष-बीज अँगरेज संगीन-धारी पहरेदारों और शिविर-अधिकारियों द्वारा पुनः बोया जाने लगा—हिंदुओं, सिक्खों और मुसलमानों को अलग-अलग करके, अलग-अलग रसोई देकर और अलग-अलग व्यवहार करके।

परंतु आजादी के भूखे सैनिकों ने एक स्वर से प्रतिबंधों और भेद-नीति का विरोध किया। परंतु नक्कारखाने में तूती की आवाज कौन सुनता है? ऊपर से भारतीय पहरेदारों को आदेश हुआ कि बाड़े के लोगों को संगीनों से भोंक दो, परंतु उन्होंने इनकार कर दिया। एक ब्रिटिश मेजर और एक ब्रिटिश कर्नल बुलाए गए, उन्होंने भी संगीनें भोंकने से इनकार कर दिया। फिर एक गुरखा पलटन बुलाई गई, उसने भी स्पष्ट शब्दों में कह दिया—"हम अपने भाइयों पर संगीनें न उठाएँगे।"

दूसरे दिन प्रमुख-प्रमुख नेतृत्व करनेवाले सैनिक, जिनका नेता शमशेर था, एक खाली बाड़े में ले जाए गए, और वहाँ उनसे परेड कराई गई। फिर डबल मार्च का आदेश हुआ। थक चुकने पर गोरे पहरेदारों को आदेश हुआ कि वे संगीन लेकर इन भूखे, थके और निःशस्त्र नौजवानों पर भेड़ियों के समान टूट पड़ें। शमशेर को घेरकर चारों ओर से दूसरे साथी मौत से खेलने के लिये खड़े हो गए। गोरों ने बड़ी बेदर्दी और निर्मम बर्बरता के साथ संगीनें भोंकनी शुरू कर दीं। 'चलो दिल्ली' और 'जय हिंद' के नारों से सारा प्रदेश और उसके ऊपर का शून्य आसमान गूँज उठा। किसी एक ने भी आह न की। सभी घाव सामने के अंगों पर लगे।

शमशेर को अभी तक कोई चोट नहीं आई थी। रञ्जना ने जबरन् उसे पकड़कर तीन फ़ीट के अंतर पर खड़े दो पेड़ों में उसके हाथ-पैर बाँध दिए। शमशेर बेहोश हो गया।

× × ×

अजना को अपने प्रियतम पतिदेव से बिछुड़े तीन वर्ष से अधिक हो चुका था, और अब उनके द्वारा छोड़ा गया स्मृति-चिह्न, उनके कुल का एकमात्र दीपक राजकुमार, जिसे अजना प्यार से 'राजू' कहा करती थी, अब लगभग सवा दो वर्ष का हो चुका था। राजू पैरों से चलना सीख गया था, उसके दाँत निकल आए थे, और वह बड़े प्यारे ढग से 'अम्मा', 'बापू,' 'नानी', 'मामी', 'मामा', 'नाना' आदि कहना सीख चुका था।

अजना को पति-बिछोह का यह काल बिताने में कुछ भी नहीं मालूम पड़ा। जैसे वह एक नींद भरकर सोई हो, और सवेरा हो गया हो। वह बहुत-कुछ राजू की तोतली बोली, दौड़-धूप, तोड़-फोड़, मुस्किराहट और रुदन में ही भूली रहती। परतु युद्धात से देश की परिस्थितियों को बदलते देखकर उसे यह आशा हो चली थी कि 'वह' भी शीघ्र ही छूट जायँगे, और उनसे मिलने देने में तो सरकार को अब कोई बाधा ही नहीं डालनी चाहिए।

एक दिन उसे सहसा ही एक रजिस्टर्ड गुमनाम पत्र मिला। काँपते हाथों और धड़कते दिल से उसने लिफ़ाफ़ा खोला। पढते ही उसकी आँखें पथरा गईं, उसकी धमनियों का रक्त जलकर सूख गया, और उसके पैरों के नीचे से धरती खिसकने लगी। उसमें आज तीन साल बाद उसे यह सूचना दी गई थी कि "तुम्हारे पति को आज से लगभग तीन साल पूर्व ही फाँसी दे दी गई। खेद है, अब आप देवकुमारजी शर्मा से इस पृथ्वी पर न मिल सकेंगी।"

उफ्! तो फिर अजना का वह सपना सच निकला। वह अब

से बहुत पहले ही, शायद 'मा' होने के भी पहले विधवा हो चुकी थी। तो फिर सरकार ने ही उसका सुहाग-सिंदूर छीनकर उसे इतना पहले क्यों नहीं बता दिया था? क्या वह इतना जानकर विदेशी स्वामियों के प्यार में पलनेवाली भारत-सरकार का सुहाग छीन लेती? सन् ४२ के आंदोलन, ४३ के बंगाल-अकाल और ४४ के आज़ाद हिंद फ़ौज के स्वातंत्र्य-युद्ध में होनेवाली अनगिनत देश की विधवाएँ भी तो ऐसा न कर सकी थीं।

अंजना को सहसा ही इस बात पर विश्वास नहीं हुआ। उसकी आशा और उसके युग-युग से सँजोए गए स्वप्न इस प्रकार मिट्टी में मिल जायँगे—इसका उसे कोई अनुमान या कोई कल्पना न थी। परंतु सत्य और तथ्य अनुमान और कल्पना से कहीं अधिक स्पष्ट, कठोर और वास्तविक होते हैं। उसके आश्चर्य और आकस्मिक आघात उसके चिर-अभाव को, उसकी अनबुझ प्यास को, उसके न पूरे हो सकनेवाले सपने को समझकर एक गहरी वेदना, एक गहरी चोट और एक गहरी निराशा में परिणत हो गए। जिस सुहाग की रक्षा के लिये उसने अपने तन को भी नीलाम की बोली पर लगा दिया था, आज उसी को उससे किसी ने एक झटके में, एक आकस्मिक वेग के साथ उसके अनजान में ही इतनी बेदर्दी के साथ छीन लिया था! एक फूल था, जैसे कि जिसने रात को पवन के अंचल में वृंत के पालने में झूलकर सवेरे देखा कि वह कठोर, बदरंग और भीगी मिट्टी के ऊपर लोट रहा है।

तो उसके पति को, उसके सुहाग-बिंदु को, उसकी माथे की लाली को सचमुच फाँसी के क्रूर हाथों द्वारा मिटा दिया गया था। देवकुमार को भी फाँसी पर चढ़ने के पहले एक स्वप्न हुआ था, जिसमें उन्होंने देखा था कि अंजना उनसे मिलने आई है, और उसकी गोद में उनका कुलदीप सरल मुस्किराहट के साथ खिल रहा

है। फिर जैसे वह तस्वीर एक उच्छ्वास छोड़कर, दो आँसू टपकाकर पीछे हटी, और एकबारगी ही ओझल हो गई।

फाँसी पर जाने के पहले देवकुमार के अंतस्तल में एक मीठी-सी, भीनी-सी, झीनी सी याद थी—उस सपने की बस। और, उसकी आँखों में थी एक मूर्ति, दिव्य, भव्य और तेजपूर्ण—भारत माता की, मातृभूमि की कि जिसके लिये वह अपना तन, मन, यौवन, सब कुछ निछावर करने जा रहा था। स्मृति उनके पैर पीछे खींच रही थी, परंतु बलिदान और त्याग उन्हें तेजी से अपनी ओर बुला रहे थे। मरण का—नहीं, नहीं अमर उत्सर्ग का पुण्य पर्व नजदीक आ गया था, और शहीद देवकुमार को रक्त-स्नान करने का आमंत्रण मिल चुका था।

जब उनके लिये हवालात का दरवाजा बंद हो गया, और जब उनके कदम जेल की ओर उठे, तो आख़िरी वक़्त जानकर उनके गोरे प्रहरी ने हँसकर उनका अभिनंदन करते हुए पूछा—"क़ैदी, तुम उस अपने प्यारे गीत का अर्थ तो बताते जाओ।"

देवकुमार ने मुस्किराकर प्रहरी की भाषा में उत्तर दिया—"मेरे भाई! उस गीत का अर्थ इतना ही है कि भारत माँ! तुम मुझे आशीर्वाद दो कि मैं तेरे सम्मान और गौरव की रक्षा में इस नश्वर शरीर का विसर्जन कर दूँ। मुझे यह भी आशीर्वाद दो कि मैं तेरी प्यारी-प्यारी गोद में बार-बार खेलने आऊँ।"

गोरे ने क़ैदी के मुख पर मृत्यु के निकट होते हुए भी इतनी निर्भयता, तेज, साहस और मुस्किराहट देखकर दाँतों-तले उँगली दबा ली। लेकिन दूसरे ही क्षण उसका मन घृणा और क्रोध में भर उठा। देवकुमार आगे चल दिया, और गोरा मन-ही-मन भुनभुना रहा—"तुम कुत्तों की मौत मरने जा रहे हो। तुम्हारी देशभक्ति तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकता।"

देवकुमार चले गए---जेल से, इस पृथ्वी से और वह चले गए थे हमेशा के लिये।

अंजना के अंतरतम की घंटी बज उठी—उस अंधकार में प्रकाश की एक किरण झाँक उठी। उसे जैसे ऐसा लगा कि न वह अमृत-सर आती, और न कोई उनको उससे छीन सकता। जीते-जी जिस घर में रहने के लिये उन्होंने जोर दिया था, भले ही आज वह मरघट हो गया हो, लेकिन अब वहीं, उसी घर की ओर उसे जाना होगा। वहाँ यदि मैं न होऊँगी, तो उनका मन कैसे लगेगा। मैंने अपने ही घर को पराया घर समझा था। तभी तो वह मुझे मेरे इस अविचार का, गहन अपराध का इतना कठोर दंड देकर चले गए।..... लेकिन मैं उनके बिना अब कैसे जी सकूँगी. फिर भी, उनका यह स्मृति-चिह्न—यह राजू। ..उसकी तो रक्षा करनी ही होगी, और तब तक मैं उनकी अमर समाधि पर बिछुड़ी हुई मारमी की तरह आँसुओं के दीप जलाया करूँगी।

अंजना को उसके मा-बाप ने, भाई-भाभी ने, पड़ोसियों ने बहुतेरा समझाया, परंतु वह न मानी, उसके घर से बाहर निकले हुए पैर न रुके, न वे पीछे की ओर मुड़े। वह बढ़ी, बढ़ती ही गई और उसकी गोद में था राजू, नन्हा-सा, गाल-मटोल, गोरा और आकर्षक, परंतु मा की उदास आँखों को देखकर गंभीर और उदास। जैसे वह अभी से उम्र की अपेक्षा भी बड़ी अपनी बुद्धि के कारण सब कुछ जीवन के आरोह-अवरोह भी समझने लगा हो।

अंजना जा रही थी उस घर की ओर, जो अब से तीन साल पूर्व प्रतीक बन चुका था।

× ×

 उसी रोज अमर ने अपनी साँस तोड़ दी। की पराजय ने उसके प्राण घोट

दिए थे। शमशेर को अब तक मालूम हो चुका था कि उसकी अमर बीमार है, और हालत चिंताजनक है, परंतु उसे स्वयं अपने बारे में ही यह न मालूम था कि वह कब छूटेगा। छूटेगा भी या नहीं। मगर आज़ाद हिंद फ़ौज के तीन-चार मुकदमे हो चुके थे, कुछ अपराधी पाए जाकर दंडित हो चुके थे, और कुछ बिलकुल ही मुक्त भी किए जा चुके थे। अब क्रम-क्रम से सैनिक और छोटे-बड़े सभी अफ़सर छोड़े जा रहे थे। सरकार ने अब अपना निश्चय बदल दिया था, और जन-रोष और देश के उग्रतम विरोध को देखते हुए आगे के लिये सभी मुक़दमे उठा लिए गए थे। शमशेर को इतनी ही आशा थी कि एक दिन मैं भी छूटूँगा।

वह भी छूटा। उसके शरीर पर अभी तक कई पट्टियाँ बँधी हुई थीं, जो विदेशियों के अत्याचार और बर्बर व्यवहार की परिचायक थीं। वह छूटा, और चल दिया उसी क्षण लाहौर।

घर पहुँचा, और घर से श्मशान, जहाँ अमर का अभी शव-दाह हो रहा था।

मरघट में पहुँचकर भी उसे अमर न मिली—उसे मिले, तो बस उस शहीद अमर विरहिणी की कनक देह लता के मुट्ठी-भर फूल।

नर

न भुनभुना

, तुम्हारी देशभक्ति

कुछ पढ़ने योग्य उपन्यास

अरक्षिता

[लेखक, श्रीदेवीप्रसाद भवन 'विकल']

हिंदू समाज में पति की रक्षा से बाहर होने पर एक सती-साध्वी नारी का कोई भी स्थान नहीं रह जाता और पूरा समाज उसके हर सहयोग और कार्य को संदेह की दृष्टि से देखता है। प्रस्तुत उपन्यास में कुशल कलाकार ने ऐसी ही एक नारी का जीवन-दृश्य खींचा है, जो अपने पति से अलग होकर अंत तक अपने सतीत्व की रक्षा करती है, और पग-पग पर एक आदर्श का नमूना समाज के सामने रखती है, पर समाज किसी भी अवस्था में उसका स्वागत नहीं करता। अंत में इस थोथे संसार से ऊबकर वह आत्महत्या कर लेती है, पर स्वागत के लिये हाथ फैलाए पति के पास—अपने को पतित और अयोग्य समझने के कारण—जाने से इनकार कर देती है।

हमारा विचार है कि हिंदी में इस दृष्टिकोण को लेकर एक भी उपन्यास अभी तक नहीं लिखा गया है, और भवनजी ने इसमें अतीव सफलता प्राप्त की है। पुस्तक एक बार शुरू करने पर बिना अंत तक पढ़े छोड़ी नहीं जा सकती। सजिल्द पुस्तक का मूल्य केवल २।।)

प्रतिशोध

[लेखक, श्रीजगदीशचद्र जोशी]

यह जासूसी उपन्यास रोमाचकारी, रहस्यमयी घटनाओ से परिपूर्ण है। भाषा एवं शैली ऐसी सुदर है कि प्रत्येक घटना चल-चित्र के चित्रों का आनद देती है। मूल्य २ ॥)

प्रतिमा

[लेखक, श्रीप० गोविंदवल्लभ पत]

नाटककार के रूप मे पतजी का नाम कितना प्रसिद्ध हुआ है, यह आप सभी हिंदी-प्रेमियों पर प्रकट है। पतजी की लेखन शैली ने हिंदी ससार मे धाक सी जमा ली है। उन्हीं की शुभ लेखनी का यह एक ज्वलत उदाहरण, उपन्यास के रूप मे, पाठकों के सामने उपस्थित है। पतजी कुशल कलाकार हैं। आपकी लेखनी ने इस उपन्यास को बहुत सुदर बनाया है—सभी अगों से मनोहर, शिक्षा से परिपूर्ण। पाठक पढकर ही इसका असली आनद प्राप्त कर सकेंगे। १० रेखा-चित्रों सहित। मूल्य २॥)

सेब का वृक्ष

[मूल-लेखक, गाल्सवर्दी, अनु०, आनदाप्रसाद मिश्र 'निर्द्वंद्व']

प्रस्तुत उपन्यास मे अशरटस और मैगन, दो प्रेमियों का ... होना, फिर परस्पर प्रेम सबध बढना, पुन स्टीला से

मिलन और प्रेम-संबंध होना, अशरटस का मैगन को भूल जाना तथा मैगन का आत्मघात आदि घटनाएं इस सुंदरता से लिखी गई हैं कि पुस्तक पढ़ने मे चल-चित्र का आनंद आता है।

इस पुस्तक मे पाश्चात्त्य सभ्यता की, जिस पर कि आजकल भारतीय नवयुवक लट्टू हैं, भली-भाँति आलोचना की गई है। पुस्तक एक बार हाथ में लेने पर समाप्त किए विना छोड़ने की इच्छा ही न होगी। सुंदर आवरण से सुसज्जित। मूल्य २।)

आशा-निराशा

[लेखक, श्रीसत्येंद्र शरत्]

इसका कथानक बहुत सुंदर है, चरित्र चित्रण भी खूबी के साथ किया गया है। भाषा मे प्रवाह है। उपन्यास हाथ मे लेने पर विना समाप्त किए जी नहीं मानता। मूल्य सजिल्द पुस्तक का ?)

कोहनूर कंपनी में डाका

[लेखक, श्रीप्रह्लादनारायण भार्गव बी० ए०]

लेखक जासूसी उपन्यास लिखने मे सिद्धहस्त हैं। आपकी इस उपन्यास की घटनाएँ इतनी मनोरंजक हैं कि पुस्तक हाथ मे लेने पर खत्म किए विना छोड़ने को जी नहीं चाहता। भाषा-भाव अत्यंत सरल है। चरित्र-चित्रण जिस सुंदरता से किया

गया है, उसे देखकर आप मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकेंगे। हिंदी-साहित्य में अच्छे जासूसी उपन्यासों की भारी कमी है, जो हैं, अनुवाद ही हैं। इसी पूर्ति के निमित्त हम यदा-कदा जासूसी उपन्यास अपने हिंदी-प्रेमी पाठकों को देते रहने का प्रयत्न कर रहे हैं। मूल्य २॥)

अमृतकन्या

[लेखक, श्रीअज्ञात एम्० ए०]

१५ अगस्त, १९४७ के ६ महीने पूर्व के उस समूचे राजनीतिक वातावरण को, जो साम्प्रदायिक विभीषिकाओं, रोमांचकारी बर्बरताओं और सामूहिक नर-संहार के नग्न ताण्डव की प्रतिकूल विद्युत् धाराओं से प्रदीप्त हो उठा था, मर्मस्पर्शी कथा-सूत्र में बाँधकर इस उपन्यास द्वारा भारतीय स्वातंत्र्य के इतिहास में एक ऐसा अध्याय जोड़ने का प्रयास किया है, जिसे हम आज भूलने-से लगे हैं। भाषा सरस और ओज पूर्ण है। मूल्य ५)